नीर-क्षीर

लतीफ घोंघी

अपनी ओर से

इस हास्य व्यंग्य संग्रह मे मेरी पचास छोटी हास्य व्यंग्य रचनाएँ हैं जो मैंने रायपुर से प्रकाशित होने वाले अखबार अमृत सन्देश के दैनिक हास्य-व्यंग्य कॉलम 'नीर-क्षीर' के लिए लिखी हैं।

अखबार के व्यंग्य कालम के लिए रखी गई हास्य व्यंग्य रचनाओं का मूल आधार समसामयिक स्थितियाँ ही होती हैं इसलिए अमूमन अखबार के व्यंग्य कालम की रचनाओं के साथ यह आरोप जुड़ा होता है कि इन रचनाओं की अर्थवत्ता बदलते हुए स्थिति सन्दर्भों के साथ ही समाप्त हो जाती है। मैंने इस कालम के लिए लिखी गई संग्रह की इन रचनाओं को लिखते समय इस बात की ओर ध्यान दिया है कि ये रचनाएँ केवल समसामयिक सन्दर्भों पर ही व्यंग्य की टिप्पणियाँ न होकर जीवन के मानवीय मूल्यों और समाज में व्याप्त विसंगतियों पर हों ताकि रचनाओं की जीवतता अधिक लम्बे समय तक बनी रहे। मैंने यह भी कोशिश की है कि ये रचनाएँ केवल व्यक्तिपरक न होकर प्रवृत्तिपरक हों।

अखबार के लिए लिखी जाने वाली रचनाओं में अखबारी पाठकों की रुचि का ध्यान रखते हुए मैंने यह भी महसूस किया है कि पत्रिकाओं की अपेक्षा अखबारों में छपने वाले व्यंग्यों में अधिक तेज और सीधे प्रहार की माँग होती है। इन रचनाओं में प्रतीकों और संकेतों में व्यंग्य प्रहार करने वाली रचना अपेक्षाकृत कम सफल होती है। अनावश्यक विस्तार रचना को अखबारी पाठक के लिए बोझिल बना देता है इसलिए व्यंग्य की मार को सीधे उठाना पड़ता है। साथ ही, अखबारों में स्पेस की

समस्या भी प्रमुख होती है इसलिए बहुत कम जगह म अपनी बात पैदा कह लेना निस्सदेह कठिन काय है। फिर भी, मैंने अपनी तरफ से पूरी काशिश की है कि अखबार म प्रकाशित हुई मेरी य हास्य-व्यग्य रचनाएँ पाठको के अन्दर एक हलचल पैदा करें, भ्रष्टाचार, दुराचार, अनाचार, मिथ्याडबर, स्वार्थपरक मानसिकता, मुखौटेबाजी, व्यक्ति की कथनी और करनी के अतर आदि के विरुद्ध एक स्वस्थ मानसिकता को जन्म दें, यदि आने वाले भविष्य के लिए एक सोच का स्फुरण भी इन रचनाओ से आपके अन्दर पैदा हो, तो मैं समझूगा कि इन रचनाओ के लिए किया गया मेरा श्रम सफल हुआ।

अपने पाठको के सुझाव और उनका मत ही मेरे लिए निर्णायक होगा। इसी विश्वास के साथ अपने पाठको को मैं यह सग्रह सौंपता हूँ।

15 मार्च 88 —लतीफ़ घोंघी

क्रम

सच के उद्घाटन पर

पिछले दिनों हमारे यहाँ एक कपडे की दुकान का उदघाटन हुआ। दुकानदार हमारे पास आए और बोले—उद्घाटन आपके कर कमलो से करवाने का विचार है। आशा है आप निराश नही करेंगे।

हमने सोचा कि हम जैसे नगे लोग जिस दिन कपडे की दुकान का उद्घाटन करेंगे तो देश कहाँ जाएगा? हम तो यही जानते हैं कि आज इस पद पावर के कारण इज्जत मिल रही है। हम तो नगे थे, नगे हैं और नगे रहेंगे। यह तो इस देश की महानता है कि हमे इज्जत मिल रही है। जिस तरह विदेशो मे लोग सच्ची बातें सार्वजनिक रूप से स्वीकार कर लेते हैं उसी तरह हमारी इच्छा हुई कि दुकानदार से कहे—देखो भाई साहब, हम नगो से कोई उद्घाटन मत करवाओ। जिसका उद्घाटन हम करेंगे, वह भी नगा हो जाएगा।

लेकिन हम यह सोचकर चुप रह गए कि अपने देश मे अभी राजनीति करने वालो की इज्जत इसीलिए बची है कि 'कनफेसन' यहाँ नही है।

हमने कहा—उद्घाटन तो आप किसी मत्री से करवा लेते तो अच्छा था। मैं तो बहुत छोटा आदमी हूँ। और आप तो जानते ही हैं कि भले ही आप उद्घाटन मुझसे करवा लें लेकिन सौ रुपये का कपडा मुझे उधार देने के पहले आप सौ बार सोचेंगे। क्यो?

सज्जन जरा झेंप गए। बोले—भाईजी, आप भी कैसी बात करते हैं। क्या हम आपको नही जानते? हमारी जान हाजिर है आपके लिए और आप हैं कि कपडे की बात कर रहे हैं। लगे तो पूरी दुकान ले जाइए।

आपको मना करेंगे तो क्या हम इस शहर मे रह पाएँगे ?

आपको सच बताता हूँ कि ये जो सेठ है ना, एकदम मौकापरस्त है। जब मैं चुनाव मे खडा हुआ था तो वह मेरे विरोधी को सपोट कर रहा था। आज मैं जीत गया तो मुझसे उद्घाटन करवाने आया है। हम नगो को सिखाने आया है कि कपडा कसे पहनते हैं ? अरे वाह रे सेठ ! सोचता होगा हम उद्घाटन करने के लिए मरे जा रहे है।

लेकिन मैंने उससे ऐसा कुछ नही कहा। जब अपने देश मे सच बोलने के लिए कडे कानून लागू कर दिए जाएगे तब मैं उससे यह बात कहूँगा। जब ऐसा कोई कानून ही नही है तो सच बोल कर क्या अपनी फजीहत करवाएँ।

मैंने कहा—अच्छा सेठ उदघाटन करने तो आ जाऊँगा लेकिन तुम्हें किसी दूसरे को अध्यक्ष बनाना होगा। मैं अकेला नही आऊँगा।

आप सोच रहे होगे मैंने ऐसा क्यो कहा। दरअसल मैं अपने चाहने वालो की लाबी बना रहा हूँ। किसी बडे आदमी को अपन साथ फिट कर लूगा तो मौके पर मेरा साथ देगा। सच कहता हूँ मैं देश सवा या जन सेवा की भावना से राजनीति मे नही आया हूँ। आप फिर सोच रहे होगे कि आज भैयाजी को क्या हो गया कि जो भी बात करते हैं बिलकुल कनफेसन के मूड मे कर रहे हैं। बात ऐसी है कि पिछले कइ सालो स झूठ बोलकर मैं कुठित हो गया हूँ। अब सोचता हू कि कुछ साल सच बोलकर भी देख। लेकिन हिम्मत नही हो रही है। सच बोलना बहुत मुश्किल काम होता है।

मैंन उदघाटन का आमत्रण स्वीकार कर लिया। सठ ने मुझे धन्यवाद दिया। फिर धीरे से कान मे पूछा—अध्यक्षता के लिए किसे बुला लूँ ?

मैंने भी लगभग उसी स्टाइल से एक नाम बता दिया।

मैंन दुकान का उदघाटन किया। बहुत लाग आए थे। बडे अफसर, सरकारी नौकर, अफसरा की चहकती बीवियाँ। मने फीता काटा। लोगो न तालियाँ बजाइ। तो इस दश मे कपडे की एक और दुकान खुल गई। अब कोइ नगा नही रहगा। लेकिन जो नगे रहन के लिए ही इस दश म पैदा हुए हैं उनके लिए कपडा क्या और दुकान क्या !

शुभकामनाएँ देते हुए मैंने कहा—दोस्तो, यह प्रसन्नता की बात है कि आज नगर मे एक कपडे की दुकान खुल गई। स्वतन्त्रता के बाद हमने कपडो के मामले में बहुत प्रगति की है। सच कहा जाए तो आजादी के बाद ही हमे कपडे पहनने की तमीज आई है। आज विदेशो मे हमारे कपडा की धूम है। मैं इस विश्वास के साथ इस दुकान का उद्घाटन कर रहा हूँ कि अब जनता को अच्छी से अच्छी और ऊँची से ऊँची वेरायटी का कपडा यही मिलने लगेगा। सेठजी बहुत परिश्रमी हैं। उन्होंने श्रम का महत्त्व समझा है। कधा पर कपडे का गट्ठा लेकर उन्होंने यह व्यवसाय प्रारभ किया था और आज वे इस विशाल दुकान के मालिक हैं। मैं कामना करता हूँ कि उनकी दुकान खूब चले ताकि देश कपडे के मामले में आत्मनिर्भर बने।

तालिया बजी। मैं झूठ बोल रहा था इसलिए तालियाँ बज रही थी। पिछले कई सालो से देश मे ऐसा ही हो रहा है। हम मच से झूठ बोलते हैं और लोग तालियाँ बजाते हैं। फिर स्वल्पाहार हुआ। लोगो ने कीमती कपडे खरीदे। गल्ला नोटो से भर गया।

सेठजी ने मुझे कहा—भैयाजी, आपके लायक तो

मैंने बीच मे ही कहा—सेठजी हम नेता तो बस खादी पर ही जीवित हैं। जिस दिन हम लोग पाँच सौ रुपये मीटर का कपडा पहनने लगेंगे, तब बापू की आत्मा हम धिक्कारेगी कि हम उनके सिद्धातो पर नही चल सके।

सेठ ने मेरे कलफ लगे झक सफेद खादी के कपडा की ओर देखा फिर मुस्कुराने लगा। मुझे लगा जैसे इस उद्घाटन अवसर पर उसकी भी इच्छा हो रही थी कि वह भी एक बार सच बोल दे।

लेकिन ऐसा कुछ नही हुआ। सच बोलन के लिए बहुत बडा कलेजा चाहिए। सच बोलकर भूखा मरने से अच्छा है चुप रहा जाए। वह भी सच बोलने लगा तो हम जसे नगे लोग देश का विकास कैसे करेंगे?

नेताजी का कुरता

पहली बार जिस दिन नेताजी राजनीति मे घुसे, उन्होंने खादी का कुरता और पाजामा सिलवा लिया। जिस तरह सागर दक्षिण से पश्चिम तक फैला है, ठीक उसी तरह उनका कुरता घुटनों के नीचे दूर तक फैला था। कुरते की जेबें ही खा गई थी। सामने की जेब खाली रखने का फैशन राजनीति मे चल रहा था सो नेताजी भी खाली जेब लेकर ही पार्टी में आए थे। पाजामा मामूली घेर का था। बैठने में तो कष्ट नही देता था लेकिन शंका-समाधान की बेला में तकलीफ देता था। नेताजी ने यही सोच कर संतोष कर लिया कि सक्रिय राजनीति मे आए हैं तो कुछ तकलीफ सहनी ही पड़ेगी।

नेताजी को टोपी लगाने का शौक बचपन से ही था। कभी-कभी आदरवश लोग उन्हें टोपी मास्टर भी कह देते थे। टोपियाँ इधर उधर करने मे वे माहिर थे। कई रंग बदले। काला, लाल, पीला। बीच में तो गोल टोपी भी मारने लगे थे। फिर राजनीति के मूल्य उठे और नंगे सिर रहना अच्छा माना जाने लगा। नेताजी ने टोपी निकाल कर ताक पर रख दी। ये बात गुप्त थी कि जब भी वे बाहर निकलते एहतियात के तौर पर कुरते की जेब मे एक अदद कलफ लगी हुई नोकदार टोपी रख लेते थे जो उन्हें मौका-ए-वारदात पर काम देती थी।

इस कमबख्त खादी से शुरू-शुरू में उन्हें तकलीफ हुई लेकिन अब तो उनके राजनीतिक बदन पर यह कुरता बैठ गया था। जब मैंने उन्हें पहली बार देखा था, तो मुझे लगा था कि नेताजी सीधे खादी ग्रामोद्योग के

चरखे से निकल कर आ रहे हैं। सिर से लेकर पैर तक वे खादी से लदे फदे थे। नये-नये नेता बने थे तो उनके भी मन में डर था कि कहीं कोई कह न दे कि नेता होकर खादी से परहेज करते हैं। इसीलिए वे बनियान से लेकर अडरवीयर तक खादी का पहनते थे। बाद में पार्टी के वरिष्ठ लोगो ने कहा—अदर खादी पहनने की जरूरत नही है।

नेताजी चौक पर अपना कुरता हिलाते दिख गए। मुझे देखकर बोले—चलो कही चलकर बैठते हैं।

कही से उनका मतलब ऐसी जगह से था जहाँ बैठकर देश के बारे मे कुछ बातें की जा सकें। मैंने कहा—नेताजी, चलिए इसी बहाने आपका इण्टरव्यू ले लेते हैं।

नेताजी के चेहरे पर मुस्कान आ गई। बोले—कई दिनो से मैं भी इण्टरव्यू देने के लिए कुलबुला रहा हूँ। देश मे बहुत कुछ हो रहा है बात करने लायक। चलो, कुटिया पर चलते हैं।

नेताजी जिसे कुटिया कहते थे, वह एक कोठी थी। शहर से दूर। तमाम कुत्ते भी यदि लाउडस्पीकर पर भौंकें तो आवाज उनकी कोठी तक नही पहुँच सकती थी। दूर दृष्टि का इस्तेमाल करके नेताजी ने यह कोठी अपने लिए बनवाई थी ताकि कोई उनके पक्के इरादे को डिस्टर्ब न कर सके।

नेताजी ने मुझे स्कूटर पर पीछे बिठाया और बोले—क्या लोगे?

मैंने कहा—नेता होकर आप मुझसे पूछ रहे है?

नेताजी कुछ नही बोले। उन्होंने स्कूटर गियर म डाला और क्लच छोडकर आगे बढ गए। राजनीति मे जब पहली बार आए थे तो उन्हें क्लच छोडने की भी तमीज नहीं थी। इसलिए प्रारंभिक अवधि मे उनकी गाडी झटका दकर बद हो जाती। अब तो एक्सपर्ट हो गए हैं। हाफ-क्लच मे गाडी चलाने लगे हैं अपनी।

वसे तो नेताजी के पास कार है लेकिन वे स्कूटर पर घूमना ही पसद करते हैं। इससे एक लाभ यह होता है कि जिसे चाहे, पीछे चिपका लो। राजनीति का यही सिद्धात है कि जब तक कोई पीछे नही बैठता, सामने वाले की प्रतिष्ठा नही बढ़ती।

बैठक मे आने के बाद नेताजी ने कुरता उतार दिया। कुरते के नीचे खादी का सलूखा था जिसकी जेब कमर स तीस अश का न्यून कोण बनाती हुई छाती तक पहुँच गई थी। नेताजी ने सलूखे की जेब से सिगरेट निकाल कर विदेशी गैस लाइटर से जलाई और बोले—अब कहाँ ?

—आपने कुरता इतना लबा क्यो सिलवाया ?

—तुम नही समझोग। कुरते और याजना की लबाई से राजनीति म स्टॅडिग बनती है। कुरता बडा होगा तो जेब भी बडी होगी और जेब बडी होगी तो नेता का भाव भी बढेगा।

—आपने कुरते के भौतिक पक्ष पर बात की। मैं चाहता हूँ कि लबाई का दशन भी समझाइए।

—लबी वस्तु स फायदा यह है कि छोटी होन पर भी उसकी साथकता बनी रहती है। नीचे से फटने लगे तो काट कर छोटा कर लो।

—और जब छोटा भी फट जाए तब ?

—तब चड्डिया सिलवा लो। राजनीति म कोई चीज बकार नही जाती।

—आपन जब पहली बार खादी का कुरता पहना तो आपन क्या महसूस किया ?

—मैंने महसूस किया कि मुझ पर एक नयी जिम्मेदारी का बोझ आ गया है।

—किस तरह की जिम्मेदारी ?

—खादी की जिम्मदारी। मैं साचता रहा कि यह बिना फटे अधिक दिना तक कैसे चल सकती है ?

—अब एक व्यक्तिगत सवाल। आप कुरते के नीचे सलूखा क्या पहनते हैं ? राजनीति म इसका प्रयोजन ?

—सिगरेट छिपाने के लिए। मुफ्तखोरो से बचना राजनीति मे एक चुनौती भरा काम है।

—कुरता पहनने के बाद आपके सामने इसके अतिरिक्त और कौन-सी चुनौती थी ?

—सगठन की। पार्टी के सदस्य शाम को गलत जगह पर जमा हो

जाते थे। उन्हें सही जगह पर संगठित करना जरूरी था।

—आपको लंबा कुरता सिलवाने की प्रेरणा किससे मिली ?

—वल्लभ भाई से। तुमने वल्लभ भाई को देखा ही होगा ?

—जी नहीं। उस समय मैं पैदा नहीं हुआ था।

—और पूछो क्या पूछना है।

—कुछ नहीं।

—अरे देश के बारे में भी कुछ पूछो यार। घंटे भर से कुरता कुरता लगा रखा है। हम देश के लिए मरे जा रहे हैं और तुम कुरते से आगे बढ़ ही नहीं रहे हो।

मैंने देखा कि नेताजी होंठ पर आ गए थे।

मैंने कहा—मुझे तो आपका लंबा कुरता ही पूरा देश लगता है।

वे बोले—यार, अजीब बोड़म आदमी हो। घंटे भर से माथा खराब कर रहे हो। भाड़ में गया कुरता। बोलो क्या लोगे ?

मैंने दीवार पर टँगे नेताजी के लंबे कुरते की ओर देखा। पसीने की गंध का एक झोंका उनके कुरते से होता हुआ गुजर गया। प्रगति, विकास, एकता, अखंडता, भ्रष्टीकरण, संकल्प आदि की मिलीजुली गंध से कमरा भर गया था।

वे राजनीति के कीडे है

कीडा बनने की प्रथा हमारे यहाँ बहुत दिनो से चली आ रही है। जिसने एक बार मकान बनवा लिया, वह मकान बनाने के मामले मे कीडा हो गया। जो एक बार किसी फौजदारी मामले मे अदालत चला गया समझो कि वह अदालत के दाँव-पेच मे कीडा हो गया। लगभग हर क्षेत्र मे आपको कीडे मिलेंगे। कीडा होना गौरव की बात होती है अपने यहाँ।

जी हाँ, वे राजनीति के कीडे हैं। परसनाल्टी बिलकुल कीडे जैसी, स्वभाव बिलकुल कीडे जैसा। जिस बात पर बैठे, उसे कुतर कर ही रहगे। फिर अपने यहाँ राजनीति मे बातें भी बडी टेस्टफुल होती हैं। उन्हें चस्का लग गया था राजनीति का पिछले कई सालो से। वे राजनीति का कीडा होन का गौरव इस नगर मे हासिल कर रहे थे। हुआ यह था कि एक बार वे निर्दलीय प्रत्याशी के रूप म विधानसभा चुनाव मे खडे होकर हार गए। उसी दिन से वे अपने आपको राजनीति का कीडा मानने लगे थे।

वैसे राजनीति के कीडो की वेरायटी होती है। कुछ कीडे मौन टाइप के होते हैं जो भाषण के नाम से भागते है। कुछ कीडो को केवल भाषण देने की बीमारी होती है। आप उन्हें मच पर खडा कर दीजिए और तत्काल यह कह दीजिए कि आपको काग्रेस के समर्थन मे बोलना है। वे इतना बोल जाएगे कि आपको भी विश्वास करना पड जाएगा कि सचमुच वे राजनीति के कीडे हैं। उन्हें आप भाजपा के मच पर खडा कर दीजिए

। पार्टी के मच पर खडा कर दीजिए, असतुष्टो के साथ खडा कर

दीजिए, चौक पर खड़ा कर दीजिए, पान ठेले पर खड़ा कर दीजिए—वे सिद्ध कर देंगे कि वे केवल कीड़े हैं।

इस बार जिन कीड़ों का मैं जिक्र कर रहा हूँ, वे स्पेशल वेरायटी वाले कीड़े हैं। उनका कीड़ात्व तभी जागृत होता है जब देश में कोई बहुत बड़ी घटना होती है। जहाँ तक मुझे याद आ रहा है, फेयरफेक्स और बोफोर्स के दिनों में उनका कीड़ापन इतना जागृत हो गया था कि उन्होंने नगर का एक-एक आदमी छाँट कर कुतरा था। उनके सौभाग्य से फिर राष्ट्रपति चुनाव आ गए। बस उसी दिन से उनकी कीड़ागति इतनी तेज हो गई है कि कंट्रोल में नहीं आ रही है। कुछ कंट्रोल में आने को होती है कि कोई न कोई इस्तीफा दे देता है। अब आप ही बताइए, वे कीड़े नहीं रहेंगे तो क्या करेंगे।

जिस दिन विद्याचरण, आरिफ मोहम्मद और अरुण नेहरू को राजीवजी ने हटाया, उसी दिन वे हमारे पास आए। बोले—आपको एक राज की बात बताता हूँ। मेरा तजुर्बा कहता है कि यह मिलीभगत है।

—कैसे ?

—यह तो आपस में पहले से तय था। राजीवजी ने पहले इन लोगों को कह दिया था कि आप लोगों को हटाऊँगा लेकिन आप चिंता बिल्कुल मत करना।

—ऐसा क्यों कहा था राजीवजी ने ?

—तो इतना नहीं समझे, भई राजीवजी को पता लगाना है कि उनके विरोध में कितने लोग हैं जो असंतुष्ट हैं। जैसे ही ये लोग अलग होंगे, सभी असंतुष्ट इनके साथ हो जायेंगे। देखना तीन दिनों में वे उन्हें फिर से अपने साथ शामिल कर लेंगे।

अब पूरे शहर में हवा फैल गई। वे हर जगह जाते और अपने राज-नीतिक ज्ञान का परिचय देते।

तीन दिन बीत गए तब मैंने उन्हें घेरा। इधर विद्याचरण की लड़ाई खुल कर सामने आ गई थी। मुझे तो विघटन के आसार नजर आ रहे थे। इसी बीच अमिताभ बच्चन के खिलाफ जाँच के आदेश भी हो गए और अमिताभ ने लोकसभा की सदस्यता से इस्तीफा दे दिया।

वे बोले—देखा हुआ कि नही ?

मैंने कहा—क्या हुआ ? आपने तो कुछ और कहा था हो कुछ और रहा है।

वे बोले—हम इतने साल से राजनीति कर रहे हैं। ये वी० पी० सिंह से समझौता करने के लिए किया गया है। देखना अब धीरे से राजा साहब इधर आ जाएंगे और हाथ मिला लेंगे। उन्होंने हाथ मिलाया और तीना फिर वापस।

मैंने सोचा कि यह कीडा बडे विचित्र किस्म का है। किधर की बात किधर जोडता है।

मैंने कहा—आप कैसे सोच सकते हैं कि ऐसा हुआ होगा ? वी० पी० सिंह की जो इमेज आज बनी है, वह तो खत्म हो जाएगी और मेरा ख्याल है कि राजा साहब अब ऐसा नही करेंगे।

वे बोले—हम इतने दिनो से राजनीति मे भाड नही झोक रहे है। हम तो उसी दिन समझ गए थे कि जब वी० पी० सिंह साहब ने अमिताभ के स्विटजरलंड मे खरीदे गए फ्लट के लिए विदेशी मुद्रा प्राप्त करने का सवाल उठाया था। हम तत्काल समझ गए कि अब अमिताभ की राजीवजी से नही पट रही है और सब काम मिलीभगत से हो रहा है। देखा आपने, दे दिया न उससे इस्तीफा ? अब बोलो, हम राइट हुए कि नही ? देखना हम कहते हैं कि तीन दिन के अंदर सब शांत हो जाएगा।

मैंने सोचा, अजीब कीडा है यह। बडे आय बाय शॉय किस्म के केलकुलेशन हैं इसके।

तीन दिन बाद जब राजा साहब को भी निकाल दिया तो मैंने उनसे कहा—अब आप क्या कहते हैं ?

वे बोले—हमारी आदत बार बार बयान बदलने की नही है। हमने एक बार कह दिया कि यह मिलीभगत है और हमने जो कहा है बिलकुल ठीक कहा है। तुमको मानना है तो मानो और नहीं मानना है तो मत मानो। तुम्हारे जैसे नागरिक ही राजनीति मे अस्थिरता पैदा करते हैं।

—अस्थिरता कैसी ?

—अस्थिरता नही तो क्या अरे भाइजी, राजनीति हँसी खेल नही

है। कभी चुनाव लड़ा है तुमने ? कहाँ से लड़ा होगा, राजनीति का तो समझता नहीं। हमने तो अपनी उमर खपा दी इसी राजनीति म। सबको जानते हैं। जब इतना भी नहीं समझ रहे हो कि व्ही० पी० सिंह को निकालने के पीछे क्या राजनीति है तो यह तुम्हारी अस्थिरता है कि नहीं ? बोलो ?

—इसमें अस्थिरता कहाँ से आ गई ?

—हम बताते हैं, सुनो। एक बात पर तो स्थिर नहीं रहते और हमसे पूछते हो अस्थिरता कहाँ से आ गई। तुम जैसे लोगो के पीछे माथा खराब करना बेकार है। अब हमारी बात भी कान खोलकर सुन लो—अभी और भी कुछ लोग निकाले जाएँगे, देखना तीन दिन म

इसम पहले कि वे कुछ कहते मैं वहाँ से चला आया।

चौक पर पान खाने के लिए खड़ा हुआ तो देखा कि वे इसी तरफ आ रहे हैं। उनके चेहरे पर गर्व की मुस्कान थी। वे अपने आप को राजनीति का कीड़ा महसूस कर रहे थे। हमारे मानने या नहीं मानने से क्या होता है। जो कीड़ा होना है, वह खुद महसूस करता है कि वह कीड़ा है।

तीन दिन और निकल गए लेकिन इस बार मेरी हिम्मत उनसे मिलने की नहीं हुई। इस बार उनकी राजनीति की चपट मे कौन आ जाएगा यह कहना मुश्किल है। चाहे जो भी हो लेकिन हम इतना तो दावे के साथ कह सकते हैं कि वे प्रदेश स्तर पर नहीं उतरेंगे। इस तरह के कीड़ों की आदत केन्द्र म नीचे उतरने की नहीं होती। यदि ऐसा हो गया तो उन्हे राजनीति का कीड़ा कौन कहेगा।

जो हों, वे राजनीति के कीड़े हैं। तीन दिन मे क्या कुछ कर डालें—कुछ कहा नहीं जा सकता।

डकैती को मान्यता दो

जिस रफ्तार से डकैतियाँ हो रही हैं, उससे हम पूरी तरह आश्वस्त हैं कि आजादी के बाद हम डकैतियों के मामले में आत्मनिर्भर हो चुके हैं। अब वह समय आ गया है, जब सरकार को चाहिए कि वह डकैती जैसे कम लागत की पूंजी वाले व्यवसाय को सरकारी मान्यता दे दे। इससे देश में व्याप्त बेरोजगारी की समस्या भी दूर होगी और हमें प्रतिक्रियावादी ताकतों से लड़ने की भी प्रैक्टिस होगी।

वैसे भी शासकीय स्तर पर डकैती का काम तो होता ही रहता है। पुलिस वाला दो डंडे भी लगाता है और आपसे दो सौ रुपया भी वसूल कर लेता है। रसीद भी नहीं देता। हमारा कहना है कि इस छूट का लाभ निजी क्षेत्र में डकैती करने वालों को दिया जाए। आखिर बेचारे प्रायवेट डकैतों ने क्या बिगाड़ा है? न तो वे इस काम के लिए राष्ट्रीयकृत बैंक से किसी कर्ज की माँग कर रहे हैं और ना ही सरकार से कहते हैं कि बेरोजगारी भत्ते की जगह उन्हें एक देशी कट्टा दिलाया जाए। अपने बलबूते पर खुद बन्दूक भिड़ा रहे हैं और जोखिम उठा कर यह धंधा कर रहे हैं। जब शिक्षित बेरोजगार बन्धु इस धंधे में लग ही गए हैं तो सरकार को मान्यता देने में संकोच नहीं करना चाहिए।

सरकार को चाहिए कि जिला उद्योग केन्द्रों में इन शिक्षित डकैत बन्धुओं का विधिवत पंजीयन करे। हमें एक बात समझ में नहीं आती। सरकार जूता बनाने के लिए ऋण दे रही है, चाक मिट्टी बनाने के लिए दिलवा रही है। हम पूछते हैं कि हमारे शिक्षित युवा बेरोजगारों ने

गया इसीलिए एम० ए०, एम० काम० किया है ? स्नातकोत्तर होकर चाक मिट्टी बनाएँगे ? जीन्स की पेंट पहनकर ऐसा काम उनकी प्रतिष्ठा के खिलाफ है । उनके हाथों म तो देशी कट्टा ही शोभा देता है । सरकार उनका पजीयन करे और उन्हें डकैती के लिए क्षेत्र का वटन करे। लूट के माल पर तीस प्रतिशत डकैती कर के रूप मे हर डकैत से वसूल कर। इसमे शासन की आय भी बढेगी और इस राशि से देश मे कई विकास के काय भी होंगे।

बीडी पत्तो का राष्ट्रीयकरण सरकार न कर दिया। परिवहन निगम बना कर यात्री गाडियो का व्यवसाय भी अपने हाथ मे ल लिया। हम जानते हैं कि सरकार को इस बात का सदेह होगा कि यह डकैती का काम घाटे का न हो। ता हमारी सरकार स यही सलाह है कि वह पहले खुद शासकीय स्तर पर डकैती कर के देख ले। फायदा हो तो आगे चलाए अन्यथा शराब के ठेके की तरह इस भी नीलाम कर के दख ले। हमारा दावा है कि सरकार द्वारा चलाया गया कोई काम अपन दश म घाटे का नही हो सकता। हम भारतीय इतने ईमानदार हैं कि समय पर इनकम टैक्स पटाते हैं, समय पर सेलटैक्स पटाते है, टैक्सो मे कोई चोरी नहीं करते। सरकार जो भी योजना लागू करती है, उसमे हर व्यापारी भाई बराबर सहयोग द रहा है। फिर सरकार को क्या डर है। जिस दिन से डकैती का काम अपन हाथ मे ले लेगी, हमारा विश्वास है कि लोग राहत महसूस करने लगेंगे।

हम ता सरकार के लिए जी रहे हैं दश मे। उसके खिलाफ नही जा सकते। सरकार समद्ध होगी ता देश विकास करेगा। लाटरी चल रही है तो देश मे कई विकास के काम चल रहे हैं। डकैती चलने लगेगी तो विकास के और भी कई काय होगे। देश तरक्की करेगा। हम तो कहते हैं कि इसमे कोई बुराई नही है। सरकार डाका डालेगी तो जनकल्याण की भावना से डाका डालेगी। प्रायव्हेट डाकुओ की तरह फिल्म बनान या मौज मस्ती करने के लिए तो डाका नही डालेगी। धीरे धीरे लोगो की आदत बन जाएगी। जैसे व्यापारी हर साल सरकारी महकमो को रकम देते हैं, वैस ही स्वेच्छा से डाका भी डलवा लेंगे।

एक डकैती कमिश्नर, हर जिले म एक डकैती अधिकारी और उसके मातहत हर तहसील में एक डकती अनुविभागीय अधिकारी से काम प्रारभ किया जा सकता है। सरकार को केवल यही करना है कि हर अनुविभाग को एक लक्ष्य दे दे। जैसा कि परिवार नियोजन के मामले मे सरकार देती है। यानी कि मार्च एँडिग तक इस विभाग को डकैती मार कर एक निर्धारित रकम सरकार को देनी ही पड़ेगी। व्यापारियो को भी सुविधा होगी क्योंकि उनका डकैती का कोटा तय रहेगा। वे खुद डकैती अधिकारी के पास आकर कहेंगे—चलिए हुजूर, हम भी निपटा दीजिए तो हम भी अपने घाटे मुनाफे को रोकड म दज कर लें।

डकती अधिकारी सरकारी जीप म आएगा। व्यापारी उसे अलग कमरे मे चाय पिला कर कहेगा—सर, ऐसा कीजिए, कागज पर तो दस हजार का डाका डाल लीजिए। हमार भी बाल-बच्चे हैं। पाँच हजार आप रख लीजिए।

अधिकारी फाइल निकालेगा। देखेगा और कहेगा—लेकिन सेठजी, आपका तो हर साल पचास हजार के डाके का कोटा है।

सेठ हँसेगा। कहेगा—हुजूर, आप चाहें तो क्या नही कर सकते। मैं तो बस निवेदन कर रहा हूँ।

अधिकारी सिगरेट सुलगा कर कहगा—सो तो ठीक है लेकिन हमारे ऊपर जो मदन बैठा है उसका क्या होगा?

फिर बिल्कुल देशी स्टाइल पर सौदा आठ स दस के बीच तय हो जाएगा और शासकीय तौर पर डकती निपट जाएगी। कोई हो हल्ला नहीं। इसम सरकार को क्या नुकसान होने वाला है। दस हजार तो नोट मिलना ही है। कई अफसरो के बच्चे भी इसी बहाने कानवेन्ट मे पढ लेंगे।

फिर भी यदि व्यापारियो को खुश करना है, तो सरकार यह घोषणा कर दे कि डकती की जो रकम सरकार वसूल करेगी, उस पर इनकम टैक्स म छूट दी जाएगी। बस, अपना देशी व्यापारी इसी म खुश हो जाएगा।

हमारा दावा है कि सरकारी लाटरी की तरह यह डकैती का धंधा भी खूब चल निकलेगा और सरकार को हर साल करोड़ो रुपये की आय होगी। आय होगी तो सरकार भी तबियत से विकास के काम करेगी। देश तरक्की करेगा। हम गरीबी रेखा से ऊपर उठ जाएंगे। हम सरकार को विश्वास दिलाते हैं कि अपनी हैसियत के मुताबिक हम लुटने को तयार हैं। हमें मौका तो मिले।

एक बीमार मुर्गे पर चिन्तन

उधर मंडी के चुनाव परिणाम आए और इधर मेरा मुर्गा बीमार पड़ गया। कल तक तो ठीक बांग दे रहा था लेकिन आज सुबह से ऊंघ रहा है। इस मुर्गे का इतिहास यह है कि देहात से एक सरपंच ने खुश होकर मुझे दिया था और कहा था—खा लेना, वकील साहब।

मुर्गा बड़ा शानदार था। देहात में पला था इसलिए तंदुरुस्त भी था। मेरी इच्छा हुई कि इस मुर्गे को ट्रेंड करूं। पहले मैंने उसे ठीक चार बजे बांग देना सिखाया। साला अब पहली बार देहात से आया था तो इस कालोनी में रात के बारह बजे बांगता था। पड़ोसियों ने कहा कि यह अपशकुन है। मुर्गा यदि आधी रात को बांग दे तो वह अपने साथ दो-चार लोगों को जरूर ले जाता है। मेरे एक दोस्त ने कहा—हलाल करो साले को। कल के दिन को लफड़ा हो गया तो फजीहत में जान डाल देगा सबकी।

आपको सच बताता हूं कि इस मुर्गे में मुझे कुछ टैलेंट नजर आया। मैंने सोचा कि हलाल कर दूंगा तो इसका अस्तित्व किसी साहब की टेबिल पर ही समाप्त हो जाएगा। आंचलिक प्रतिभा वाला प्राणी है। घर के सामने केवल घूमता ही रहेगा तो भी कुल मिलाकर मेरी प्रतिष्ठा ही बढ़ाएगा। लोगों को यह तो पता चल जाएगा कि वकील होकर भी मैं एक अच्छा मुर्गा पाल सकता हूं।

यही सोचकर मैं, उसे पशु चिकित्सालय ले गया। क्या मुर्गा है साहब, जो देखे उसके मुंह में पानी आ जाए। पशु चिकित्सक लाल मेरे दोस्त

हैं। मेरी बगल मे दबा मुर्गा देखकर बोले—कहाँ से भिडाये हो साहब ? मडी से लाए हो क्या ?

मडी से उनका मतलब पशु मडी से था। मैं समझ गया कि सरकार कितने भी चुनाव करवा दे, चुनावो म लाठी गोली चल जाए, लेकिन उनकी सोच का स्तर पशु मडी के ऊपर नहीं उठेगा। मैंने कहा—गिफ्ट मे मिला है।

लाल साहब अब मेरी बातें गभीरता स सुन रहे थे। बोले फिर खा ही लो। मजा आ जाएगा। बिल्कुल देसी है। बडा टस्ट देता है देसी माल।

मैंने लाल साहब को बताया कि मैं इस मुर्गे को अपनी प्रतिष्ठा के लिए पाल रहा हूँ। मैं चाहता हूँ कि हमारी सगत म रहकर मौलिक अधिकार की बातें सीखे और आम मुर्गे की तरह केवल हलाल हो जाना ही अपनी नियति मत समझे।

लाल साहब को मेरी उच्च हिंदी समझ मे नहीं आई।

मैंने कहा—आप पशु विभाग वाले हैं। नियति बडी ऊँची चीज होती है। जसे गरीब है तो उसकी नियति है कि केवल मजदूरी करते हुए मर जाना। बाबू है तो उसकी नियति है दो नबर का दस-बीस हजार जमा कर रिटायर हो जाना। विधायक है तो उसकी नियति है कि हमेशा मुख्यमत्री की गुडबुक्स मे रहना और मौका लगे तो केबिनट म घुसकर कुछ बना लेना। इसी नियति के सहारे यह देश चल रहा है।

लाल साहब बोले—आप तो बडे विद्वान लगते हैं।

मैंने कहा—परपरा तो यही है कि अपने यहाँ मुर्गा केवल हलाल होता है। लेकिन समझदार लोग जानते है कि किस मौके पर हलाल करना उनकी प्रतिष्ठा के अनुरूप होगा। मैं इस मुर्गे की नियति जरा अमड करने की सोच रहा हूँ।

वे बोले—यह कैसे ? भई मुर्गा है तो कटेगा। आज नहीं तो कल कटेगा। छुरी से नहीं तो पवित्र कृपाण के झटके से कटेगा लेकिन कटेगा तो। इसे कब तक बचाओगे, वकील साहब ? इसलिए हो ही जाए आज

मैं लाल साहब का वैचारिक स्तर समझता था। मैंने कहा—दूसरो

का मुर्गा देखकर आपके मुह मे पानी आ रहा है ? आप चिकित्सक हैं तो इसको चिकित्सा की दृष्टि से देखिए। काटने-पीटने की बात क्यो कर रहे हैं ।

वह बोले—मेरा मतलब यह नहीं है। हमारा पाला तो रोज ही जानवरो से पडता है। मैं यह रहा था कि आपका मुर्गा जो है

मैंने बीच मे ही कहा—आप डाक्टर हैं। एक मरीज के प्रति आपका भी कुछ नैतिक धर्म बनता है।

वे बोले—व्हाट डू यू मीन वाई नैतिक धर्म।

अब मैं क्या समझाता पशु विभाग के इस आदमी को कि नैतिक धर्म क्या होता है। इसलिए मैंने कहा—छोडिए फालतू बातो को।

वे फिर बोले—यानी कि नैतिक धर्म इज ए फालतू बात इन इडिया ? क्यो ?

इस बीच मेरा मुर्गा आँखें बद किए मेरी बगल मे पडा था। मेरा नैतिक धर्म था कि इतने दिनो तक उससे बाँग दिलवाता रहा, तो अब उसे बचा लू। मैं यह अच्छी तरह जानता था कि वह मेरे इशारे पर ही बाँग देना सीखा है।

इस बीच एक बीमार बकरा भी अस्पताल आ गया। लाल साहब ने बकरे की ओर देखा। बोले—अच्छा बताइए, आपके हिसाब से व्हाट इज दी नियति आफ दिस बकरा ?

मैंने कहा—अपने देश मे हर बकरे की अलग-अलग नियति होती है। पहले बताइए कि यह किसका बकरा है।

वे बोले—सरकारी अफसर का है। नाऊ टेल मी व्हाट यूवर नैतिक धर्म ? सेज अबाउट दिस एनिमल एड हिज मदर। समझे आप कि नहीं ?

मैंने कहा—दूसरे के बकरो से मुझे कोई लेना-देना नही है। वे जानें और उनका बकरा। मुझे बताइए कि मेरे मुर्गे का क्या होगा।

लाल साहब बोले—यही तो प्राब्लम है हमारे देश मे। एव्री बडी थिक्स आफ हिज ओन मुर्गा एड नथिंग ऐल्स।

लाल साहब ने मुर्गे का परीक्षण किया। उसकी आँखो को गौर से देखा और बोले—सारी नो होप। इलेक्शन के बाद से सफेद दस्तो का

सीजन चल रहा है। यह सीजन मुर्गे के लिए ठीक नही मेरा सजेशन है कि इसे निपटा ही दो आज।

मैंने भी यह सोचकर कुछ नही कहा कि मुर्गे की नियति बदलने का ठेका मैंने अकेले नहीं ले रखा है, इस देश मे। मुर्गे तो इसी तरह रोज बाँग देते रहेंगे और रोज कटते रहेंगे। उनकी सुबह बाँग से और शाम डायनिंग टेबल की शोभा से होगी। यह मैं भी जानता हूँ और पशु चिकित्सक लाल भी जानते हैं। इस व्यवस्था के ईमानदार डाक्टर की हैसियत से उनका काम था मुझे सलाह देना, तो उन्होंने दे दी। एक बुद्धिजीवी और वकील होने के नाते आगे की बात सोचना मुझ पर निर्भर है। आखिर मेरा भी तो कुछ नैतिक धर्म है एक बुद्धिजीवी होने के नाते इस देश मे।

पटवारी को मत पकडो

यह जानकर दुख हुआ कि एक पटवारी साहब सौ रुपया घूस लते हुए पकड लिए गए। आश्चय इसलिए हुआ कि देश म ऐस पटवारी हैं जो घूस लेकर पकड मे आ जाते हैं। यार पटवारी, सच कह तुमन तो पूरे पटवारी समाज की नाक काट कर रख दी। हमारे इधर के पटवारी पाँच सौ रुपया ल लेते हैं और पक्डा म भी नहीं आते। एक तुम हो कि सौ रुपट्टी मे ही पकड गए। हम पूछते हैं, कहाँ ट्रेनिंग की थी यार तुमन ? किसन बना दिया तुमको पटवारी ? यार तुम पकड म क्या आ गए तुमन पूर राष्ट्र को घूसखोर सिद्ध कर दिया। हमारा देश ईमानदार कमचारियों का देश है। तुम जैसे लाग ही देश पर घूसखोरी और भ्रष्टाचार का कलक लगा रहे है। थू है तुम्हारी पटवारीगिरी पर। डूब मरो चूल्लू भर पानी मे। धिक्कार है तुम्ह कि इस देश म रहकर भी तुमको घूम लेने का तरीका नही आया। तुम ता विदेश चले जाओ यार, तुम इस दश मे रहने के काबिल नहीं हो। अर भइया, तुमको घूस लेना नहा आता तो रवनू इसपक्टर स पूछ लेते किसी तहसीलदार स पूछ लेत। हम कहते हैं तुम कब सीखाग ? राजस्व विभाग म इतने वरिष्ठ अधिकारी लोग है उनके अनुभवो का लाभ कब उठाओग ? किसने कहा था तुमका कि सौ रुपये का नाट लो ? एक बारा चावल ले लत। फिर कस पकड म आत ? नोट पर तो नम्बर होता है चावल पर थोडे होता है नम्बर। पुलिस वाल पूछते तो कह दते ससुराल वाला न भेजा है। यार पटवारी भी तुम कच्चे हो।

सुनो हो पटवारी, तुम घूस लेते हुए पकड़ मे क्या आ गए, हम इधर तकलीफ मे पड़ गए। अपने हल्का पटवारी मे नकल लेने जाते है तो पटवारी कहता है, मेरे पास खसरा फार्म नही है।

हम बाजार मे खसरा फार्म ला देते हैं तो वह कहता है, ट्रेसिंग पेपर नही है। वो भी ला देते हैं तो कहता है, बी-वन का फार्म नही है। वो भी ला देते हैं तो कहता है—हमको फुरसत नही है।

हम कहते है—पटवारी साहब, लगे तो दस-बीस रुपया ले लो लेकिन हमको खसरा बी वन की नकल दे दो। वह कहता है देखो, आज से हम ईमानदार हो गए हैं। हमारा एक भाई पकड़ मे आ गया है। उसके बाल बच्चे भूखे मर रहे हैं। उसे पकड़कर शासन ने पूरे पटवारी समाज का अपमान किया है। इसलिए आज से हम कोई घूस नही लेंगे और जब हमको फुरसत होगी तभी आप लोगों का काम करेंगे।

हमने कहा—तो यही बता दीजिए कि आपको कब फुरसत मिलेगी।

पटवारी साहब ने हमको ऊपर से नीचे तक देखा और बोले—ये नही बता सकते। पटवारी को कब फुरसत मिलेगी यह कैसे बताएँ तुमको।

हमने कहा—फिर भी साल दो साल पाच साल कभी तो मिलेगी फुरसत।

वह बोले—फुरसत का क्या है। कहो तो अभी मिल सकती है और नहीं तो दस साल तक भी नहीं मिल सकती। हम सरकारी काम पहले देखेंगे कि तुम्हारी नकल बनाते रहेंगे। कल के दिन तहसीलदार सिर पर चढेगा तो तुम आओगे हमको बचाने?

—फिर क्या करें? देखो पटवारी साहब, हमको तो बैंक से कर्ज लेना है। आप जब हमारे खाते की नकल देंगे तभी हमको बैंक से कर्जा मिलेगा।

—तो हम क्या करें, बोलो?

—आप तो कुछ मत करो, बस हमसे बीस रुपया ले लो और फुरसत निकाल लो तो हमारा कल्याण हो जाएगा। बैंक से कर्जा मिलेगा तो हम उसी रकम म से गुड्डी की शादी निपटा देंगे।

पटवारी हँसता है। उसके चेहरे पर मुस्कान है। कहता है—देखोजी,

हम तो तुमको बता देते हैं कि हम नियम से काम करेंगे तुमसे एक पैसा नहीं लेंगे। और तुम तो जानते हो कि हम नियम से काम करेंगे तो कम से कम इस जन्म में तो तुमको नकल मिल ही नहीं सकती। तुमने हमारे पटवारी भाई को सौ रुपया देकर पकड़वा दिया है तो इसका बदला तो हम नियम से काम करके ही लेंगे। इसलिए अब तुम जाओ। जब नकल बन जाएगी तो हम तुमको बुलवा लेंगे - ईश्वर की कृपा से तुम जिन्दा रहे तो आ जाना नहीं अपने बाल बच्चों को समझा के जाना कि वे आकर नकल ले जाएँ।

तो भइया, हम तो नकल का आवेदन दे आए और घर आकर मन्नत मांगी कि हमको नकल मिल जाएगी तो हम पाँच फकीरों को खाना खिला देंगे। लेकिन आपको भी आश्चर्य होगा कि आज पाँच साल हो गए। इस बीच हमारे दो बच्चे भी पैदा हो गए लेकिन पटवारी साहब ने खसरा पाँच साला और बी वन की नकल हमको बनाकर नहीं दी। जब जाते हैं उनको फुरसत ही नहीं मिलती। पहले फुरसत का रेट बीस रुपया था लेकिन जब से सरकार ने इस पटवारी को सौ रुपया लेते पकड़ा है तब से यह रेट बदल गया है। किसको बताएँ कि हमको यह असुविधा हो रही है। हम तो उस अफ्सर से भी पूछते हैं कि तुमने तो उस पटवारी को पकड़ लिया लेकिन अब ये तो बताओ कि हम क्या करें? पहले तो बीस रुपया देते थे तो पटवारी को फुरसत मिल जाती थी लेकिन अब तो सौ रुपया भी देते हैं तो वह कहता है, हमको फुरसत नहीं—हम नाजायज कब्जे वालों का काम कर रहे हैं।

सरकार से हमारा निवेदन है पटवारियों को मत पकड़ो। ये इस देश के कर्णधार हैं व्यवस्था के भू-स्वामी हैं। इनको पकड़ोगे तो हम भू स्वामी होकर भी अनाथ हो जाएँगे।

ईमानदार विद्युत मीटर की कथा

मेरे पेट मे कोई बात नही पचती। अब इसे अपनी विशेष योग्यता कहूँ या और कुछ, अपने देश मे बहुत लोग मेरी ही बिरादरी के हैं लेकिन मेरा दावा है कि मेरा मुकाबला इस विधा म कोई नहीं कर सकता। मेरा पेट जो है वह एकदम अलग स्टाइल का है। आपने उसमे बात डाली नही कि उसने खदबदाना शुरू किया। इस साले पेट की ही हाजमा शक्ति नाश हो गई है तो मैं क्या करूँ। लोग मुझे गालियाँ देते हैं और कहते हैं—यार, तुम जैसा आदमी न देखा, न देखेंगे। छोटी सी बात भी हजम नही कर सकते।

अब हम उन्हे कैसे बताएँ कि ये तो हमारी खानदानी आदत है। जिस दिन हम बात हजम कर लेंगे तो समझना फिर इस देश का ऊपरवाला ही मालिक है।

अब हम आते हैं असली बात पर। देखिए श्रीमान, हम केवल आपको इसलिए बता रहे हैं कि हमारे पेट मे भारी उथल-पुथल मची है। आपको नही बताएँगे तो यह पेट फूलेगा और फूलेगा तो फट भी सकता है। और जब हमारा पेट ही नहीं रहेगा तो हमे बात पचाने का मौका ही कहाँ मिलेगा।

बात यह है कि हमारे घर पर जो बिजली का मीटर लगा है वह बहुत शानदार, जानदार और ईमानदार है। हमे बिजली वालो ने कहा था कि किसी को मत बताना। लेकिन इस महत्त्वपूर्ण बात को हजम करना हमारे जन्मजात संस्कारो के विरुद्ध है। साला मीटर नही रेस का घोडा है और

यह घोड़ा कनिष्ठ अभियंता मध्यप्रदेश विद्युत मंडल ने हमारी दीवार पर बाँधा है। जिस दिन यह घोड़ा हमारे घर आया था, तभी पंडितजी ने भविष्यवाणी की थी—बेटा, तुम्हारे घर पर राहु और केतु दोनों की दशा बैठने का योग दिखता है। शनि की दशा भी कोई खास अच्छी नहीं है।

मैंने कहा—फिर क्या होगा महाराज ? मैं बाल-बच्चों वाला आदमी हूँ मर जाऊँगा।

पंडितजी बोले—बच्चा, तू बिजली आफिस जाकर हर शनिवार को उदबत्ती जला आना और अपनी श्रद्धा और भक्ति के अनुसार दान पुण्य करना। उनकी कृपा हुई तो यह साढ़े साती की दशा जल्दी उतर जाएगी और नहीं हुई तो बस तेरा मरना ही मरना है। समझा ?

हम जानते हैं कि हम जैसे मूर्ख आदमी यदि किसी बात को समझ जाएँगे तो यह विद्युत विभाग रसातल में चला जाएगा। हमने कहा—पंडितजी हमारी आस्था इसमें नहीं है। जो भाग्य में लिखा होगा, उसे कोई बिजली वाला नहीं टाल सकता।

पंडितजी ने हमें 'तो जा मर साले' वाली मुद्रा से देखा और आगे बढ़ गए।

उधर पंडितजी आगे बढ़े और इधर हमारा मीटर आगे बढ़ने लगा। मैंने देखा। वह पी० टी० उषा की तरह आगे भागा जा रहा है। मुझे लगने लगा कि वह मुझे विद्युत विभाग से गोल्ड मेडल दिलवा कर ही रहेगा। मैंने कहा—ओ भइया यार जरा धीरे चल मेरे पिताजी मारेगा क्या हम लोगों को ?

लेकिन कहता हूँ ना कि यह मीटर जो है, बड़ा स्वामिभक्त किस्म का है। बोला—अबे चल हट बड़ा आया है समझाने वाला साले पूरा देश तेज गति में विकास की ओर भाग रहा है और तू हमें समझाने आया है। विद्युत विभाग के लोग हैं हम। अपने मालिक से नमकहरामी नहीं करेंगे। अपनी तबियत में भागेंगे और म० प्र० विद्युत मंडल को अधिक से अधिक फायदा करवाएंगे। चल फूट यहाँ से।

मैं मुहल्ले वालों को बुला लाया। मैंने कहा—आप लोग समझाओ दादा इस मीटर को। मेरी जिंदगी बर्बाद करने पर तुला है। इसी रफ्तार

में भागेगा तो एक साल म मेरा यह छोटा-सा मकान बिक जाएगा ।

लोगो ने कहा—देखा भई तुम्हारा मामला जो है वह सरकार और तुम्हारे बीच का है । सरकारी काम मे हम कोई बीच-बचाव नहीं कर सकते । ये मीटर जो है, वो सरकारी है । सरकार के गधे तक का विरोध करने की हमारी आदत नही है । तुम तो जानते हो कि हमे तो इसी सरकार के साथ रहना है । इसलिए तुम हमे बीच मे मत डालो और मामला आपस म सल्टा लो ।

उधर दीवार पर जा मीटर चिपका बैठा था, वह ठहाका लगाकर हँसा । जैसे कहना चाहता हो—साले अपना मतलब है तो मुहल्ले वालो को लाया है । जब उनके घरो का मीटर भाग रहा था तो बडा खुश हो रहा था तू ! अब आई अक्ल बेटा !

अब हालत यह थी कि मैं पागलो की तरह भटक रहा था । जो मिलता उससे निवेदन करता—दादा समझाओ इस बिजली विभाग वाले को मुझे बचा लो मैं बर्बाद हो जाऊँगा ।

लेकिन कोई नहीं आया मुझे बचाने । जो लाइनमैन दिखता, पान की पीक थूक कर मेरे आगे से निकल जाता । और मेरी हालत तो यह थी कि मेरी दृष्टि इतनी विकसित हो गई थी कि बिजली विभाग का चपरासी भी मुझे महान नजर आता था । लेकिन कहते हैं ना कि जिस पर दुख का पहाड टूटता है, उससे सब दूर भागते हैं । आखिर जब पाच सौ बहत्तर रुपये अस्सी पैसे का बिजली का बिल इस निर्दयी मीटर की कृपा से आया तब मुझे इस बात का पक्का विश्वास हो गया कि अपने देश मे यदि कोई ईमानदार सरकारी विभाग है तो वह है बिजली विभाग ।

दाढी बढ़ी हुई है, मैले कुचैले कपडे । नीचे धरती की ओर झुकी हुई आखें, चेहरे पर हवाइयाँ आदि लक्षण देखकर हमारे एक दोस्त ने पूछा—क्यो दादा, घर मे कोई गमी हो गई है क्या ?

मैंने कहा—नही मैं बिजली विभाग का बिल पटाने आया हूँ ।

मेरी हालत पर रहम खाकर दोस्त ने कहा—उस दाढी वाले साब से मिल लेना, आदमी बहुत ईमानदार है ।

मेरे जीवन म आशा की चिंगारी फूटी । कई दिनो बाद मेरे चेहरे पर

मुस्कराहट आई थी। मैं साहब से मिला। आदमी बहुत अच्छा था। मेरी हालत देखकर ही उसने पूरे हिंदुस्तान का अदाज लगा लिया। मैंने जब अपने दुख-दद की पोटली खोली ता वह वाला—अगली बार दखेंगे लेकिन यह बात पचा जाना। किसी का कानोकान खबर तक न हो। समझे!

एस धर्मात्मा किस्म के लोग भी बिजली विभाग म मवारत हैं, यह इस दश के लिए गौरव की बात है। लेकिन हम जस लोग जब तक रहेंगे बेचार धर्मात्मा भी क्या कर सकत ह। उन्होंने कहा था कि बात पचा जाना लकिन मैंन कहा न कि मरे पट म कोई बात नही पचती। जब स सुना है पेट म भारी उथल-पुथल मची है। आपका नहीं बताएँग ता पट फूलेगा और फट जाएगा। आपको बता दिया है लेकिन मेहरबानी कर आप किसी को मत बताना। हमारी जिंदगी और मौत का सवाल है श्रीमान जी। म० प० विद्युत मडल वाला का पता चल गया तो हम किसी को मुह दिखाने के लायक नही रहेंगे।

नाली मे गिरी राजनीति

दुघटना यह हुई कि एक सत्तापक्षी नेताजी नगरपालिका की नाली मे गिर गए। हमने कई बार उनसे कहा था कि नेताजी नीचे देखकर चला लेकिन वे माने तब ना। हमसे कहने लगे—हम आला कमान वाले हैं, जब भी देखेंगे ऊपर देखेंगे, दिल्ली की तरफ।

शताब्दी वर्ष मे मैंने इस वजनदार काग्रेसी को खीचकर बाहर निकाला। पूछा—कैसे गिर गए हो नेताजी नाली मे?

वे बाले—अरे भइया, गिर क्या गए भुगत रहे हैं विपक्षी विधायक का दुष्परिणाम। हम ता चुनाव के समय लोगो को गला फाड-फाडकर कहते रहे कि हमारी पार्टी को जिताओ तो मजे मे रहोगे। लेकिन लोग तो अधे हैं ना। मार ही दिया ठप्पा उधर। अब मारा है ठप्पा तो देखो शहर की क्या दुगत बना दी है। चारो तरफ नालियाँ खुदवा दी। अब तुम ही बताओ कि यह भला आदमी चलेगा कैसे? हम पूछते हैं इस तरह पूरे शहर मे नालियाँ बना दोगे तो विपक्ष की गदगी साफ हो जाएगी? सोच रहे होगे कि चुनाव मे जीत जाएँगे अगली बार। तो देखना तुम यही नाली खाएगी विपक्ष को एक दिन। य अपना देश है तो सब चल रहा है। विदेश मे खुदवाते नाली और हमारे जैसा कोई गिरता तब आटे-दाल का भाव पता लगता। अरे भइया वहाँ इत्ती छोटी बात पर चढ बैठते हैं लोग और इस्तीफा देना पडता है, समझे।

इसके बाद नेताजी ने विपक्षी विधायक को श्राप दिया। यदि उनमे शक्ति होती और सतयुग का टाइम होता तो वे विपक्ष के विधायक को

भस्म भी कर देते लेकिन उन्हें अचानक याद आया कि घुटने में दर्द है। वे अपना घुटना फिर मलने लगे।

मैंने पूछा—आपके घुटने को क्या हो गया नेताजी?

वे भड़क गए। बोले—चुप रहो। फालतू बात करते हो। हमारे हाथ-पैर तोड़ दिए विपक्ष ने और तुम्हें मजाक सूझ रहा है। शर्म नहीं आती? हमको घुटना कहते हो? इतने साल से राजनीति में हैं, तो थोड़ा बहुत व्यंग्य तो हम भी समझते हैं, हाँ।

मैंने कहा—नेताजी, मेरा ये मतलब नहीं था। आप तो बुरा मान गए।

वे बोले—बुरा नहीं मानेंगे तो क्या तुम्हारी आरती उतारेंगे? आ गए ना आखिर तुम भी विपक्ष की चाल में। नाली खुदवाकर हम जैसे सत्तापक्ष के सेवकों की टाँग तुड़वा रहे हैं और तुम हो कि बस उनकी ही तरफदारी किए जा रहे हो। कर लो, कर लो। हमारे दिन भी फिरेंगे तब बताएँगे तुमको कि क्या होती है राजनीति। दूसरों को नाली में गिरा हुआ देखकर सबको मजा आता है भइया। जब खुद गिरोगे तब पता चलेगा कि विपक्ष का विधायक क्या होता है। समझे कुछ कि नहीं? अरे पूरे प्रदेश में तो हमारा शासन है। दो चार विधायक आ गए हैं गलती से चुन कर तो सोच रहे होंगे कि उनका शासन चलेगा। जहाँ मन किया नाली खुदवा दी। अरे वाह रे विपक्ष। ऊँ हूँ!

—लेकिन नेताजी आप तो दूरदृष्टि वाले हैं। इतनी बड़ी नाली नहीं नहीं दिखी आपको?

—देखो हम कहे देते हैं कि और गुस्सा मत दिलाओ हमको हाँ। हम ये बिल्कुल बर्दाश्त नहीं कर सकते कि तुम बीस सूत्री का मजाक उड़ाओ। अरे हम गिरे हैं नाली में इसका ये मतलब तो नहीं कि तुम हमारे पक्के इरादे और दूरदृष्टि का मजाक उड़ाओ और वो भी हमारे ही सामने। क्यों?

—नेताजी मेरा ये मतलब नहीं था।

—अरे यार, हमको मत बताओ। मतलब तो हम भी समझते हैं। इतने दिनों से राजनीति में घास नहीं खोद रहे हैं हाँ, मतलब था तो दस

बार आते थे हमारे पास नेताजी ये करवा दो, नेताजी वो करवा दो। हमारे पैर पकड़कर कहते थे—हमारा ट्रासफर करवा दो, हमारा प्रमोशन करवा दो। आज हमारी पार्टी का विधायक नहीं है तो हमी को मतलब समझा रहे हो? क्यो? य नही कहोगे कि इत्ती गहरी नाली खुदवाने की क्या जरूरत पड गई थी शहर म हम कहगे ता कहोगे कि सत्ता वाले हैं इसलिए विपक्ष को बदनाम कर रहे है। अरे हमारा क्या जाता है। मारा, पूरे विधानसभा क्षेत्र म मतदाताओ को नाली मे गिरा गिरा के। लेकिन हम भी कह दत हैं, य किसी मामूली आदमी का पैर नही है हाँ। विधान-सभा ववशन उटाकर पूरी नगरपालिका को भग नही करवा दिया तो थूक देना हमार मुह पर। देखना ये नाली कित्ते लोगा का तबादला करवाती है। हमारे लाग भी ता रहे सत्ता म इत्ते साल। बोलो रहे कि नई? अब तुम ही बताओ कोई गिरा है नाली म हमार समय मे? धरम ईमान स बोलना। ये नइ कि नताजी सामने हैं ता उनको खुश करन के लिए कुछ भी बोलो। सच सच बताओ कोई गिरा है नाली में हमार समय?

मैंन कहा—एक दरागा साहब गिरे थे।

नेताजी फिर भडक गए। बाले—अजीब आदमी हो यार तुम भी। हम जनता की बात कर रहे है और तुम पुलिसवाले को बीच म ला रह हो। अर कोई आदमी गिरा क्या? समझते हा आदमी किसको कहते हैं कि ये भी हमी को समझाना पड़ेगा? हम तो सच बताएँ यार, मर गए इस युवा पीढी के मारे। कुछ नही समझते भई। हम पूछते हैं कित्ते साल से रहत हो इस देश मे? पुलिस मे और आदमी म फक भी नही समझते? दरागा गिरा इसका ये मतलब तो नही कि जनता गिरी नाली मे। क्या? अरे हम तो अपनी बात करते हैं। देखना आज हम गिरे हैं, कल तुम गिरोग, परसा जनता गिरगी। य विपक्ष के विधायक की नाली है, देखना सबका गिराएगी एक दिन तब समझ म आएगा तुमको हा। लग तो हमारी बात नोट कर ला। फिर मत कहना कि नताजी न हमको नही बताया।

मैं समझ गया कि नताजी बस अपनी बात करते रहगे। इसी गुण के कारण तो इस विधानसभा क्षेत्र म उनकी नेतागीरी टिकी हुई है। मैं जानता था कि मैं एक बात कहूँगा तो वे दस बात सुनाएँगे। यही सोचकर

मैंने कहा—अच्छा चलता हूँ नेताजी।

वे बोले—जाओ जाओ। साली जनसेवा की भावना तो मर ही गई है इस क्षेत्र मे। हम यहाँ दर्द से मर रहे हैं और इनको जाने की पड़ी है। नहीं जाएँगे तो देश का विकास रुक जाएगा। जाओ भइया जाओ। हम सब समझते हैं यार। हमारा विधायक होता तो बताते तुम्हारा 'जाओ-जाओ'। आज नेताजी नाली म गिर गए तो जाने की जल्दी पड़ गई। हमारे दरवाजे पर घटा बठ कर प्रधान पाठक की शिकायत करते थे तब जाने की जल्दी नहीं होती थी। क्यों? ठीक है, जाओ। लेकिन ये भी याद रखो कि अभी नेताजी के घुटनों मे ताकत है। बच्चे थे तभी सत्याग्रह आन्दोलन म भरती हो गए थे तो कुछ सोच समझकर ही हुए थे हाँ। कमजोर घुटने वाले होते तो कब के टें बोल जाते राजनीति मे। विपक्ष के विधायक ऐसी पचास नालिया भी खुदवा दें तो नताजी के इस घुटने का कुछ नहीं बिगाड़ सकते। समझे लाला!

मैं बिना कोई जवाब दिए आगे बढ़ गया।

थोड़ी दूर जाने के बाद देखा तो नेताजी न दूसरे आदमी को पकड़ लिया था। मैं समझ गया कि शताब्दी वर्ष में नेताजी पूरे फार्म में हैं। वे फिर अपनी राजनीति दिखाने के रंग म आ गए।

जब तक नालियाँ रहेंगी नेताजी को बोलने से कोई नहीं रोक सकता। देश है, तो नगरपालिका है। नगरपालिका है, तो नालियाँ हैं और नालियाँ हैं तो नेताजी तो रहेंगे ही। कहाँ जाएँगे बेचारे?

क्षमा कीजिएगा

इन दिनो 'क्षमा कीजिएगा' वाले से पूरा शहर परेशान है। पता नही ये आदमी किस नक्षत्र मे पदा हुआ है। बात शुरू करेगा तो कहेगा—क्षमा कीजिएगा। फिर दो वाक्य बोलेगा और कहेगा—क्षमा कीजिएगा। थोडी देर चुप रहेगा। कुछ सोचेगा और कहेगा—क्षमा कीजिएगा। कभी-कभी तो क्षमा कीजिएगा कहने के बाद ही वह सोचता है कि अब क्या कहना है। रास्ता चलते किसी को भी पकड लेगा और कहेगा—क्षमा कीजिएगा।

इसी धड पकड मे मैं फँस गया। पान खाने निकला था कि मे क्षमा कीजिएगा वाले दिख गए। दिखने मे तो बुद्धिजीवी लगते थे लेकिन बाद म पता चलेगा आपको भी, किस टाइप के बुद्धिजीवी थे। मैंने पान की दुकान पर एक जोडा बनारसी का आडर दिया तो वे बोले—क्षमा कीजिएगा देश की हालत बहुत खराब है।

मैंने कहा—इसमे आपको क्षमा करने की कौन-सी बात है? क्या आपने हालत खराब की है?

वे बोले—क्षमा कीजिएगा, आप मेरा मतलब नही समझे। मैं बहुत स्पष्टवादी हूँ।

क्या मतलब है आपका?

क्षमा कीजिएगा बहुत गौर करने का मामला है। इसे इतना लाइटली मत लीजिए। क्षमा कीजिएगा एक बात बता देता हूँ कि हम बहुत कठिन दौर से गुजर रहे हैं।

मैं चुप रहा, यही सोचकर चुप हो गया था कि मैंने उनके इन काम्र उत्तर दिया नहीं कि व मुझे एक और क्षमा कीजिएगा टिका देंगे।

वे बोले—क्षमा कीजिएगा, आप मेरी बात को गभीरता से नहा ल रहे हैं।

वो तो मैं बिना कुछ कहे वहाँ से खिसक गया नहीं तो वह मुझसे क्षमा माग मागकर समझा ही देता कि देश की हालत कितनी गभीर है। उसकी एक आदत से मुझे एलर्जी हो गई थी कि क्षमा कीजिएगा कहने के बाद वह अपना मुह थैलियों की तरह बनाता था, आखें गोल गोल घुमाता था, चारों तरफ देखता था और बात को इतनी जोर से चबाता था कि किसी की भी इच्छा उसे क्षमा कर देने की होती थी और क्षमा करो साले को और आगे बढने वाली भावना जागृत हो जाती थी।

बबई में ट्रेन या टाउन बस में जब खूबसूरत महिलाएँ एक्सक्यूज मी कहकर मुस्कुराती हैं तो अगला आपसे आप रास्ता द देता है, और एक अपना क्षमा कीजिएगा वाला है। भीड में जिससे कहेगा वही उसे दो धक्का मारेगा। उसने क्षमा कीजिएगा कहा और जवाब मिलगा—अबे अधा है क्या देखता नहीं सामने कितने लोग खड़े हैं तेरे क्षमा माँग लेने से भीड कम हो जाएगी क्या?

मैं खिसक रहा था कि वह मेरे पीछे लग गया। थोडी दर तो मेरे पीछे पीछे चलता रहा बाद में जब रास्ता सुनसान हो गया तो उसने कहा—क्षमा कीजिएगा।

मैंने कहा—मुझे मालूम है देश की हालत बहुत खराब है।

वह बोला—क्षमा कीजिएगा। वह बात नहीं है। बात यह है कि

मैंने बीच में ही कहा—जानता हूँ। हम बहुत कठिन दौर से गुजर रहे हैं।

इसके बाद उधर से क्षमा कीजिएगा का रिप्लाई नहीं आया तो मैं समझ गया कि अब वह किसी दूसरे आदमी को पकड़ेगा। लेकिन नहीं, वह चुपचाप मेरे पीछे-पीछे चलता रहा।

आगे चौराहा था। मैं दाहिनी तरफ मुड़ा तो वह बोला—क्षमा कीजिएगा देश गलत रास्ते पर जा रहा है।

एक बार मेरी इच्छा हुई कि इस आदमी को पास बिठाकर उसकी पूरी बातें सुनूं। हो सकता है वह फेयरफैक्स वाले मुद्दे पर कुछ कहे या अपने रक्षामंत्री के बारे में कोई टिप्पणी दे। लेकिन मैंने यह सोचकर उसे निपट नहीं दी कि साला इतने अहम मसले के आगे क्षमा कीजिएगा लगा कर पूरे घटनाक्रम की सीरियसनेस की ऐसी-तैसी कर देगा। दरअसल अन्दर ही अन्दर मुझे अब इन शब्दों से घृणा होने लगी थी। इस आदमी को किसी मंच पर भाषण देने के लिए खड़ा कर दो तो क्षमा माँग माँगकर ही यह इस देश को विकासशील राष्ट्र सिद्ध कर देगा।

मैं सोच रहा था कि इस आदमी पर जरूर व्यंग्य लिखूंगा, लेकिन फिर सोचने लगा कि इसमें विसंगति की बात कहाँ है। बेचारा सीधे-सीधे क्षमा माँग रहा है। जहाँ क्षमा होती है वहाँ तो करुणा का भाव होता है। हाँ, इन करुणा के पीछे यदि कोई दर्द छिपा हो तो उसकी पीड़ा का रेखांकन अवश्य एक अच्छे करेक्टर सटायर को जन्म दे सकता है। लेकिन ऐसी कौन सी स्थिति पैदा की जा सकती है जो इस चरित्र को सार्थक बनाए।

चौराहे के पास जिस सड़क की ओर मैं मुड़ा था, उस पर एक पुलिया बनी हुई थी। मैंने पीछे मुड़कर देखा तो वह पुलिया पर बैठ गया था। शायद उसने सोच लिया हो कि मुझे देश के हालात से कोई दिलचस्पी नहीं है, यही सोचकर उसने मेरा पीछा छोड़ दिया हो।

मैं थोड़ी देर के लिए रुका, एक सिगरेट सुलगाई और उसकी तरफ देखने लगा। पहले तो वह देखता रहा और बाद में उसने अपना मुँह दूसरी दिशा में घुमाकर मेरी ओर पीठ कर दी। जैसे कहना चाहता हो—जाओ मैंने क्षमा कर दिया। जिस आदमी के लिए देश और सिगरेट में कोई अन्तर न हो, उससे बात करने से तो अच्छा है उसकी तरफ पीठ कर लो।

यह तो मैं सोच रहा था। एक लेखक होने के नाते कई तरह की बातें आती हैं मन में। किसी स्थिति को देखकर ही विचार बनते हैं। बंबई की खूबसूरत महिलाओं के साथ मन में बहुत हल्के फुल्के विचार ही आते हैं जबकि क्षमा कीजिएगा वाले के साथ जब देश जुड़ जाता है, तो मेरा ऐसा सोचना मुझे स्वाभाविक लगा।

मैं उसके पास आ गया। उसे गभीरता से देखता रहा। मैं चाहता था कि वह बात शुरू करे। देश की हालत पर कुछ कहे, सही-गलत रास्ते के अन्तर की बात कहे तो मैं उससे बात करूँ और अपने व्यग्य के लिए कुछ प्रामाणिक तथ्य निकाल सकू।

वह मेरी ओर देखता रहा। उसके चेहरे पर पीलापन था। चौराहे पर जो गहरे पीले रग की रोशनी थी, उससे आसपास के वातावरण म भी पीलापन चलकने लगा था। यही तो इस सोडियम लैम्प की विशेषता है। हो सकता है, उसके चेहरे का पीलापन मुझे इस रोशनी के कारण ही अधिक पीलापन लग रहा हो।

मैं थोडी देर रुका रहा। मैंने भी निश्चय लिया था कि इस बार भी बात उसकी तरफ स प्रारम्भ होगी तभी मैं जबाब दूगा और उसकी हर बात को गभीरता से सोचूगा। शायद उसे मेरे पहले के व्यवहार से दुख हुआ था। मुझसे नाराज हो सकता था।

कोई पाँच मिनट तक हम दोनो चुप रहे। बाद मे मैं जाने लगा तो उसने कहा—क्षमा कीजिएगा आपके पास पाच का नोट होगा ? मैंने कल स कुछ नहीं खाया है।

मैंने पेट की जेब मे हाथ डाले और बिना कुछ उत्तर दिए उसी रास्ते पर मुड गया जिस पर खडे होकर थोडी देर पहले मैंने सिगरेट पी थी।

क्षमा कीजिएगा वाले से पूरा शहर परेशान तो होगा ही क्योंकि इस शहर मे मुझ जसे ही लोग रहते हैं।

दुखो का सिलसिला

भारत दुखिया का देश है। लोग दुखी हैं कि हम हाकी मे क्यो हार गए, लोग दुखी हैं कि अमिताभ बच्चन की फिल्मे क्या नही लग रही हैं, लोग दुखी हैं कि मुख्यमत्री अपने मत्रिमडल का विस्तार क्यो नही कर रहे हैं, लोग दुखी हैं कि विश्वनाथप्रताप सिंह राजीव जी की गुड बुक्स मे क्या आ गए, लोग दुखी हैं कि अर्जुन सिंह क्यो चुप है, लोग इसलिए भी दुखी हैं कि हम इक्कीसवी सदी मे जल्दी क्यो नही जा रहे हैं।

कोई एक दुख हो तो इसकी बात करें। जिधर निकलते हैं एक दुखी चेहरा दिखाई देता है। उदास उदास और गभीर-गभीर।

कधे पर लटकता झोला और उसमे ठसाठस भरे दुख। एक दुख खत्म हुआ कि लोग अपने झोले मे दूसरे दुख निकाल लेते हैं। फिर उसे अपने चेहरे पर पोत कर घूमने निकल जाते हैं। मैंने तो ऐसे लोग भी देखे हैं, जो दुखी ही पैदा होते हैं और दुखी ही मर जाते हैं। इस जीवन-यात्रा म वे अपना दुख सम्हाल कर रखते हैं, उसे अपनी डायरी के पृष्ठो पर लिखते हैं, छपवाते हैं और मर जाते हैं। मर इसलिए जाते हैं कि मृत्यु का कोई दूसरा विकल्प नही है। ऐसा करने से उन्हें आत्म-सतोष मिलता है और वे समझते हैं कि वे विशाल आबादी वाले इस देश के जागरूक नागरिक हैं।

पिछले दिनो एक विचित्र किस्म के दुखी प्राणी से मुलाकात हो गई, इस इलाके मे बारिश नही हुई थी इसलिए वे दुखी थे, यह बात और है कि हो भी जाती तो वे दुखी ही रहते। वे इतने दुखी लग रहे थे कि यदि

बारिश के कारण अकाल पड गया तो वे इससे पहले ही स्वग सिधार जाएँगे। मुझे देखकर उन्होंने अपने चेहरे पर दुख की पर्तों को और कुछ अधिक गहरा कर लिया। मैं समझा कि उनके घर पर कोई गमी हो गइ है। दाढी बढी हुई, बाल बिखरे हुए मला कुचला कुर्ता, कन्धे पर लटकता मर्वोदयी झोला। झोले म आज का अखबार और अखबार म अकाल के मँडराते बादल। पहले तो उन्होंने अपनी आँखो की पुतलिया को डबडबाया और फिर बाले—अब इस देश का क्या होगा ?।

देश की चिन्ता म दुखी होन वाल इस क्षेत्र के वे पहले आदमी थे। आदमी इसलिए कि दुखी हो सकते थे। जानवर होते तो नही हो सकते थे। मैंने कहा—आप चिन्ता क्या करते हैं देश की चिन्ता करन वाले दिल्ली मे बठे है।

उन्होंने जेब से रूमाल निकाला, उस आँखा पर फिराया और बोले—बात यह है कि कृषि प्रधान देश है हमारा और पानी गिरा नहीं है।

मैंन कहा—आपको क्या अन्तर पडता है। पानी गिर भी गया होता तो आपकी हालत तो वसी ही रहती।

वे बोले—चिंतित होना देश के हर नागरिक का कर्त्तव्य है और इसीलिए मैं चिंतित हूँ। हम देश की किसी समस्या पर अपनी आँखें नहा मूद सकते। चाहे लाभ हो या न हो।

थोडी देर व चिंतन करते रहे, बाले—पानी नहा गिरेगा तो फसल नहा होगी, और फसल नही होगी तो किसान दुखी होगा, दश के नेता दुखी होंगे, नेता दुखी होगे तो कई लोग उनके साथ दुखी होंगे, पूरा दश दुखी हो जाएगा, अकाल के बादल मँडरा रहे हैं इस क्षेत्र मे और आप कहते है हम दुखी न हो ? कसे हो सकता है ?

मैंने कहा—फिर क्या होगा ? वे बोले—पानी तो हम गिरा नहा सकते इसलिए बस केवल दुखी हो सकते हैं सो है जी।

मैंने सुझाव दिया—सरकार से लड तो सकते हैं कि जो सिंचाई योजनाएँ अधूरी पडी हैं उन्हें तुरत पूण करने के लिए प्रशासन तुरत कारगर कदम उठाए।

वे बोले—ये काम नेताओं का है। हम तो केवल मतदाता हैं। हमारा काम केवल दुखी रहना है।

मैंने कहा—लोगों को प्रेरणा दीजिए कि वे अपने परिश्रम से बांध बनाएं और अपनी फसलों को बचाएं।

वे बोले—यह काम भी देश के नेताओं का है। प्रेरणा देने वाले हम कौन होते हैं। हमारी आदत है कि प्रेरणा जब तक मुख्यमंत्री स्तर से नहीं मिली, हम उसे प्रेरणा नहीं मानते।

हमारी बातचीत और चलती लेकिन तभी एक दूसरे दुखी भाई आ गए। दो दुखी जब आपस में मिल बैठते हैं, तो दुख के सहारे अच्छा टाइम पास हो जाता है। दोनों अपने-अपने झोलों से दुख निकालते रहे और समय काटते रहे। एक दुख को वे इस बुरी तरह नोचते कि वह तार-तार हो जाता। वे फिर दूसरे दुख पर झपटते, दुखों का सिलसिला बहुत देर तक चला, मैं चला आया।

दूसरे दिन मुख्यमंत्री ने इस क्षेत्र को अकालग्रस्त घोषित कर दिया और सूखनी हुई फसल के प्रति अपनी संवेदना प्रकट करते हुए तत्काल राहत कार्य प्रारंभ किए जाने की घोषणा भी कर दी।

दुबारा जब इस दुखी आत्मा से मेरी मुलाकात हुई तो मैंने उन्हें पहले की अपेक्षा अधिक दुखी पाया। दाढ़ी पहले की अपेक्षा अधिक बढ़ी हुई। झोला पहले की अपेक्षा अधिक वजनी और चेहरा पहले की अपेक्षा अधिक गंभीर और दुखी। वे आदमी कम और 'सहकारी दुख भंडार' अधिक लग रहे थे।

मैंने सवाल करना चाहा लेकिन इससे पहले ही वे बोले—अब इस देश का भगवान ही मालिक है।

मैंने पूछा—क्यों? वे बोले—राहत कार्य खुल रहे हैं। लाखों रुपया शासन का फूंका जाएगा। राज दारू की बोतलें राहत कार्य के नाम से डाक बंगलों में खुलेंगी। रोज मंत्री राहत कार्य देखने आएंगे। कई मुर्गे कटेंगे। हम तो बस यही सोचकर दुखी हैं। भ्रष्टाचार की असली जड़ तो यही राहत कार्य हैं।

मैंने फिर कहा—लेकिन भूखे किसानों को तो काम मिलेगा। काम

के लिए जो पलायन हो रहा है, उसे राकना भी तो सरकार की जिम्मेदारी है। उनकी आर्थिक स्थिति मे सुधार के लिए आपको विचार करना चाहिए।

वे बोले—यह काम नेताओ का है। उन्हें वोट लेना है किसाना से तो उनकी आर्थिक स्थिति के बारे मे वे चिंतित हो। हमारा काम नही है। हम तो भ्रष्टाचार के लिए दुखी है। देखना कल से इस सडक पर सरकारी जीपें दौडने लगेंगी। हजारो रुपयो का डीजल जला दिया जाएगा केवल सर्वे के नाम पर। फिर राहत काय शुरू होंगे। फर्जी मस्टर रोल बनेंगे। चार आना किसान की जेब मे जाएगा और बारह आन का मुगा बनेगा रेस्ट हाउस मे। सब इजीनियर नई मोटर साइकल लेंगे। एक्जीक्युटिव इजीनियर नई मारुति कार लेंगे। यही होगा राहत काय मे। अब आप ही बताइए कि देश के जागरूक नागरिक होकर हम दुखी न हो तो क्या हो ?

इससे पहले कि मैं कुछ कहता मैंने दखा कि फिर दूसरे दुखी सज्जन झोला लटकाए इस ओर आ रहे हैं। चर्चा फिर गभीर चिंतन से गुजरेगी। दुखा का सिलसिला फिर एक नये दौर से गुजरेगा और 'एक से दो भले' वाले स्टाइल म वे फिर देश की चिन्ता म व्यस्त हो जाएँगे।

भुट्टे का सीजन और जिले की राजनीति

इस बार कुछ ऐसा हुआ कि इधर भुट्टो का सीजन शुरू हुआ और उधर राजनीतिक उथल-पुथल हो गई। चौक पर सिगडी जल रही है कोयले दहक रहे हैं और उसमे भुटटे उथल-पुथल हो रहे हैं। चड-चड की आवाज आ रही है और दाने फूट रहे हैं। जो लोग कभी फल्ली तेल और माटी राख से ऊपर नही उठे, वे भी विद्याचरण और विश्वनाथ प्रताप की बातें कर रहे है और भुट्टा भी चबा रहे हैं।

यह दृश्य एक ऐसे शहर का है जहाँ चार लोग भुट्टा खाने के मूड मे ही जमा हुए हैं। वे जमा नही होते लेकिन उनमे से एक ने कहा कि भुट्टे का पसा मैं दूँगा, इसलिए यह गोष्ठी जम गई। चार से मेरा मतलब ऐसे चार से है, जो किसी भी मुद्दे पर एक नहीं होत। मसलन यदि बात भुट्टा से ही प्रारभ करें तो एक का कहना यह था कि अब इस तहसील को जिले का दर्जा मिलना चाहिए। जब तक भैयाजी थे अडाते रहे, अब लाइन क्लियर है। दूसरे का कहना था कि अभी हम जिले के लायक नही हैं। यहाँ के भुट्टो मे टेस्ट बिल्कुल नही है। यदि जिला बन गया तो इन भुट्टो के कारण हमारी प्रोडक्शन वेल्यू कम हो जाएगी। तीसरे का मत था कि जिला चाहे बने न बने कोई भुट्टा खिलाने वाला पूरे सीजन भर मिलना ही चाहिए। हमे अपने भुट्टो से मतलब है, जिले से नहीं।

इन चारो मे चौथा आदमी बिल्कुल अलग तरह का था। क्योकि वह भुट्टा का पेमेन्ट करने वाला था, इसलिए सभी उसकी बात का समर्थन

कर रहे थे। आपको यह भी साफ बता दूँ कि यह ऐसा समर्थन नहीं है जैसा कि आजकल लोग कर रहे हैं। यह समर्थन भुट्टो से संबंधित है, किसी राजनीति से नहीं।

चौथे आदमी के बारे में लोगों की यह धारणा थी कि आज वह जो कुछ भी कहेगा, हम तीनों उसे मान लेंगे लेकिन यह जरूरी नहीं कि हम कल उसकी इस बात पर सहमत हों। जब तक भुट्टा जुबान पर है, उसकी बात का समर्थन करने में अपना जाता क्या है। इस चौथे आदमी का कहना था कि जिला बनने से सबसे बड़ा लाभ यह होगा कि यहाँ के नेता जिला स्तर के नेता कहलाने लगेंगे।

सब लोगों ने सहमति दी। चौथे आदमी ने कहा—और दूसरा फायदा यह होगा कि यहाँ एस० पी० और कलेक्टर आ जाएँगे।

सबने सहमति दी।

फिर चौथे आदमी ने कहा—एस० पी० हो जाने से व्यापारी लोगों के चंदे का रेट बढ़ जाएगा। अभी जो काम एक सौ एक में बनता है, वह जिला बनते ही एक हजार एक में होने लगेगा।

सब लोगों ने सहमति दी।

अब चौथे आदमी का कहना था—जिला बनने में यह तहसील जिला कहलाने लगेगी।

सभी सहमत हो गए।

फिर चौथे आदमी ने भुट्टे का पैसा चुकाया। जैसे ही उसकी जेब में पैसा निकला, एक ने कहा—हमको जिला नहीं बनवाना है। चंदा माँगने वालों से हम वैसे भी परेशान हैं।

दूसरा बोला—यहाँ के नेताओं को जिले के स्तर का बना भी दोगे, लेकिन उनकी चाल ढाल तहसील स्तर की ही रहेगी। फिर क्या फायदा जिला बनाने से।

तीसरे ने कहा—यह बात मेरी समझ में नहीं आ रही है कि जिला बन जाने से यह तहसील जिला कैसे कहलाएगी। तहसील आखिर तहसील रहेगी। एस० डी० एम० रहेगा कि नहीं? जब एस० डी० एम० रहेगा तो एक सौ एकवान तो रहेगा। फिर जिला कैसे हो गया? अरे दादा,

रहने दो तहसील। बेकार के मफड़े में हम व्यापारियों को क्या पड़ना।

चौथे ने जेब में रूमाल निकाल कर हाथ पोंछे। भुट्टे के ऊपर जो नमक और नींबू लगा था, उसमें हाथ चिपचिपे हो गए थे—इसलिए पोंछना जरूरी था। हाथ पोंछ कर उसने कहा—मजा नहीं आया। एक राउण्ड भुट्टे का और चलाते हैं।

तीनों तत्काल सहमत हो गए कि जिला बनना चाहिए।

कहने का मतलब यही है कि भुट्टे में जो ताकत होती है, उससे इंकार नहीं किया जा सकता। चाहे जिला बने या न बने, इस सीजन में यदि हम लोगों ने यह माँग नहीं उठाई तो लोग कहेंगे कि हमें अपने भुट्टा के अलावा नगर की प्रगति का कोई ध्यान नहीं है। इसलिए फिर जिला बनने पर बहस चलने लगी। यदि रात भर भुट्टा का दौर चलता तो यह बहस रात भर चलती। चौथा आदमी घर गहस्थी वाला था, इसलिए उसने कहा—अब मैं जा रहा हूँ। बाकी जिला कल बनेगा।

जो आदमी सिगड़ी पर भुट्टे सेंक रहा था, उसने चौथे आदमी को इस तरह देखा जैसे कहना चाहता था—दो भुट्टे बाँध दूँ ?

दुर्भाग्य से उसी समय मैं भी पहुँच गया। मैंने चौथे आदमी से पूछा—कहो, क्या समाचार है ?

वह बोला—तुम सुनाओ हम लोग तो भुट्टा खाने में मगन थे। कोई खास बात ?

मैंने कहा—प्रदेश की राजनीति में कोई फर्क नहीं आएगा, ऐसा लगता है।

वह बोला—कैसे नहीं आएगा जिला बन जाएगा तो भुट्टे का रेट नहीं बढ़ेगा ? हम लोग अभी अभी तो विचार कर रहे थे।

मैं इसलिए चौंक गया कि कहीं मुख्यमंत्री ने इस तहसील को जिला बनाने की घोषणा तो नहीं कर दी। मैंने पूछा—कब की न्यूज है ? प्रादेशिक समाचार में तो कुछ नहीं था।

मेरी बात का जवाब देने के बदले उसने कहा—लो भुट्टा खाओ क्या धरा है राजनीति में। जिनको सेंकना है सेंकते रहें भुट्टे। अपन तो खाने वाले हैं मुँह बन्द करने के लिए एक भुट्टा काफी है। क्या ?

उसने सोचा होगा कि उसकी बात का समर्थन मैं नहीं करूँगा इसलिए उसने तुरत कहा—भुट्टे का पेमेन्ट मैं करूँगा आप बिल्कुल चिन्ता मत करना।

जिस आदमी का भुट्टा खा रहे हो, उसके खिलाफ कुछ बोलना भी तो अच्छा नहीं लगता। उसने मेरे हाथ में एक भुट्टा दे दिया। फिर कहा—जिला बन जाने से दंगा के समय पुलिस फोर्स बुलाने की झंझट नहीं रहेगी। पुलिस फोर्स तो रहती है ना जिले में? क्यों?

मैंने कहा—अभी राजनीति बहुत गर्म है। जिले विले की तरफ कोई ध्यान नहीं देगा। सबको अपनी फिकर है।

उसने कहा—फिकर किस बात की? अरे भई, कह दिया ना कि पेमेन्ट मैं करूँगा।

हमारी बात चल ही रही थी कि एक नेता जी आ गए। उन्होंने एक भुट्टे का आर्डर दिया और मुझसे बोले—यार रैली तो जोरदार थी। साठ आदमी ले गया था मैं अपनी तरफ से लेकिन

मैंने कहा—लेकिन क्या?

नेता जी बोले—पेमेन्ट मुझे ही करना पड़ गया।

चौथा आदमी नेताजी की ओर देखकर मुस्कराया। जैसे कहना चाहता हो—भुट्टे और राजनीति में कोई खास फर्क नहीं रह गया है। पेमेन्ट करोगे तो समर्थन भी मिलेगा।

लेकिन चौथे आदमी ने ऐसा कुछ नहीं कहा। मेरी ओर देखते हुए बोला—यार, ये बताओ इन भुट्टे के दानों में क्या कमाल है? सिगड़ी में भी डाल दो तो अलग नहीं होते। चड़-चड़ करते रहेंगे लेकिन साले ऐसे चिपके रहते हैं बस। जिला बनने के बाद भी यही हालत रहेगी इन भुट्टों की। क्यों?

चौथे आदमी के बारे में पहले मेरा विचार था कि वह राजनीति नहीं समझता लेकिन उसकी बात सुनकर मुझे लगा कि भुट्टों के इस सीजन में जिला बनाने की घोषणा हो गई तो इसका श्रेय वह जरूर ले लेगा।

मगलू-बुधराम

पता नही क्या हुआ कि दादा साहब अचानक ताव खा गए, बोले—ये मगलू बुधराम देश को खा जाएँगे।

मैं जिस समय कमरे मे घुसा उस समय खान साहब, वर्मा जी और एक काले कोट वाले सज्जन थे जिन्होंने माथे पर लबा चन्दन का तिलक लगा रखा था, सुविधा के लिए उन्हे आप चदन वाले कह सकते हैं। मैंने चारो सज्जनो की ओर देखा। वे लगभग मौन थे। अलबत्ता चन्दन वाले सिगरेट पी रहे थे और इस स्टाइल से पी रहे थे कि उन्हे मालूम था कि ये मगलू बुधराम कौन हैं।

मैंने दादा साहब से पूछा—क्यो दादा, ये मगलू-बुधराम कौन हैं? केन्द्र वाले या प्रदेश वाले?

दादा साहब दाँत का सेट घर पर छोड आए थे। मुझे ध्यान ही नहीं रहा कि इस बीच एक छोटी सी बीडी उनके मुह मे कहाँ से आ गई। बीडी बुझी हुई थी और लगभग लाल धागे तक जल चुकी थी। एक बार उन्होंने बीडी का धुआँ अदर खीचने के लिए दोनों गालो को काफी अदर तक दबाया लेकिन बुझी हुई बीडी से क्या निकलने वाला था। आग होती कही तो धुआँ भी होता।

मैंने प्रदेश की बात की तो खान साहब बोले—काग्रेस अध्यक्ष ने हमारा निष्कासन रदद कर दिया है। अब हम देखते हैं कि कौन बचता है अनुशासन की कायवाही से। कल मीटिंग बुलाते हैं काग्रेस की जो नही आएगा उसका बाजा बजाते हैं।

दादा साहब ने मेरे सवाल की ओर ध्यान ही नही दिया था। खान साहब से बोले—किसने ले लिया तुम लोगो को काग्रेस मे वापस ?

तभी वर्मा जी ने जेब से एक लिफाफा निकाला और बोले—ये रहा कागज साफ लिखा है कि निष्कासन रद्द किया जाता है।

दादा बोले—कोई भी मगलू बुधराम कागज भेज देगा तो हम नही मानने वाले। तुम लोग अब काग्रेस म हो ही नही।

इस बार मैं विचार म पड गया कि ये मगलू बुधराम आखिर हैं कौन ? मैं बात को पकडने की कोशिश कर रहा था। और जैसा मैंने समझा कि उन लोगो के बीच जो बहस हो रही थी, उसम व्ही० सी० व्ही० पी० और मगलू बुधराम ही प्रमुख थे। उसका कारण यह था कि बात-बात मे वर्मा जी और खान साहब व्ही० सी० व्ही० पी० का नाम लेते थे और हर बार दादा साहब मगलू-बुधराम का रिफरेंस देकर बात को घुमा देते थे।

फिर बीच मे देश का जिक्र भी आता था तो मैंने अदाजा लगाया कि हो न हो वे अपने देश की ही बात कर रहे हैं।

चदन वाले जो अब तक चुप थे, बोले—जहाँ मगलू-बुधराम रहगे, वहाँ की स्थिति गभीर ही रहेगी। अपने इलाके मे काग्रेस की स्थिति सालिड है। आज भी यदि मध्यावधि चुनाव होते हैं तो काग्रेस जीतेगी।

दादा साहब फिर ताव खाकर बोले—फालतू बात है। जनता लहर जब चली थी तो जहाँ देखो वही मगलू-बुधराम जीत रहे थे। बस यही स्थिति होने वाली है। जनता त्रस्त है इसीलिए भैयाजी कहते हैं कि मिड-टम पोल नही होना चाहिए। मरे हिसाब से वे ठीक हैं।

मैं फिर चक्कर में पड गया कि ये जनता वाले' मगलू-बुधराम कौन हैं ? एक बार तो मुझे कोफ्त भी हुई कि साले सबको परेशान कर रहे हैं। मैं बात को पकडने की कोशिश करता तो मगलू-बुधराम बीच म आकर गडबड कर देते थे।

वर्मा जी ने जेब से एक बड के पत्ते म लिपटा पान निकाला और मुह म दबा कर बोले—करा लो आज चुनाव। भैयाजी जहाँ हैं काग्रेस वहाँ ?

मैंने भी कहा—मगलू-बुधराम के कहने से क्या होता है 'बीच म मुह मत मारो बात गभीर है' वर्माजी ने मुझे घूर कर देखा। वे कुछ कहना चाहते थे, लेकिन केवल इतना कह पाए कि अचानक [illegible] मैं समझ गया कि तनाव चढ़ गई है। हम जहाँ बैठे थे, वहीं एक [illegible] का घडा रखा था जिस पर एक चघू पानी निकालने के लिए रखा था। मैं समझ गया कि जो चारों महारथी पानी पी-पी कर आज की राजनीति पर बहस करने पर तुले हैं। खान साहब बीच मे वर्मा जी से बोले—एक गिलास पानी मार लो, अभी बात तय नही हुई है। हम कहते हैं कि असली काग्रेसी तो हम ही हैं।

दादा साहब बोले—किसन कह दिया कि असली तुम हो ?

इस बार खान साहब ने जेब से लिफाफा निकाल कर दादा साहब के सामने रखी टेबल पर पटक दिया। बोले इसे देखिए और आँख खोलकर देखिए। काग्रेस के महामत्री ने जो आदेश भिजवाया है, वह प्रदेशाध्यक्ष के आदेशानुसार भिजवाया है।

दादा साहब ने चश्मा जरा नाक पर ऊपर की तरफ उठाया, कागज को देखा और बोले—प्रदेशाध्यक्ष के नाम से कोई भी मगलू बुधराम दस्तखत करके कागज भिजवा देंगे तो हम उसे नही मानेंगे।

मैं सोच रहा था कि इसके जवाब म दादा साहब कहेगे कि मगलू-बुधराम की भर्त्सना से क्या होने वाला है लेकिन दादा साहब ने इस बार ऐसा नही कहा। उनका ऐसा नहीं कहना मेरे मन मे सदेह पैदा कर गया कि हो न हो ये मगलू बुधराम बहुत चालाक किस्म के लगते हैं जो मौका देखकर ही बातो के बीच मे आते हैं।

अचानक चदन वाले साहब को कुछ सूझा और वे बोले—जोगी जी और प्रदेशाध्यक्ष खूब दौरा मार रहे हैं। जरूर कुछ उठापटक के चक्कर म हैं। अभी ठाकुर साहब दिल्ली से आए थे तब भी माहौल बडा गम था।

इस बार फिर दादा साहब ने मगलू बुधराम का जिक्र नहीं किया। बोले—राजनीति भ्रष्ट हो गई है। अपने स्वार्थ के लिए लोग क्या क्या नहा कर रहे हैं। अरबो रुपया पानी की तरह बहाया जा रहा है। जो कुर्सी पा जाता है केवल बटोरने की ही बात सोचता है। जुम्मा जुम्मा

आठ दिन नही हुए राजनीति मे आए और ऊँचे पद और पावर का सपना देखने लगे। भाड मे जाए जनता और भाड मे जाए ईमानदारी।

खान साहब बोले—नैतिकता तो हम ही उठा रहे हैं। यह लड़ाई ही नैतिकता की है।

तभी वर्मा जी ने टेबल पर से लिफाफा उठाया। मुझे लगा कि खान साहब के साथ वर्मा जी भी नैतिकता को उठा रहे हैं। मैं कहना चाहता था कि मगलू-बुधराम के भरोसे देश की नैतिकता ऊपर नही उठेगी। कागजो और दस्तखतो के आधार पर ही जहाँ नैतिकता की बात होती हो वहाँ कहा भी क्या जा सकता है। तसल्ली के लिए भले ही हम नतिकता को ऊपर उठा लें लेकिन जिस दिन एक नया लिफाफा आएगा—सारी नैतिकता धरी की धरी रह जाएगी।

चदन वाले साहब अब भी चुप थे। मौन बैठे वे कुछ सोच रहे थे।

मैंने सोचा—कही इस चदन के पीछे भी कोई मगलू बुधराम तो नही है?

मैं दादा साहब की ओर देख रहा था। दादा साहब मुस्कुराए और ढीली सफेद पतलून की जेब से बीडी का बडल निकालकर बीडी सुलगाने के लिए जेब मे माचिस टटोलने लगे। मेरी इच्छा हुई कि एक बार उनसे पूछूं कि आखिर ये मगलू-बुधराम रहेंगे कब तक देश मे? लेकिन मैं यह सोचकर चुप रह गया कि जब तक राजनीति रहेगी मगलू-बुधराम तो रहेंगे ही। उन्हें न आप रोक सकते हैं और न मैं, और न दादा साहब।

बाबू की साइकिल

मुझे आपको यह बताते हुए अपार हर्ष हो रहा है कि आजादी के बा
हम तेजी से विकास कर रहे हैं। अभी अभी देवागन बाबू की साइकिल
कचहरी मे वकीलो के कमरे के सामने से चोरी हो गई। किसी की जमानत
के सिलसिले मे आए थे।

ठीक है आए थे, लेकिन वकीलो के वार रूम के सामने साइकिल खड
करने की क्या जरूरत थी? पचास तरह के लोग आते हैं वकीलो के
पास। किसी के चेहरे पर लिखा तो नही होता कि यह दीवानी वाला है
या फौजदारी वाला। देवागन बाबू, आप तो पोस्ट आफिस और कचहर
को एक ही तराजू पर तौल रहे हो। बहुत अन्तर है बाबू साहब। अब
पता चला कि जमानत करवाने म क्या-क्या कष्ट झेलने पडते हैं? मै
जानता हूँ आपको अतरात्मा आपको कोस रही होगी कि आप साइकिल
लेकर कचहरी क्या आए। पैदल आ जाते तो पाँच सौ चालीस रुपये की
हीरो तो बच जाती। चाहे जमानत होती या नहीं होती, आप पर सक्ट
का पहाड तो नहीं टूटता।

देवागन बाबू कभी मुझे और कभी वकीलो को देख रहे हैं। मैंने
सोचा कि इस आदमी को सात्वना की जरूरत है। सात्वना नही मिलेगी
तो इसकी धारणा विकासशील कार्यों के प्रति बिल्कुल उठ जाएगी। यही
सोचकर मैंने कहा—धीरज रखो देवागन बाबू हिम्मत से काम लो
इस तरह दिल छोटा नही करते मिल जाएगी आपकी साइकिल। कोई
पहचान का ले गया होगा चलो आपको चाय पिलाते हैं।

मैंने महसूस किया कि देवांगन बाबू के चेहरे पर गहन चिंतन के भाव हैं। चेहरे पर एक भाव आता है, थोड़ी देर टिकता है और उतरकर जाने लगता है तो दूसरा भाव आ जाता है। वे क्षितिज की ओर शून्य दृष्टि से धरती से लेकर आसमान की ओर देख रहे हैं। हो सकता है उसी तरह से उनकी साइकिल पर कोई आता हो। आँखें स्थिर रहती हैं। आठों दिशाओं में घूम रही हैं। उत्तर से होती हुई पूर्व और दक्षिण से होती हुई वकीलों के दफ्तर के सामने ठहर जाती हैं। 'कागा सब तन खाइयो चुन चुन खाइयो मांस दो नैना मत खाइयो '

देवांगन बाबू आस लगाए बैठे हैं। एक कागा वकीलों के कमरे की छत पर बैठता है। देवांगन बाबू उसकी ओर देखते हैं। क्या पता अपने दुख में किसी पर भरोसा नहीं किया जा सकता। कहीं ऐसा न हो कि कचहरी के वकील कमरे से कागा उड़े और देवांगन बाबू से कहे—चश्मा उतारो बाबू साहब मैं तुम्हारे दो नयना खाऊँगा, बहुत चला चुके अपनी साइकिल।

आपको हँसी आ रही होगी। जिसकी साइकिल चोरी होती है वही जानता है कि हीरो साइकल की कीमत पाँच सौ चालीस रुपया है। कैरियर, सीट और पटी अलग। दूसरों के दुखदर्द में हँसने वालों की कमी भी नहीं है। किस किस को मना करोगे देवांगन बाबू ? हँस लेने दो। जिस दिन उनकी जाएगी उसी दिन उन्हें समझाना कि कचहरी पर बैठा हुआ कागा भी कोई मामूली कौवा नहीं है। लैंड रेवेन्यू कोड से लेकर कांस्टीट्यूशनल ला पर होने वाली बहस छत पर बैठे-बैठे ही सुन लेता है।

आपको लग रहा होगा कि साइकिल देवांगन बाबू की चोरी हुई और विक्षिप्त मैं हो गया हूँ। जो मन में आ रहा है लिख रहा हूँ। कागा, देवांगन बाबू का तन और दो नैना से साइकिल चोरी का क्या तारतम्य ? चोरी हो गई तो थाने जाओ और रिपोर्ट लिखवाओ। जिस पर शक हो, उसके नाम से नामजद रिपोर्ट डलवा दो। इस तरह क्षितिज की ओर शून्य दृष्टि से निहारने से साइकिल तो नहीं मिल जाएगी ? निहारना ही है तो टी० आई० की तरफ निहारो तो कुछ फायदा भी होगा।

बस, यही तो फर्क होता है आम आदमी और साहित्यकार में। हम क्षितिज की ओर निहारते हैं और आप थानेदार की तरफ। भाई साहब,

वे नहीं सोचते कि चलो बेचारे देवागन बाबू का हौसला बढ़ाएँ इसी गम मे कहीं कुएँ मे कूद जाता तब ? कोई लखपति आदमी नहीं है बेचारा। पैसा पैसा बचाकर हीरा साइकिल खरीदी है।

दवागन बाबू चुप हैं। मैं समझ रहा हूँ। लेकिन इस आदमी को चाय पिलाकर नारमल करना उतना ही जरूरी है जितना एक भड़के हुए मत्री का पुचकार कर नारमल करना। स्थिति यह है कि देवागन बाबू कुछ भी कर सकते हैं। मैंने उन्हे चाय की दुकान की ओर ले जाते हुए पूछा—ताला क्यों नहीं लगाया था साइकिल मे ?

मैंने यह सवाल कुछ इस तरह पूछा था कि आप तो जानते हैं कि आज हम किस सकट की घड़ी से गुजर रहे हैं। सतर्क नहीं रहेंगे तो कुछ भी नहीं बचेगा हमारे पास।

देवागन बाबू की वाणी लौट आई थी। बोले—कल भी कचहरी आया था साइकिल तीन घटे खड़ी करके जमानत के चक्कर मे वकीलो के पीछे घूमता रहा। आज भी साइकिल वैसे ही खड़ी कर दी।

मैंने कहा—आज और कल मे बहुत बड़ा फर्क होता है दवागन बाबू। दख रहे हो अपनी रक्षामत्री को ? कल कहाँ थे आज कहाँ है ? एक दिन म बहुत कुछ हो जाता है इस दश मे। ताला मार दते तो यह नौबत ही क्या आती।

चाय आ गई थी। दवागन बाबू ने चाय को भी शून्य दृष्टि से देखा। जैसे आखिरी बार देख रहे हो। मैं समझ रहा था कि दवागन बाबू जिस अतर्वेदना से छटपटा रहे हैं, उसे कोई लखक ही समझ सकता है। मैंने कहा—थाने मे रिपोर्ट तो डलवा ही दो।

उनकी आँखो मे 'अब क्या फायदा जो होना था सो हो गया' वाले भाव तैर रहे थे।

तभी अचानक दवागन बाबू की आँखो म चमक आ गई। चाय की दुकान पर साइकिल रुकी। उस पर स एक आदमी उतरा। उसने साइकिल का ताला लगाया और पास रखी कुर्सी पर बठ गया। देवागन बाबू फिर निराश हो गए। बोले—मेरी साइकिल का सीट कवर नीला था।

मैं सोचता हूँ कितने भोले हैं अपने देवागन बाबू ! सोच रहे है कोई

आएगा और उन्हे साइकिल देकर कहूंगा—देवागन बाबू, मुझे क्षमा कर दो मैं अपने रास्ते से भटक गया था आपकी साइकिल चोरी से ले गया था सोचा था इसे बेचकर अपने बच्चो के लिए चावल लाऊँगा तभी मेरी आत्मा ने मुझे धिक्कारा और कहा—'शर्म नही आती ? चालीस साल की आजादी मे यही सीखा तुमने ? चोरी की साइकिल से बच्चो का भविष्य सुधार रहे हो ? बच्चो के सस्कार बिगाडने का तुम्हे क्या हक है ? जाओ, देवागन बाबू से माफी मॉगो और उन्हें साइकिल वापस दो, इसीलिए आ गया आपके पास। मुझे माफ कर दो दवागन बाबू अब हमारी आत्मा जाग गई है, हमारे सस्कार, हमारी सस्कृति जाग गई है आज से अपनी साइकिल का ताना निकाल कर फेंक दो लो अपनी साइकिल और मुस्कुरा दो एक बार।

दवागन बाबू ने बे मन से चाय पी। बोले—'देखता हूँ शायद '

वे तेजी से बाहर निकले। कचहरी पर बठे कागा को उन्होने उडती नजर से देखा और कचहरी मे वकीलो के कमरे के सामने खडे होकर इधर-उधर देखने लगे।

मुझे अब लगा कि हम सब उसी दिन की प्रतीक्षा मे जी रहे हैं। देश तेजी से विकास कर रहा है। देखें, वह दिन कब आता है जब हमे तानो की जरूरत ही नही रहेगी।

जया बेन की राखी

दो मजेदार समाचार पढ़ने को मिले। विमान परिचारिका शीला पटेल के बाल छ फुट तीन इंच लम्बे हैं। इन समाचार का अपनी जया बेन से कोई संबंध नहीं है इसलिए आप किसी गलतफहमी में न रहें। दूसरा समाचार यह था कि जया बेन ने खाद्यमंत्री कन्हैयालाल शर्मा को राखी बाँधी। अब परम्परा के अनुसार बहन की रक्षा करना भइया का कर्त्तव्य हो गया है। टिकट वितरण के समय भूल मत जाना भइया इस बहन को हाँ।

कभी-कभी हमारे प्रधानमंत्री इस क्षेत्र की बहनों पर संकट लाते हैं। मैं कहता हूँ कि अपने विद्या भइया को रक्षा बंधन के बाद विदा करते तो हमारी बहन को आज यह संकट नहीं होता। लेकिन चलो विद्या भइया न सही, कन्हैया भइया ही सही। अपने लिए तो जो सत्ता में रहे, वही भइया।

शीला बेन को अपने बाल सँवारने में रोज एक घंटा लगता है। वैसे लम्बे बाल ही भारतीय नारी की गरिमा हैं लेकिन राजनीति में किसे फुरसत है कि एक घंटे तक कंघी चोटी करती रहे। आस्था रैली निकालो, लोगों को ट्रकों में भरकर लाओ, दिन भर हाय हाय करो। कंघी चोटी करते रहें कि यह सब देखें? हमारी बहन बेचारी दिन भर क्षेत्र के विकास के लिए इधर उधर दौड़ धूप करती रहती हैं। फिर राजनीति में तो वैसे भी बाल झड़ ही जाते हैं। सिर पर बड़ा खोपा होना कोई जरूरी भी नहीं है। अब आप घंटा भर बाल बनाने में लगा देंगी तो क्या

शर्मा जी स्वागत के लिए खडे रहेंगे ? कहने का मतलब यह कि राजनीति म बडी जिम्मदारियाँ होती हैं। कभी चोटी करत बैठे रहोगे तो रिसर्फलिंग म भी पीछे ही रह जाओगे।

शीला बेन उपवास रखती हैं बाल बढान के लिए और हम उपवास रखते हैं फल की इच्छा के लिए। मैं तो बहनो से निवेदन करता हूँ कि व इस मामले मे अपनी जया बन से प्रेरणा लें। आपको लग रहा होगा कि मैं विषय मे भटक गया हूँ। हम लेखको के साथ दिक्कत यह होनी है कि हम कल्पना लोक म खो जाते हैं। मुझे लग रहा है कि शीला बेन मेरे सामने खडी है। ऊँचाई पाँच फुट तीन इच। उसके हाथ म एक दजन केले हैं। एक थरमस मे भस का ताजा दूध है। यही राज है लम्बे बालो का। कही विमान मे उतरते उतरते जूडा खुल जाए तो किसी यात्री को उसके एक फुट बाल हाथ म उठाने पड जाएँगे। हम जैसे लोग विमान मे क्या वैठेंगे और क्या शीला बेन के बाल थामेंगे। अपनी-अपनी किस्मत है।

अचानक यह कल्पना जया बेन की राखी मे शिफ्ट हो गई। यह तो तय है कि अपनी बहन न राखी बाँधी है। नहीं बाँधी होती तो सबके सामने मच मे घोषणा नहीं करती। ये राजनीति की राखियाँ है बिना मचो की घोषणा के सार्थक भी तो नहीं होती। मेरे मन म यह कल्पना आइ कि यह रक्षाबंधन समारोह निपटा कैसे होगा ? यदि कोइ व्यग्य का जागरूक पाठक मुझस चुनौती देकर यह कहे—'अब लिखो जया बेन की राखी पर तब जानें। वैसे तो अगडम-बगडम बहुत लिख रह हो ' तब मुझे क्या लिखना होगा इसी बात की कल्पना कर रहा हूँ मैं।

आ गए शर्मा जी। सोफे पर बठे हैं। जया बेन एकदम व्यस्त हैं। कहती हैं—अरे लाडवो वाडवो छे के नईं ?

भइया को राखी बाँधते समय बहन को मुँह मीठा करवाना पडता है इसलिए स्वाभाविक है कि क्षेत्र के विकास के साथ-साथ इस बात की भी जानकारी रखना है कि लडडू वडडू हैं कि नहीं। खाद्यमत्री को बाजार का लडडू थोडे खिला सकते हैं। कोई स्कूल के बच्चे तो हैं नहीं कि तेल की बदी का लडडू खाकर भारतमाता की ज और वन्देमातरम के नार लगाते रहेंगे। हमारी बहन जानती हैं कि शर्मा जी को तो देसी घी का 'लाडवा'

ही खिलाना पड़ेगा। व दूसरा सवाल करती हैं—राखी क्या राखी दोगी ?

इस साल रक्षा बंधन पर ऐसी स्थिति आ गई है कि राखी खोजनी पड़ रही है। दरअसल, अभी तक तो तय ही नहीं था कि इस बार किस बांधना है। जब तक अपने विद्या भइया थे, इस बात की फिकर ही नहीं थी। अपने क्षेत्र के हैं तो कभी भी जाकर बांध देंगे। लेकिन अब कहीं धोखे से बांध दिया तो राखी में साड़ी मिलने के बदले निष्कासन ही मिल जाएगा। फिर ?

शर्माजी नाथूरामजी के साथ गप मार रहे हैं। नाथूरामजी अपनी समस्याएँ भी बता रहे हैं और राजीव गांधी पर आस्था भी व्यक्त करते जा रहे हैं। दोनों काम एक साथ चलने से बातचीत में टाइम की भी बचत होती है।

बेन हाथ में थाली लिए आती हैं। थाली में दो लड्डू, एक राखी जलता हुआ देसी घी का दीया, चावल के दाने रखे हैं। शर्माजी अपने खाद्य मंत्री हैं इसलिए चावल के दाने नहीं रखे हैं। रक्षा बंधन में रखना ही पड़ता है। चावल के दाने का टीका लगाना पड़ता है बहन को। जया बेन कहती हैं—अरे पाटला क्या छे ?

शर्माजी पूछते हैं—ये पाटलो क्या है ?

जया बेन मुस्कराती हैं। कहती हैं—पाटला यानि पीढ़ा राखी बँधवाने के लिए पीढ़े पर बैठना पड़ता है। यू सोफा नहीं चलेगा आ जाइए नीचे।

शर्माजी कहते हैं—यहीं सोफे पर बैठे-बैठे बांध दो पीढ़े-पाट की झंझट छोड़ो कार्यक्रम वैसे भी लेट हो रहा है।

राजनीति में थोड़ा परम्पराओं को फ्लेक्जिबल करना ही पड़ता है। यही सोचकर बहन ने आरती उतारी और कलाई पर बांध दी राखी।

शर्माजी बोले—बोलो कौन-सी साड़ी लोगी ? बात यह है कि हम जल्दी जल्दी में भोपाल से निकले, तो हमारा ध्यान नहीं रहा।

बीच में नाथूरामजी बोले—ध्यान कैसे रहता आप तो तहसीलें बाँटने आए हैं, कोई राखी बँधवाने थोड़े आए हैं।

इस पर एक ठहाका लगाकर शर्माजी ने आनन्द लिया। वह इसलिए

कि वहाँ बैठे लोगों को यह न लगे कि शर्माजी बिल्कुल गंभीर रहने वाले ही है, जैसा कि फोटो म दिखते है।

बहन बोली—मैं इस बार साडी नही लूगी।

शर्माजी बोले—फिर क्या लोगी ?

बन ने पहले नाथूरामजी की ओर देखा, फिर वहाँ उपस्थित भाई वालो की ओर देखकर बोली—मुझे जिला दे दो।

शर्माजी बोले—बहन, तुमने तो बडी महँगी चीज माँग ली।

बहन बोली—देना हो तो दो, नही तो रहने दो मुझे कुछ नहीं चाहिए। बस मेरा भइया जुग जुग जिए।

पता नही शर्माजी किसी दुविधा मे पडे या नही लेकिन उन्होंने यह जरूर सोचा है कि जब लोगो को इतनी तहसीलें बाँट रहे हैं तो दे दो एक जिला अपनी बहन को, लेकिन वे बोले—ठीक है, अभी जिला गठन आयोग इस दिशा मे कायरत है इसलिए कुछ भी मच पर कहना उचित नही है अगली बार जब राखी बँधवाने आऊँगा तो तुम्हारे लिए जिला लाने की कोशिश जरूर करूँगा अब तो तुम्हारा भाई होने के नाते इस ससद क्षेत्र के प्रति मेरा भी कुछ उत्तरदायित्व बनता है।

बाहर माइक पर तेज आवाज से गाना बज रहा था—भइया मेरे राखी के बधन को निभाना छोटी बहन को ना भुलाना।

एक बैरंग नीर-क्षीर

अपने इस क्षेत्र की यही विशेषता है कि यहाँ नाना प्रकार के आदमी पाए जाते हैं। आपको याद होगा कि पिछली बार मैंने आपका एक विचित्र किस्म के आदमी का किस्सा बताया था। याद है आपको ? आप कहीं जा रहे थे तो मैंने आपको रोका था। याद आया ? फिर मैंने आपसे बातें की और आपने मुझसे पूछा भी कि क्या आप ही लतीफ घोंघी हैं ? तो मैंने कहा था कि मैं ही हूँ। याद आया ? फिर मैंने उस विचित्र आदमी के बारे में एक व्यंग्य भी लिखा था जिसे आपने पढ़ा था। याद आया ? नहीं आया तो जाने दीजिए। लेकिन बहुत विचित्र था न वह आदमी ? कहीं से आदमी ही नहीं लगता था। अब भी याद कर लीजिए। याद आ जाए तो आपको मजा आ जाएगा। नहीं याद आता ? मारिए गोली।

कुछ इसी तरह अट शट लिख कर मैं यह नीर-क्षीर आपके सिर पर थोपने वाला था। इन दिनों मैं ऐसा ही कर रहा हूँ। आँय-बाँय शाँय तीन मुख्य तथ्यों को ध्यान में रखकर ही लिखता हूँ। देखिए, पोस्टमैन आ गया, अब जरूर वह मुझे बैरंग टिकाएगा। सच कहता हूँ, मैं तो इन बैरंग वालों के मारे परेशान हो गया हूँ। कुछ कानून कायदा पढ़ते ही नहीं। पोस्ट आफिस वाला ने लिफाफे का भाव बढ़ा दिया है और वे मित्रता के नाम पर पचास पैसे की टिकट लगा कर ही पत्र पर पत्र ठोके जा रहे हैं। सीधा एक रुपया लगता है। दोस्ती में भुगत रहे हैं।

पोस्टमैन नम्रतापूर्वक बोला—एक रुपया बीस पैसा।

इतना विनम्र आदमी मैंने पहले कभी नहीं देखा। मुस्कुराएगा और

एक रुपया बीस पैसे निकाल लेगा आपके खीसे मे।

मैंने—कहा पहले बताओ किसका पत्र है?

वह वाला—भेजने वाले का पता नही लिखा है। एक रुपय बीस पैसे का सवाल है। पूरा करते हो या दूसरे दरवाजे पर जाऊँ।

इसे कहते है फकीरी अदाज, देना हो तो दो, नही तो तुम्हारे भरोसे पोस्टल डिपार्टमेन्ट नही चल रहा है। हम सीधे भेज देंगे उसी आदमी के पास जिसने बैरग भेजा है। थक मारकर एक रुपया बीस पैसे देकर छुडाएगा, और आपको दस गाली भी देगा।

यही सोच कर कि कौन दोस्तो की गालिया पीठ पीछे खाए, मैंने लिफाफा छुडा लिया। खोलकर देखा तो एक दोस्त का पत्र था। केवल दो लाइन का। लिखा था—क्षमा करना मित्र, मैं उस दिन आपके यहाँ नही आ सका। आशा है कि आप क्षमा कर देंगे—आपका।

अब आपका नाम बताने से क्या फायदा, ऐसे दोस्त तो बाहों के बारा मिल जाएँगे, साठ पैसा प्रति लाइन लिखने वाले इस दोस्त के साथ क्या व्यवहार किया जाए, आप ही बताइए? एक जमाने मे यही सवाल सिकन्दर ने पौरव से किया था। जो उत्तर पौरव ने दिया वही उत्तर देने की मेरी इच्छा भी होने लगी।

मैंने भी दो लाइन का पत्र लिख दिया—आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि मैंने क्षमा कर दिया है। भविष्य मे भी क्षमा का अवसर देते रहे।

एक हफ्ते बाद फिर बैरग आया तो मैं समझ गया कि यह सिकन्दर का ही होगा। मेरे इस व्यवहार से वह गदगद हो गया होगा और उसने बैरग मेरे नाम से फिर मार दिया होगा।

मैंने यही सोच कर बैरग छुडा लिया कि आदमी को व्यवहार कुशल होना चाहिए। लेकिन मुझे आश्चर्य हुआ कि यह पत्र किसी दूसरे ही सिकन्दर का निकला। लिखा था—आप इन दिनो बहुत घटिया लिख रहे हैं। *कृपया पाठको का समय बर्बाद न करें। एक जागरूक पाठक।*

अरे गुरु हम तो एक रुपय बीस पैसे की चोट देकर अपनी जागरूकता दिखा दी तुमने अब आप बताइए यह जागरूक पाठक कौन हो सकता है? जिस आदमी को साहित्य में घटिया और बढ़िया की तमीज हो वह जरूर

कोई साहित्यकार ही हो सकता है। एक रुपये बीस पैसे का बैरंग टीप कर वह साहित्य को ऊँचा उठाकर लेखकों को बढ़िया लिखने की प्रेरणा दे रहा है। मैंने बहुत कोशिश की कि कहीं पता लिखा हुआ मिल जाए तो मैं इस जागरूक पाठक के साथ भी व्यवहार निभा ही दूं। लेकिन जागरूक पाठक यदि अपना पता दे तो उस जागरूक कहेगा कौन ? जागरूक पाठक तो बिना पते वाले ही होते हैं। जब इच्छा हुई बरंग लिख कर अपनी जागरूकता दिखा दी।

तीन दिन बाद फिर एक बैरंग आया। पहले तो मैंने सोचा कि बैरंग छुड़ा कर पोस्टल विभाग को समृद्ध करने का यह उपक्रम अब बंद ही कर देना चाहिए बहुत हो गया। अपनी आय का काफी हिस्सा पोस्टल व्यवस्था को देने के बाद अब तो मेरी भी आर्थिक स्थिति लड़खड़ा गई थी।

पोस्टमैन फिर नम्रता से बोला—एक रुपया।

मैंने सोचा, चलो बीस पैसे की छूट मिल रही है तो छुड़ा ही लेते हैं। अपने देश में ऐसे उदार लोग भी हैं जो लिफाफे पर पचपन पैसे लगा कर छोड़ देते हैं। ऐसा करने से लिफाफा रजिस्टर्ड ए० डी० का इफेक्ट देता है। जरूर कोई बढ़िया और फायदेमन्द पत्र होगा। थोड़ी देर तो वही स्थिति बनी हुई थी जो किसी कहानी में नायक की उस समय होती है जब उसकी प्रेमिका के पाणिग्रहण संस्कार का आमंत्रण उसे मिलता है। वह सोचता है इस बेवफा औरत के पास जाऊँ या नहीं जाऊँ ?

यही स्थिति मेरी थी—छुड़ाऊँ कि नहीं छुड़ाऊँ !

पोस्टमैन बोला—क्या हुक्म है मेरे आका।

मैंने अलादीन की स्टाइल में एक रुपये को रगड़ा और उसकी ओर बढ़ा दिया।

अब एक रुपया दिया था तो पत्र खोल कर पढ़ना भी जरूरी था, नहीं तो यह रकम भी वेस्ट हो जाती। पहले तो लिफाफा देख कर मजमून भाँपने की कोशिश की लेकिन जब लिफाफा बैरंग होता है तो मजमून भाँपना बहुत कठिन होता है। इसलिए सोचा, हटाओ यह भाँपने दाँपने का चक्कर। भाँप भी लेंगे तो कौन-सा उद जल जाएगा। ८ ५

निकल ही गया है।

पत्र फिर उसी जागरूक पाठक का ही निकला। लिखा था—आपको मैंने एक पत्र लिखा था जिसमे लिखा था कि आप बहुत घटिया लिख रहे हैं। बाद म जब मैंने गौर से आपको पढा तो लगा कि आप तो बढिया लिख रहे हैं। आपकी कई व्यग्य रचनाएँ मैंने पढ़ी हैं। सचमुच बहुत अच्छा लिखते हैं आप। जितनी तारीफ की जाए कम है। मेरा बस चलता तो आपका शिखर सम्मान दिलवा देता। मुझे क्षमा कर दें—मैंने आपको पहले जो पत्र लिखा था उसे भूल जाइए और कर दीजिए। आप क्षमा तो क्षमाशील हैं। कई लोगो को क्षमा कर चुके हैं। मुझे भी कर दीजिए। एक व्यग्य लेखक होने के नाते आपको भी मुझसे वही व्यवहार करना चाहिए जो सिकन्दर ने पोरस के साथ किया था, क्योकि मैं भी व्यग्य लिख रहा हूँ। मेरे व्यग्य सग्रह की पाडुलिपि तैयार है। लिखिएगा कि आप दिल्ली कब जा रहे हैं। किसी भी हालत मे कोई प्रकाशक तय कर दीजिएगा। इस क्षेत्र मे नये लोगो को आगे बढाने म आपका काफी नाम है।

इस बार जागरूक पाठक ने अपना नाम भी लिखा था और पता भी लिखा था। मुझसे भूल हो गई। यह बरग मैं नहीं छुडाता तो उसे झक मारकर पोस्टल डिपाटमन्ट की परिभाषा के अनुसार छुडाना पडता।

आप सोच रहे होंगे कि मुझे अफसोस हुआ होगा, नही बिल्कुल नहीं। रुपये म घटिया लेखन बढिया लेखन हो जाए और क्षमा करने का भी अवसर मिल जाए—इससे प्रसन्नता की बात किसी लेखक के लिए और क्या हो सकती है, इन बैरग पत्रो के कारण ही तो कई लोगो को बढिया लेखक होने की गलतफहमी बनी हुई है। इसे भी तोड देंगे तो साहित्य मे बाधा क्या ?

गैप दे दो दाऊजी

खबर कुलपति के टेबल पर छात्रो द्वारा डिस्को डास

इसे कहते हैं—छात्रो की दोस्ती और जी का जजाल। दु ख हम इस बात का है कि बेचारे दाऊजी कहाँ फँस गए इन छात्रो के चक्कर मे। मजे स दो पीरियड पढाते, पपर सेट करते और मोस्ट आई० एम० पी० बनाते तो आज यह नौबत नही आती कि छात्र उनकी टेबल पर डिस्को डास करते। वैसे हमारे हिसाब से डिस्को डास करना भी कोई बुरी बात नही है। लेकिन दाऊजी ठहरे पुराने जमाने के आदमी। उनका टेस्ट ता के० सी० डे के जमाने का है और उनके प्रिय गीत हैं—'अधे की लाठी तू ही है, तू ही जीवन उजियारा ' या फिर 'तेरी गठरी मे लागा चोर मुसाफिर जाग जरा।' अब ऐसे गऊ किस्म के आदमी को डिस्को डास म क्या मजा आएगा ? लेकिन छात्र तो कुली और कालिया वाले हैं। बेचारो को भी क्या पता कि पुराने गीत क्या होते हैं और उनका सौंदय क्या होता है। अब लोग कहें कि हमारा छात्र जगत अनुशासनहीन हो गया है तो इसमे कहने वालो की भी गलती है। वैसे अपनी सरकार टी० वी पर पुरानी फिल्म बनाकर छात्रो मे कुछ इस प्रकार की जागृति फलाने की कोशिश कर तो रही है लेकिन यह प्रक्रिया कुछ समय तो लेगी ही। ऐसा तो नही होता कि आज दिखा दी अशोक कुमार की पुरानी फिल्म जिसमे वे गा रहे हैं—'मैं बन की चिडिया बन के सग डोलू रे' और पिक्चर खत्म होते ही लडकों की समझ मे आ गया कि चिडिया के साथ कैसे डोलना है। भई ये तो हमारी युवाशक्ति है। धीरे धीरे समझेगी कि विश्व-

विद्यालय का टेबल डिस्को के लिए नही होता । अब इसमे बेचारे छात्रो को दोष देना, हमे तो उचित नहीं लगता है ।

कुछ लोग सरकार को दोष दे रहे हैं कि दाऊजी जैसे सीधे आदमी को इस टेबल पर क्यों बिठा दिया । आपको यह बता दें कि अपने यहा दो टाइप के लोग पाए जाते है । एक जो होते हैं उनका काम होता है कि हर बात मे सरकार को घसीट देते हैं और दूसरे जो होते ह वे कहते है, सरकार बिलकुल ठीक कर रही है हम भी दूसरे टाइप के लोगा म ही हैं । सरकार कभी गलत काम नही करेगी—ये तो हमारा भी विश्वास है । हमारे हिसाब मे सरकार ने सोचा होगा—थोडा दाऊजी का टेम्प परिवतन कर देते है ये पुराना आदमी है तो इसको कुछ नये डिस्को सस्कार भी सिखाना जरूरी है अपने पी० एम० जब देश को एडवान्स सस्कृति की ओर ले जाना चाहते है तो प्रदेश सरकार का दायित्व है कि अपनी तरफ से कुछ योगदान दे । तो पहला काम यह तय हुआ कि सरकारी विभाग मे जो पुराने के० एल० सहगल और पकज मलिक टाइप लोग हैं उनका टेस्ट ऊपर उठाना है और उनको सस्कृति की नई टेक्नालाजी समझाना है । इसी उद्देश्य को ध्यान मे रखकर सरकार ने दाऊजी को इधर भेजा होगा कि दो चार चाकू चाकू और डिस्को फिस्को के फील्ड म काम कर लो ताकि हमारे पी०एम० भी ये न समझें कि यह आदमी जो है वह सोहराब मोदी या केशवराव दाते ही रह जाएगा शिक्षा विभाग म । आप ही बताइए कि इसम सरकार का क्या दोष है कहो ? सरकार तो दाऊजी के भले की भावना को लकर काम कर रही है और लोग सरकार का दोषी कह रहे हैं । हमने बताया ना कि कुछ लोगा की आदत ही होती ह बार-बार सरकार को हर काम मे घसीटने की । अब आप देख ही रहे होंगे कि बिचारी जया के मामले म भी लोग सरकार को घसीट रहे हैं । इतना नही समझते कि हमारी भारतीय सस्कृति म बाप का कितना महत्त्व है । बाप पहले बाप होता है और बाद मे मत्री होता है । और हम यह समझाइए कि कौन बाप ऐसा होगा जिसकी इच्छा नहीं होगी कि उसकी बेटी का स्वर्ण पदक मिल जाए । हम पूछते हैं कि इस बाप बेटी के बीच म सरकार को क्यो घसीट रहे हो ? सरकार ने कहा था कि बेटी पदा

क्यों ? अरे भइया ये मामला बिलकुल प्राइवेट है। सरकार को मत घसीटो यार इसमें। तुमको मत देने का अधिकार क्या दे दिया हमारे संविधान ने, तुम हर बात में सरकार का लाकर अडा देते हो। कुछ तो प्रजातान्त्रिक भावना की कद्र करना सीखो। चालीस साल से सरकार में जनप्रतिनिधि समझा रहे हैं और तुम्हें कुछ समझ म ही नहीं आ रहा है तो इसम किसका दोष है। तुम ही बताओ ? अपने विवक मे काम लो दादा। इसी दिन के लिए तो विवेक दिया है ऊपर वाले न तुम्हें।

डास सम्पन्न हो गया लकिन लोगों की टीका टिप्पणी करने की आदत सम्पन्न नहीं हो रही है। हम लोगों की पुरानी आदत है यह। जल्दी खत्म नहीं होगी—यह हम नहीं जानते है। युवा जगत की माँग थी कि 'गैप दो'। अब आप यह भी पूछेंगे कि यह गप दन की बात युवा प्रतिभाओ का किसने सिखा दी ? हम कहते हैं इसमे सिखाने की बात क्या है। सरकार अस्पतालो म वडे बडे पोस्टर लगाकर लोगो को सिखा रही है कि गैप दो । डाक्टर की सलाह मानो, तो इसमे काई हगामा नहीं हुआ आज तक और बेचारे बच्चो न दाऊजी से निवेदन कर दिया कि गैप दो तो दाऊजी अड गए। हम कहते है, यार दाऊजी दे देते गप । तीन दिन का ही क्यो अपनी तरफ से तीन साल का दे देते तो न देश का कुछ नुकसान होने वाला था, न सरकार का। लेकिन हम जानते है ना कि आप जो हो वो पृथ्वीराज कपूर पीढी के आदमी हो परीक्षा की अनारकली और सलीमा के बीच आओगे तो बगावत तो होगी ही। सलीम जब 'मुगले आजम मे 'जिन्दाबाद जिन्दाबाद ' गाकर जिल्ले ए सुभानी के खिलाफ बगावत का परचम बुलन्द कर सकते हैं तो य बेचारे 'छात्र एकता जिन्दाबाद' क्या नहीं कहग ? आप सोच रहे होंगे कि इन लोगो ने 'मुगले आजम' नहीं देखी होगी तो सब धक्का देंगे और बिना गैप के चला लेंगे परीक्षा। ईमान से दाऊजी, आप बिलकुल भोले आदमी हो। आपकी जगह यदि हम होते तो तुरन्त कहते—दखो दादा, हमने टाइम टेबल जरूर बना दिया लेकिन इस पर अमल लाना या नहीं लाना आप पर है जिस दिन तुम्हारी इच्छा गप लेने की हो, हमे आकर बता देना तो हम पेपर ही

कसिल कर देंगे और यदि आप और लम्बा गैप चाहते हो तो युवा शक्ति का परिचय दिखाने की जरूरत नही है। कहो तो हम एक पेपर के बाद एक महीने का गैप दे देते हैं। यही होगा कि जो परीक्षाएँ जून म खत्म होती हैं वे दिसम्बर जनवरी तक खत्म होगी होने दो अपना क्या जाता है। आपकी सुविधाओ का ध्यान रखने के लिए ही तो हम इस कुरसी पर बैठे हैं।

अब यदि हमारे डॉयलॉग हमारे बच्चो के सामने दाऊजी मार देते तो बच्चे भी गदगद हो जाते और कहते—वाह मास्साब आप तो हमारे ही आदमी हो अच्छा हटाओ ये गैप आप जैसा कहो वैसा कर देते हैं आपने छात्र एकता को सम्मान दिया है तो हमारा भी कर्तव्य है कि आपके टाइम टेबल को हम सम्मान देंगे बस अब आप तो रहने दो हमे गैप वप नही चाहिए परीक्षा म पास होने के लिए हम अन्य सामग्री का उपयोग कर लेंगे।

देखिए, इतनी छोटी सी बात थी और आज पूरी युवाशक्ति को लाग दोष द रहे हैं। कोई बच्चा का पक्ष ही नही लेता। सब दाऊजी की तरफ दारी कर रहे है। बच्चो से कह रहे है क्षमा माँग लो। अरे कोई तुम्हारे घर का मामला है कि क्षमा माँग लें? रात को लडका सेकड शो देखकर आया ता पिताजी ने एक झापड मार दिया। सुबह माताराम बच्चा को समझाने लगी—तेरे पिताजी हैं रे तेरे भले के लिए कहते है ना उनसे क्षमा माग ले।

ये बात कुछ और है। घर का मामला है तो क्षमा माँगेगा तो किसी को पता नही चलेगा। अब आप दाऊजी के मामले म बच्चे पर जोर डालोगे कि 'चलो क्षमा माँग' तो वह कस माँगेगा? घर और यूनिवर्सिटी मे कुछ तो फक होता है। पिताजी और कुलपति को एक ही तराजू म तौलोगे? क्या यही प्रजातन्त्र है? कुछ तो विवेक स काम लो यार हर बात मे युवा शक्ति के पीछे पड जाते हो। यही बात तो अच्छी नहीं है आप लोगों मे। दाऊजी का क्या है। चार छ साल म रिटायर हो जाएगे। देश तो आखिर इन बच्चो को ही चलाना है। दाऊजी स भी हमारा यही निवेदन है कि वे विवेक से काम लें और बच्चो के किस्रो का बिल्कुल

बुरा न मानें वे पुरान विचार के ह लेकिन जब सलीम अनारकली के लिए अपने वालिद जनाब जलालुद्दीन ने अकबर से बगावत कर बठा तो परीक्षा के लिए की गई गैप की माँग को लेकर बगावत करना विश्व-विद्यालय के हर सलीम का हक ह और इस हक की लडाई म आपको कुछ माइन ता होना ही पड़ेगा ।

सीनियर का वसन्त

जिरहगिरी मे आने के बाद लागो को उनके पसीन से भी 'लीगल फ्लेवर' आन लगी थी। इस महक म वे कई लागा को अपनी आर आकर्षित कर लेत थ। उनकी जेबें अधिनियमा और महिताओ स ठसाठस भरी रहती थी। उन्होंने जेब मे हाथ डाला नही कि आप समझ जाइए कि वे कुछ वैधानिक आपत्तियाँ निकाल कर आप पर फेंकेंगे और आपका कूट-परीक्षण किए बिना आपको नही छोड़ेंगे। इस प्रक्रिया म जब तक वे आपको पूरी तरह स कूट नही लेंगे, उन्हें आत्मिक सताप नहीं मिलेगा।

मैं तो उन्ह सीनियर ही कहता था क्योकि व मुझस हर मामले मे वरिष्ठ ही थे। उनकी खुराक भी मुझस अधिक थी। जब तक वे आठ दस नजीरें खा नही लेते थे उन्ह डकार नही आती थी। यही उनका राज का भोजन था। मेरी स्थिति यह थी कि मैं एक केस लॉ पढता था तो मेरा पेट गडगडाने लगता था।

व मुझे हम पेशा न समझ कर मित्र ही समझते थे और इसका कारण यह था कि जिरहगिरी के अतिरिक्त उन्हे साहित्य स भी लगाव था। व कविताए लिखते थे। विशेषकर होली, दीवाली वसत पचमी के अवसर पर तो वह लिखते ही थे। केवल लिखते ही नही थे अपनी रचनाएँ छपने के लिए भेजा भी करते थे। कविताओ के लिए उन्होंने उपनाम रखा था—जिरहगीर।

इस बार जब पत्रिकाओ ने वसन्त अक की घोषणा की तो वे कविता लिखन के लिए छटपटान लगे। किसी की जमानत का आवेदन-पत्र दे रहे

हैं तो उसमें भी प्रार्थना वाले हिस्से में एक मुक्तक मार ही देते थे। यह तो उनका टाइपिस्ट काफी समझदार था कि इस प्रेयर गद्य का रूपांतर कर देता था। बलवे के एक मामले में तो उन्होंने पूरे तर्क कविता में ही दिए। बाद में जो आदेश पारित हुआ, वह भी काफी काव्यमय ही था। जिन लोगों के लिए उन्होंने जिरह की थी, वे जब वापस लौटेंगे तो जरूर कोई महाकाव्य लिखेंगे जिसका शीर्षक होगा—अथ 'सफर की कविताएँ' या और प्रगतिशील ढंग से लें तो होगा 'ये सलाखें क्यों नहीं बोलतीं'।

एक दिन मुझसे कहने लगे—वसन्त अंक के लिए तुमने अपनी रचना भेज दी या नहीं।

मैंने कहा—कहाँ सीनियर, मूड ही नहीं बन रहा है। इन नकबजनों से पीछा छूटे तो कुछ साहित्य-सेवा भी करें।

वे बोले—अपराध प्रवृत्ति मानवीय प्रक्रिया है। जब तक आदमी रहेगा, अपराध रहेंगे। हमें देखो, इतना व्यस्त रहने के बाद भी हम तीज-त्यौहारों पर कविता लिख ही लेते हैं। इन चोर-डकैतों के पीछे तुम क्यों अपना साहित्यिक कैरियर खराब कर रहे हो।

इसके बाद उन्होंने जेब में हाथ डाला, तो मैं समझा कि वे इलाहाबाद 1977 या मद्रास 1952 निकालेंगे लेकिन इसके बदले उन्होंने एक समंस निकाला जिसकी पीठ पर उन्होंने वसन्त की एक कविता लिखी थी।

फिर वे कुछ गंभीर हुए। बोले—सुनो।

वरिष्ठ होने के नाते वे मुझे प्रेरणा देने के लिए ही कविता सुना रहे थे। मुझमें इतना साहस नहीं था कि उनकी कविता की समीक्षा कर सकूँ। फिर भी जब उन्होंने कविता सुनाना प्रारंभ किया तो मुझे लगा कि जरूर वे किसी को आज महाकाव्य लिखने के लिए धँसाएँगे।

उन्होंने पहले समंस को उलट-पुलट कर देखा। बोले—इस बार वसन्त पर एक अछूता ऐंगल निकाला है मैंने, सुनो—

> किसी कारागार से मुक्त होकर
> जब तुम आते हो वसन्त
> मैं काँप जाता हूँ भय से
> कैसे झेल पाऊँगा तुम्हें

मेरी सवेदनाआ के फूल
भूल गए हैं खिलना
मेरी प्राथना है वसन्त
तुम
अकेले म मत मिलना
केलिन मे, कूलन म, कछारन म
मत बगरना मेरे भाई
वहा कुछ भी नही रहा तुम्हारे लिए
लोगा न
चारो तरफ नाजायज कब्जे कर लिए हैं
जहा होती थी कभी
चमेली, मोगरे और गुलाब की क्यारियाँ
छोले भटूरे वाला ने ठेले लगा लिए है अपने
मैं काँप जाता हूँ भय से
तुम्हारे स्वागत के नाम से काँप जाता हू मैं
क्या जवाब दूगा तुम्हे
जब तुम मेरा कूट परीक्षण करोगे
मेरी मानोगे ?
मरने दो हरियाली को
बरने दो फूलो को
मस्ती के माहौल को दूर भगा दो,
इनके खिलाफ स्टे का आवेदन लगा दो।

मेरी ओर देख कर वे बोले—कैसी लगी ? कहाँ भेज दू छपने ? किसी बडी पत्रिका मे चलेगी ?

मैंने कहा—सीनियर कविता इतनी जानदार है कि कही भी छप जाएगी।

वे बोले—किसी पत्रिका का नाम भी बताओ मुझे तो आजकल की पत्र पत्रिकाआ का टम्ट ही नहीं मालूम। अपने जमाने मे तो सरस्वती और चाँद ही निकलती थी। सच कहूँ इस पेशे म आकर मेरी प्रतिभा सड

गई है, दूसरी लाइन म चला गया होता तो आज तक मुझ पर कोई शोध प्रबंध हो जाता।

मैं उनके सामने कुल मिलाकर जूनियर ही था। मैंने अपनी राय जाहिर करते हुए कहा—इसे 'रेवेयू निणय' म क्या नहीं भेज देते। रेवयू लों पर इससे बढ़िया हिन्दी साहित्य म कोई कविता नहीं हो सकती।

वे बोले—साहित्य की इतनी अच्छी पकड होने के बाद तुम जिरह-खोरी के पेशे मे क्या सड रहे हो , मेरी मानो, अभी भी कुछ नहीं बिगडा है दूसरी लाइन मे चले जाओ।

इसके बाद उन्होंने जेब म हाथ डाल कर फिर एक ममसा निकाला तो मैं समझ गया कि इस वसन्त पर अपना सीनियर की तैयारी पूरी है।

सील वाला पार्षद

कान को सीधा पकड़ें या घुमा कर, कान कान ही होता है। पार्षद को घर पर पकड़ें या नगरपालिका में, पार्षद पार्षद ही होता है। जो पार्षद हो गया समझ लो वह सील वाला हो गया। क्योंकि इस बार जब मैं कुछ पार्षदों के दस्तखत लेने गया तब उन्होंने पहले जेब से सील निकाली और फिर मेरे आवेदन पर सील मारकर बाद में दस्तखत किए। सील रबर की थी। पार्षद भी रबर की तरह मुलायम ही थे। जिधर इच्छा होती उधर अपने आपको रबर की गेंद की तरह लुढ़का देते। आदमी का चमड़ा जब रबर की तरह हो तो उसमें हवा भी भरी जा सकती है और अपने मन मुताबिक उसे इस्तेमाल भी किया जा सकता है।

जिस पहले पार्षद से मेरा साबका पड़ा था वे दिखने में ही पार्षद थे। 'नगरपालिका आपका स्वागत करती है' का बोर्ड उनके चेहरे पर लगा था। लोग दूर से देखकर ही कहने लगते थे—सावधान पार्षद आ रहा है। मैंने उन्हें रोककर कहा एक सार्वजनिक माँग हम लोग कर रहे हैं। यह आवेदन देना है आप इस पर अपने हस्ताक्षर कर दीजिए।

वे बोले—किस हैसियत से ? मैंने कहा—आपकी हैसियत तो हम जानते हैं। आपकी एक ही हैसियत है और वह है पार्षद की। उसी हैसियत से हस्ताक्षर कर दीजिए।

उन्होंने अपना दाहिना हाथ जेब में डाला और रबर की सील निकाल ली। मैंने कहा—आप दस्तखत तो कर दीजिए सील बाद में लगवा लेंगे। वे बोले—नहीं पहले सील लगेगी। हम जो भी काम करते हैं,

ऐसा ही करते हैं। जहां जाते हैं पहले अपनी सील दिखाते हैं और फिर बात करते हैं।

मुझे उनका व्यक्तित्व प्रभावशाली लगा।

उन्होंने 'हाफ चाय पिला दो' वाली मुद्रा में अपने हाफ हस्ताक्षर किए और बोले—पंजाब समस्या के बारे में आप क्या सोचते हैं?

सील लगाने के बाद अचानक वे देश की गंभीर समस्या पर विचार करने के मूड में आ गए थे। मैंने कहा—ये काम तो आप जैसे सीलवाले लोगों का है इस मामले में मुझे आपकी राय जानकर ही प्रसन्नता होगी। आप जैसे विचारशील पार्षद के होते हुए हम जैसे छोटे लोगों को इस पर बात करना अच्छा नहीं लगेगा। आप जो भी कहेंगे वह नगर-पालिका स्तर पर कहेंगे।

वे सोचने लगे। आधा मुंह खुल गया। थोड़े से दांत भी बाहर की ओर दिखाई दे रहे थे। उन्होंने कुरते की जेब में हाथ डाल कर देखा कि उनकी सील वहां है या नहीं। फिर उन्होंने सील बाहर निकाली और बोले—बाबूजी कह रहे थे कि

मैं समझ गया कि यह सील जो वे अपने हर हस्ताक्षर के पहले लगाते हैं वह बाबूजी ने ही उन्हें बना कर दी है। मैं जानता हूँ कि जब भी वे किसी गंभीर समस्या पर बात करते हैं तो उसकी शुरुआत देश और बाबूजी से करते हैं। मैंने कहा—फिर कभी आपके कीमती विचार सुनूंगा एक दो पायदों को और पकड़ लेता हूँ।

मैंने दूसरे पायद को उनके घर पर पकड़ा। उनका घर नगरपालिका से काफी दूर था लेकिन फिर भी मुझे उनके घर पर नगरपालिका की अव्यवस्था का प्रभाव उनकी बैठक में स्पष्ट नजर आया। चुंगी नाके की तरह बहुत छोटी बैठक थी उनकी। संपत्ति कर से बचने के स्टाईल में एक टूटी हुई बेंच रखी थी। नगरपालिका के आदर्श सिद्धांतों पर चलती गंदगी उनकी बैठक के फर्श पर उपस्थित थी। मुझे देखकर वे आम आदमी से हट कर पायद की पोजीशन में बैठ गए। जब से उन्होंने इस वार्ड का चुनाव जीता था जहां बैठते थे इसी पोजीशन में बैठते थे। मैंने कहा—इस आवेदन पर अपने हस्ताक्षर कर दीजिए लगे तो पहले पढ़ लीजिए।

वे बोले—पढ़ने की फुरसत नहीं है आप बता दीजिए। कोई कागज पढ़ने की हमारी आदत नहीं है।

उनकी इसी अच्छी आदत के कारण व सभी पार्षदों में भी लोकप्रिय थे। मैंने आगे की बात की तो वे बोले—अच्छी बात है लाइए दस्तखत कर देता हूं।

उन्होंने बत्तक छाप दस्तखत कर दिए। हस्ताक्षर देखने से लगता था जैसे एक बत्तक पानी में तैरने के लिए भूमिका बना रहा है। मैंने उनके हस्ताक्षर की प्रशंसा की। बाद में मुझे पता चला कि उन्होंने घर पर बत्तकें पाल रखी थीं। और कुछ लोग उन्हें बत्तकवाले पार्षद भी कहते थे क्योंकि नगरपालिका में जो भी कागज देखते उस पर बत्तक बिठा देते थे।

हस्ताक्षर से निवृत्त होने के बाद उन्होंने प्रक्षेपास्त्र की तरह जेब से एक भयानक किस्म की सील निकाल ली। मैं जिंदगी में पहली बार इतनी बड़ी सील देख रहा था। इस सील का वजन भी काफी था। अपना हर हस्ताक्षर वजनदार बनाने के लिए ही उन्होंने यह सील बनाई थी। मैंने सील देख कर कहा—बहुत बड़ी सील है कहाँ बनवाई आपने ?

वे बोले—हम लोग 'आई' वाले हैं। सील बड़ी नहीं रहेगी तो हम मुश्किल में भी पड़ जाएँगे। राजनीति में जिसकी सील जितनी बड़ी होगी, आलाकमान में उसकी उतनी ही कद्र होगी। पिछली बार जब भोपाल गया था तब मैंने काफी सोच-समझ कर यह सील बनवाई थी। देखिए कैसी लग रही है ?

मैंने सील पर लिखे साहित्य का अध्ययन किया तो पता चला कि उन्होंने फोन नम्बर से लेकर वे सारे नम्बर इस सील में शामिल कर लिए थे जिनकी आवश्यकता उनको किसी भी वक्त पड़ सकती थी। इसके बाद उनका पिछला इतिहास सील पर उल्टे रबर के अक्षरों में लिखा था जिसमें यह बताया गया था कि किस हाल में वे कहाँ और किस पद पर रहे। उन्होंने सामने रखे पैड पर सील को रगड़ा और अपने हस्ताक्षर के नीचे लगा दिया और पार्षदी शब्दों में बोले—और कोई सेवा ?

जिस आदमी ने सील से अपना पद सार्थक किया हो उससे और इससे अधिक किस सेवा की उम्मीद की जा सकती है।

अनशन पर बैठने से पहले

यह हमारा सौभाग्य है कि हमें भूख पड़ताल की सुविधा प्राप्त है। शालीन भाषा मे इसे अनशन या आमरण अनशन भी कहते हैं। इस सुविधा के माध्यम से बहुत से काम आसानी से हो जाते हैं। किसी अधिकारी को अपने यहाँ से भगाना हो तो अनशन पर बैठ जाओ। सरकार तुरत कार्यवाही करेगी। सरकारी भुगतान नही हो रहा है तो अनशन पर बैठ जाओ, सरकार तुरत कार्यवाही करेगी। कहने का मतलब ये कि आप भूखे रहकर मरना चाहोगे लेकिन सरकार आपको मरने नही देगी। मैं तो अनशन को एक लोकप्रिय विधा मानता हूँ और मुझे इस विधा में बडी सभावना नजर आती है। आपने उधर अनशन की धमकी दी और इधर आपका काम हुआ। कलेक्टर हो या एस०पी०, सीधे आपके पास आएँगे और समझाएँगे कि अनशन तोड दीजिए, हम आपकी माँगो पर विचार करने के लिए प्रशासन को लिखेंगे।

यही है सही प्रजातन्त्र। अब जैसे यह माँग रखी कि यहाँ के प्राचार्य को भगाओ। आप बैठ गए भूख हडताल पर। अनशन का दूसरा दिन चल रहा है। सरकारी अफसर आपकी खुशामद कर रहे है कि तोड दो अनशन। लेकिन आप है कि अडे हैं। तीसरा दिन हुआ। चौथा दिन हुआ। अब भोपाल से खबर आ गई कि शिक्षा मन्त्रालय प्राचार्य को हटाने की कार्यवाही कर रहा है। बस, काम हो गया। कहने का मतलब ये कि इस बात की पूरी गारटी है कि सरकार अनशन करने वाले को मरने नही देगी। अब आप सोचिए कि कलेक्टर आपसे कहे—मरना है तो मरो,

हम प्राचाय को यही रखेंगे।

लेकिन ऐसा नही होता वर्ना अनशन करने वालो की सख्या म भारी गिरावट आ जाती और लोगा का जनविश्वास अनशन से उठ जाता। यही कारण है कि अनशन करने वालो की सख्या बढ रही ह। पिछले दिनो एक अनशनकारी छ दिनो तक अनशन पर बठने के बाद एक होटल मे दोसा खाते हुए पकडा गया। ऐसे ही लोग अनशन के प्रति व्यवस्था की आस्था को डगमगा देते हैं। सरकार भी समझती है कि ऐसे फाटू किस्म के अनशनकारियो की माँग पर विचार करना बेकार है।

अनशन जैसी गभीर विधा पर फिलहाल कोई साहित्य उपलब्ध नही है। मेरे मन मे विचार आया कि यदि कोई अच्छी किताब 'सफल अनशनकारी कैस बनें ?' या 'अनशन पर बठने स पहले' लिखी जाए तो जहा एक ओर उससे अच्छी रायल्टी बनेगी वहीं दूसरी ओर अनशन पर छिप कर दोसा खाने की स्थिति कभी भी नही आएगी। इसी महान विचार की भूमिकास्वरूप मैं अनशन पर बैठन वाले महापुरुषो का आदर करते हुए उनकी सफलता के लिए कुछ बातें लिख रहा हूँ। यदि आप भूख-हडताल पर बैठने का विचार बना रहे हो तो आपकी प्रसिद्धि मे मेरा यह छोटा सा लेख सहायक होगा। इसी विश्वास के साथ आप निम्न लिखित सूक्ति बिदुओ का चितन मनन कर लें और अनशन पर बैठ जाएँ। आपका बाल भी बाका नही होगा।

1 अनशन पर बैठने के दो तीन दिन पहल से आप दाढी बनाना बद कर दें। इससे अनशनकारी का चेहरा गभीर बनता है।

2 अखबारा मे खूब प्रचार करें कि आप अनशन पर बठ रहे है। इससे पूरे इलाके म आपका नाम प्रचलित होगा।

3 अनशन पर बठने से पहले अपनी मांग पर गभीरता से विचार कर लें। सरकार से ऐसी माँग रखें जिसे सरकार को पूरा करन म कोई दिक्कत न हो। मान लीजिए कि आपने यह माग रखी कि सरकार महात्मा गाधी को फिर स जिन्दा कर दे। अब आप ही बताइए कि आप अनशन मे बैठ कर मरेंगे कि बचेंगे ?

4 अनशन पर बैठने के पहले ही आप एसे लोगा का तैयार कर

लीजिए जो आपसे अनशन तोडने का आ[illegible]ह करने लगें [illegible] कि यह काम अपने विश्वासपात्रों को ही दें। कहीं [illegible] कि इधर [illegible] हडताल पर बैठ गए और उधर यह अपने काम से [illegible] चला गया [illegible]

5 अनशन पर बठने के बाद आप केवल देश की गभीर समस्याओं पर और लचर व्यवस्था पर ही बात करें। फालतू इधर उधर की बातें करने से अनशनकारी की छवि धूमिल होती है और लोग अनशनकारी का मूख समझता है। जसे यदि आप कहेंगे कि हमे एकजुट होकर आतकवाद का सामना करना है और एकता और अखडता को बनाए रखना है, तो अनशन की गरिमा बनेगी। इसके विपरीत यदि आप कहगे कि फला फिल्म म जयाप्रदा जोरदार डांस करती है तो यह सिद्ध हो जाएगा कि आप फाटू किस्म के अनशनकारी हैं।

6 यदि आप आमरण अनशन पर बैठे हैं तो इस बात का ध्यान रखें कि दिन म केवल नीबू पानी ही लें। आजकल अनशन पर बैठने वालो मे नीबू पानी पीने का ही फैशन चल रहा है। रात मे आपको एक सतकता यह बरतनी है कि आपके पास रात मे वे ही लोग रहें जो आपके खास लोग हैं और आपकी हरकतों से वाकिफ भी हैं।

7 आप इस बात की पूरी कोशिश करें कि जिस जगह पर आप भूख हडताल के लिए बैठ रहे हैं, वह शहर से काफी दूर हो ताकि लोग रात मे कोई चेकिंग न कर सकें।

8 यदि सरकार आपकी मांग पूरी करने म कोई पहल नहीं करती है तो आप पत्रकारो को बुला कर यह वक्तव्य दीजिए कि इस देश की भ्रष्ट व्यवस्था के सुधार म आपकी जान भी चली जाए तो आपको कोई दुख नहीं होगा। आप यह भी कह कि यदि आपकी माग पूरी होन का आश्वासन मिल जाए तो भी आप अनशन तोडने के लिए तैयार हैं लेकिन इस भ्रष्ट व्यवस्था मे आप कोई समझौता नहीं करना चाहते।

9 सभव हो और यदि खर्चा कम हो तो आप दस बीस ऐसे आदमी तैयार रखिए जो आपकी मांगों का समथन करते रहें और नाना प्रकार की धमकियाँ सरकार को देते रहें। जसे—चक्का जाम, बाजार बद आदि।

10 अनशन पर बैठने से पहले गुलाल खरीदना न भूलें और प्रति-दिन नियमित रूप से गुलाल लगाएँ। इससे अनशनकारी गरिमामय दिखता है और माहौल ठीक बना रहता है।

11 अनशन पर बैठने के पहले आप नगर के सभी गण्यमान्य नागरिकों से मिलें और कहें—मेरा क्या है मैं मर भी गया तो देश का विकास नहीं रुकेगा लेकिन मैं सच्चाई और ईमानदारी से अपनी माँग पर अड़ा रहूँगा यह माँग आप सब लोगों के लिए ही है आशा है आप सबका समर्थन मुझे प्राप्त होगा।

इस तैयारी के साथ आप अनशन पर बैठेंगे तो मेरा दावा है कि समाज में जहाँ एक ओर आपकी छवि बनेगी वहीं दूसरी ओर लोगों की आस्था अनशन पर बनी रहेगी।

/

जानवर पालने वालो के नाम

दिल्ली वालो का शौक भी अजीब है। देखो, ऊँट पाल रहे हैं। हमारे इधर तो भोपाल म लोग कुत्ता पाल लेते हैं और बहुत हुआ तो बकरा पालते हैं। इन दो जानवरो से ज्यादा मध्यप्रदेश का स्तर ही नही बढ रहा है। अब केन्द्र वाला को कौन बताए कि बकरा कितने काम का होता है। हम तो कहते हैं जी, ऊँट से तो अच्छा ही है। कल के दिन बलि देने का मौका आ गया तो बकरा ही काम आएगा और देखो कुत्ता कितना समझदार होता है। शाम को रोटी का एक टुकडा फेंक दो, रात भर भौंकेगा आपकी तरफ से। और फिर आपके सामन दुम हिलाएगा सो अलग। आप इशारा कर दोगे तो सामने वाले को दौडा-दौडा कर मार डालेगा। राज्य सरकार को तो खुलकर सामने आना चाहिए और कुत्ता और बकरा पालन की योजना को प्रोत्साहन देना चाहिए। कुत्तो और बकरो का महत्त्व हम लोग जितना समझते हैं केन्द्र वाले क्या समझेंगे।

ऊँट पालने के पीछे एक बात हो सकती है। गरमी आ गई है ता दिल्ली म पानी की शॉर्टेज हो जाएगी। निगम के नल मे पानी नहीं आएगा तो ऊँट के पेट मे रखे थरमस से पानी निकाल कर दो घट मार लेंगे। अब बकरा होगा तो क्या निकालेगा उसके पेट से सिवाय गदी चीजो के। या फिर सउदी अरब वाला का कुछ हाथ होगा ऊँट के पीछे। केन्द्र वाले हैं तो कुछ सोच-समझकर ही पाल रहे होंगे ऊँट। वैसे भी जानवर पालने का तो हमारा पुराना शौक है।

हम तो ये कहते हैं भैया कि भोपाल मे भी एक से एक शौकीन पडे

हैं जानवरों के। एक सज्जन को हम जानते हैं जिनको तोते पालने का बड़ा शौक है। दिन रात तोते के पीछे पड़े रहते हैं। तोते को दस बीस कार्यक्रम रटवा देते हैं, फिर इतना बढ़िया प्रोग्राम देता है तोता कि भोपाल आकाशवाणी वाले क्या देंगे। एकदम सही उच्चारण करता है और जहाँ नुक्ता लगाना है वहाँ बराबर नुक्ता लगाता है। जहाँगीराबाद से लेकर रायल मारकेट तक और अरेरा कालोनी से ओल्ड सेक्रेटेरियेट तक जलवा है उनका। बड़े मशहूर हैं वे तोते वाले के नाम से।

उनके बँगले मे चार टाइप के तोते हैं। एक तोते को उन्होंने पूरा क्रांतिकारी साहित्य रटवा दिया है। दूसरा तोता बड़ा धार्मिक प्रवृत्ति का है। तीसरा जो है वो राजनीति मे एक्सपर्ट है और चौथे का आलम ये है कि बस वह तो पूरा तोता ही है। उन्होंने जो कहा वही बात तुरत वह करने लगता है। कभी-कभी तो वे पहले तोते से बात करते हैं, फिर घर आए मेहमानो से बात करते हैं।

भोपाल म ही एक डाक्टर साहब है जिन्हें कुत्ते पालने का बड़ा शौक है। सिनेमा हो या कोई प्रयोगधर्मी नाटक, वे कुत्ते के साथ ही दिखना पसंद करते हैं। उनके दवाखाने मे एक से एक खतरनाक कुत्ते मिलेंगे आपको। मरीज आता है और पहले कुत्ते की ओर देखता है, बाद म उनकी ओर देखता है। एक बार तो पुलिस वाला भी उनका कुत्ता देखकर डर गया था। जिनसे लोग डरते है वो कुत्ते मे डर गया तो सोच लीजिए कितना खूंखार होगा उनका कुत्ता। खुद आलू खाते हैं और कुत्ते को बाकायदा मटन खिलाते हैं। मैंने कई बार उनसे कहा—डाक्टर साहब, कुत्ता से क्या मिलता है आपको ? अरे इसकी जगह दो चार देसी मुरगी ही पाल लेते तो अण्डे तो बन जाते खाने लायक।

वह मेरी ओर देखकर हँसे, बोले—कुत्ते की वफादारी आप क्या समझेंगे। बस आप तो कविताएँ लिखिए।

उनका जवाब सुनकर मैंने कहा—जनाब, आजकल कुत्तो म भी वफादारी रही कहाँ। वे बोले—आदमी से तो ज्यादा ही होती है और फिर मैं तो नस्ल देखकर ही पालता हूँ। और मेरा दावा है कि ऊंची नस्ल का कुत्ता हमेशा ईमानदार और वफादार रहेगा। मेरे यहाँ आपको देशी

कुत्ता एक भी नही मिलेगा। बहुत ट्रेनिंग देनी पडती है जानवरो को। जानवर पालना आसान काम नही है।

उस दिन बरखेडा से लौट रहा था तो एक सज्जन मिल गए। ऊँट-पालन पर चर्चा चली तो कहने लगे—कोई अच्छा गधा मिलेगा तो मैं पालूगा। हमने कहा—अजीब आदमी हो यार। प्रजातान्त्रिक व्यवस्था म गधा पालोगे ? शरम नही आती ? वे कहने लगे—साहब, आप ऊँचे लोग हैं इसलिए ऐसी बात करते हैं। हम तो छोटी बुद्धि से इतना जानत हैं कि गधा हमारे देश का जानवर है और देश प्रेम की भावना स ही हम पालते हैं इसे। मेरा तो दावा है साहब कि ढग से पाल लोगे तो न दुलत्ती मारेगा और ना ही परेशान करेगा। बिल्कुल सीधा जानवर होता है जी। एकदम चतुथ श्रेणी का। फिर खरचा भी कम। छोड दो तो किसी के बँगले की घास खाकर आ जाएगा और अपनी ड्यूटी पर तैनात हो जाएगा। तो बताइएगा भाई साहब, आपकी नजर मे कोई अच्छा गधा हो कही तो।

मुझे उनकी बातो मे आनद आ रहा था। मैंने कहा—अभी तो बाहर से आने वालो का सीजन चल रहा है। देखो कही मिल जाए तो।

वे गभीरता से बोले—भाई साहब, आप तो मजाक करते हैं। दिल्ली वाला ऊँट पाल रहा है तो उसकी तारीफ अखबारो मे आ रही है और हम गधे की बात करते हैं तो लोग हमारा मजाक उडाते हैं। कसम खुदा की, देखना गधे को इतना ट्रेंड कर दूंगा कि दिल्ली वाले ऊँट को पानी न पिला दिया तो भोपाली न कहना भाई साहब हमको। चार चार ट्यूशन लगा दूगा उसके पीछे हाँ।

तो भइया, हमारी मानो तो आप भी कोई जानवर पाल लो। कहते हैं घर मे जानवर हो तो पहले बला जानवर के ऊपर आती है। जब बला आए तो सामने कर देना जानवर को और तुम पीछे हो जाना। दिल्ली के लोग जब जानवरो का महत्त्व समझने लगे हैं तो उसका कुछ मतलब निकालना ही चाहिए हमे। मैं नही कहता कि तुम भी हाथी पाल लो। अपनी हैसियत के मुताबिक पालो लेकिन पालो। आदमी का महत्त्व उसके साथ चलने वाले जानवर से ही आँका जाता है। भोपाल वाला को तो इशारा ही काफी है। फिर भी हमारा काम था सो समझा दिया, आगे आप खुद समझदार हैं।

झंडा फहराता मंत्री

मंत्रीजी की जिन्दगी के दो मकसद हैं। पहला चुनाव लड़ना और दूसरा झंडा फहराना। *चुनाव लड़ना उनकी विवशता है तथा झंडा फहराना* उनका नैतिक कर्तव्य है। यही कारण है कि इस बार हमने उन्हें फिर बुला लिया। हमारे शहर के झंडे पर केवल उनका अधिकार है। वे आते हैं फहराते हैं, खाते हैं और वापस चले जाते हैं। 'खाते हैं' से हमारा मतलब स्वल्पाहार से है। बाकी खाना-पीना तो साल भर चलता रहता है। साल में दो दिन वे केवल फहराते हैं भाषण देते हैं, प्रगति का इतिहास बताते हैं और जहां से आए थे, वहीं वापस चले जाते हैं। यह क्रम पिछले अनेकों सालों से चल रहा है, चल क्या रहा है हम चला रहे हैं, क्रम को भी और मंत्रीजी को भी।

हर बार की तरह इस बार भी वे विमान से आए हवाई अड्डे पर अपना स्वागत करवाया और सरकारी गाड़ी में बैठकर आ गए मैदान पर। मैदान पर एक चबूतरा बना है, चबूतरे पर एक लम्बा पोल है और पोल पर झंडा बंधा है। झंडे में कुछ फूल समझदार काय-कविताओं ने बांध रखे हैं। हम निवेदन करते हैं—आओ मंत्रीजी झंडा फहराओ। वे आते हैं और फहरा देते हैं। फिर हम तालियां बजाते हैं हम फिर निवेदन करते हैं—देश के बारे में कुछ बताओ मंत्रीजी, वे देश के बारे में बताते हैं। हम फिर तालियां बजाते है। अंत में हम निवेदन करते हैं—स्वल्पाहार लो मंत्रीजी, वे स्वल्पाहार लेते हैं।

झंडा फहराने से स्वल्पाहार की अवधि के बीच हम प्रतीक्षा रहती है

परेशान हो गए है इन मांगो से, जानते हैं हम जैसे भूखे-नगे नागरिक और क्या मांगेंगे, इसलिए वे कहते हैं—मांगें पुरानी है, टी० वी० मांगो हम देंगे।

टी० वी० प्रमारण की मांग पूरी हो जाती है। हम रजनी देखत है, हम वाह जनाब देखत हैं, हम आ वल मुझे मार देखत है मत्रीजी न हमार क्षेत्र म टी०वी० शुरू करवा दिया, वे महान हैं। हम भूख, गरीबी, महँगाइ भूल गए हम महान ह।

इस बार मन्त्रीजी ने फिर झडा फहरा दिया। हमने टी० वी० मे देखा। मत्रीजी प्रसन्न हैं उनके चेहरे पर मुस्कान है। वे धीमे कदमो स आगे आते हैं। चबूतरे पर खडे होकर पहले ऊपर दखते हैं। हम झडे की रस्सी उनके हाथ म देते हैं। वे एक झटका देते हैं। झडे की गाँठ खुल जाती है। कुछ फूल गिरते है और नीले आसमान पर झडा फहराने लगता है। हमारा सौभाग्य है कि हम टी० वी० पर देख रहे हैं। मत्रीजी का सौभाग्य है कि वे झडा फहरा रह हैं।

एक बहुत बडी जिम्मेदारी से मुक्त होकर मत्रीजी जा रहे है। कल अखबार मे मत्रीजी की फोटो छपेगी, उनके हाथा म रस्सी हागी। झडे के नीचे खडे हम तालिया बजाएँगे, झडे स गिरत फूलो को दखकर तालियाँ बजाना ही हमे अच्छा लगता है हम यह सोचकर अच्छा लगता है कि झडा फहराने के लिए हमने एक मत्री का चुनाव कर लिया है।

बरगद वाले बाबा

पिछले दिनो एक कृषि अधिकारी मिले। हमने कहा—सुनाओ, क्या हाल है ?

वे बोले—क्या सुनाएँ हुजूर हम तो बरगदवाला से परेशान हैं। दो दिन नही बीतते कि एक बरगद छाप पत्र 'प्रियश्री' और 'सस्नेह' वाला मिल जाता है। ये बरगद हमे चैन करने ही नही देता।

मुझे समझ मे नही आया कि वे गभीर चिन्तन की बात कर रहे है या व्यग्य की। मैंने कहा—बरगद तो हमारी सस्कृति है। इसके नीचे जो बैठा, वह ज्ञानी हो गया।

वे बोले—बस, यही तो परेशानी है यह प्रजातत्र हर पाँच साल मे लोगो को थोक के भाव ज्ञानी बना रहा है। एक बरगदवाला लेटर पैड मिला नही कि आदमी ज्ञानी हो गया। अब मुझे समझ मे आया कि कृषि विभाग वाले के पास भी दिमाग ऊँचा होता है। मध्यप्रदेश शासन के मोनाग्राम मे जो बरगद अकित है, उस पर वे अपने बहुमूल्य विचार व्यक्त कर रहे थे। राजधानी से रोज सैंकडो की तादाद मे बरगद वाले कागज चलते हैं और इन्ही कागजो के सहारे पूरे प्रदेश का स्वच्छ प्रशासन चल रहा है। यह बरगद पूरे प्रदेश मे फैला और इसकी जडें दूर तक है। बरगद छाप एक कागज से कई असभव काम सभव हो रहे हैं। कई लोगो की रोजी रोटी चल रही है। भगवान बुद्ध को भी इसी बरगद के नीचे ज्ञान मिला था। आज हालत यह है कि हर सरकारी कर्मचारी बरगद की पूजा करता है और यथाशक्ति प्रसाद चढाता है।

मैंने कहा—मालिक एक बात समझ म नहीं आई।

उन्होंने पूछा—क्या ? मैंने कहा—आपके हिसाब से तो यह बरगद 'ज्ञान वितरण केन्द्र' है।

वे ठहाका लगाकर हँसे। बोले—अब आपको क्या बताएँ हुजूर हम तो ठहरे सरकारी आदमी जहाँ बरगद दिखा वही मत्था टक देते हैं जानते हैं कि बरगद से टकराएँगे तो अपना ही सिर फूटेगा।

वे विशुद्ध कृषि विभाग वाले स्टाइल म बात को घुमा फिराकर कह रहे थे। वसे भी सरकारी कमचारियो की तो आदत होती है कि कागज देखा नही और उस पर लिख दिया—सीन। और फिर टिप्पणी लगाकर अपनी बत्तक बिठा दी। उनका यह अदाज दखकर मैंने कहा—मुझे समझाइए कि बरगद वाला ज्ञानी कैसे हो गया ?

वे बोले—सत्ता बडे से बडे मूख को ज्ञानी बना दती है अब देखिए ना हमने कृषि मे पोस्ट ग्रेजुएशन किया है और आठवी पास बरगद वाले बाबा हम ही समझा रह है कि उन्नत फसल के लिए क्या करना चाहिए। बरगद वाले ह इसलिए ज्ञान पल रह हैं और हम सरकारी आदमी हैं इसलिए झेल रहे है उनका ज्ञान। बरगदवाल हैं इसलिए जो ढकेल दें वही ज्ञान हो जाएगा।

अब स्थिति यह थी कि मुझे पूछना ही पडा कि ये बरगदवाले बाबा आखिर कौन है। व बोले—देख लेना तुम खुद छत्तीसगढ एक्सप्रेस स आ रहे हैं आज।

मैंने पूछा—भोपाल कैसे गए थे ?

वे बोले—लोगा का दु ख-दद लेकर गए थे। यहा आते हैं तो हफ्ता पद्रह दिन रहते है और दीन दुखिया का दु ख-दद और शिकायतें बटोरते हैं फिर भोपाल की बडी दरगाह पर इन लोगा के लिए दुआ करते है। बाबा तो कहते हैं कि तीन साल उनकी हयात बाकी है जिनको अपन लिए दुआ करवाना हो करवा लो इसके बाद व इस फानी दुनिया से परदा कर जाएँगे।

मैंने कहा—सो तो ठीक है लेकिन ये बाबा के साथ बरगद कहाँ स चिपक गया ? बाबा आदमी का बरगद से क्या लेना दना ?

वे बोले—हुजूर, आप जैसा आदमी हमने इस प्रजातंत्र मे नही देखा। आप जब इतनी-सी बात नही समझ सकते तो भारतीय सविधान के अनुसार आपको चुल्लू भर पानी मे डूबने का पूरा अधिकार है हम इतनी देर से समझा रहे है, आपको यह बात समझ मे नही आई। इसी बरगद के कारण तो वे पूरे प्रदेश मे सिद्ध पुरुष बने फिर रहे है वर्ना उनको पूछना कौन था यहाँ अब खुदा के लिए ये मत पूछना कि उनके हाथ मे किसने धरा दिया यह बरगद।

कृषि अधिकारी की बातो मे गूढ दर्शन था। वे बातो को दार्शनिक मोड दे रहे थे। बाबा को बरगद पकडाने वाले हाथ कौन से थे, यह समझना अभी मेरे लिए बाकी था। हमारी बातें चल रही थी कि एक चपरासी उन्हें खाकी रग का लिफाफा दे गया। उन्होने लिफाफे से कागज निकाला और पढकर बोले—लो देखा आ गया फिर एक बरगद छाप।

दूसरे दिन शहर के चील कौवे सभी उडकर बरगदवाले बाबा के आस्ताने की ओर जाने लगे। सिंचाई विभाग और लोक कर्म विभाग वाले हरी चादर लेकर बाबा को चढाने निकल गए। जिसके हाथ मे देखा एक उदबत्ती का पैकेट और इलायची दाने की पुडिया। मतलब ये कि बाबा भोपाल से आ गए हैं। लोगो की भीड चली आ रही है बाबा के दीदार के लिए। गुरुजी से लेकर कायपालन यन्त्री तक सभी की आँखो म बाबा के प्रति श्रद्धा है। बाबा का आस्ताना नगर से पाच किलोमीटर दूर है। लेकिन आज यह दूरी बहुत कम लग रही है। स्कूटर मे लेकर सरकारी जीपें और साइकिल पर सवार लोगो का एक ही लक्ष्य है—बरगदवाले बाबा। लोगो के दिलो मे अपनी-अपनी मिन्नतें हैं, अपने अपने मसूबे हैं। बाबा सब पूरी करेंगे। बाबा महान हैं। बाबा हमारे हैं। हमने उनसे पाँच साल के लिए गडा बँधवाया है। बाबा ने जिन लोगो को तावीज दिए हैं वे फल फूल रहे हैं।

सडक पर बाईं ओर एक कुआँ है। वहाँ से एक पगडडी कटकर सीधे एक बरगद के झाड के पास जाती है। इसी झाड से लगी हुई बाबा की कुटिया है। बाबा अब खादी का कुरता और पाजामा ही पहनते हैं। पहल

की बात और थी।

मैं जब उनके दरबार म पहुँचा तो एक यत्री हाथ जोडे बाबा मे दुआ माँग रहे थे। बाबा मौन हैं। सोच रहे हैं—दुआ दें कि नहा दें। साला वाद म बदमाशी तो नहीं करेगा ? कुछ फकीर बाबा की कुटिया के बाहर बेंच पर बठे है। सोच रहे हैं कि आज सिंचाई विभाग वाले लगर खिलाएँगे ता वे भी वहाँ निपट लेंगे बाबा के साथ। आखिर फकीर हैं। खान पीन के अलावा उनको कुछ दिखता भी ता नही।

बाबा ने एक बरगद छाप कागज अपन लेटर पेड स फाडा और उस पर कुछ लिखकर यत्री को दे दिया। यानी कि—जा बच्चा तेरा काम बन जाएगा। फिर दूसरे की बारी आई। वह भी नजरें नीची किए खडा है। मन्नत माँग रहा है—बाबा, साले हेडमास्टर को यहाँ स खिसका बहुत परशान कर रहा है बच्चो को चन्दे के नाम से।

बाबा फिर बरगद छाप कागज पर कुछ लिखते हैं। यानी कि—जा बच्चा, तेरी मन्नत पूरी होगी।

अब देखा तो लोककम वाले आ गए चादर लेकर। उनकी मन्नत बाबा की कृपा स पूरी हुइ है। वे श्रद्धा से चादर चढा रहे हैं। बाबा के सामन नतमस्तक है। बाबा बोले—बच्चा, सब बरगद का कमाल है मैं तो निमित्त मात्र हूँ। सब ऊपर वाला करता है जा खुश रह और कमा खा। बडी धूमधाम है। बरगदवाले बाबा के आस्ताने पर मेला लगा है। दीन दुखियो से घिर हैं बाबा। बाबा सबका बरगद की पुडिया दे रहे हैं। उनकी तकरीर जारी है—जो कुछ होगा इस बरगद मे हागा बाकी सब बेकार है बरगद है तो सब कुछ है जिस दिन यह बरगद नहा रहेगा, यह भीड नहीं रहेगी, ये चादरें नहीं रहेंगी बरगद महान है।

मैंने देखा कि कृषि अधिकारी भी इसी तरफ आ रहे हैं। मैं उनके पास गया। कहा—मालिक, आप कैस ?

वे बोल—कुछ नान की बातें लेन आया हूँ आपन कुछ माँगा हुजूर ?

इसके पहले कि मैं कुछ कहता, वे बरगदवाले बाबा के सामन हाथ जाडकर खडे हो गए।

एक धोती छाप व्यग्य

आदमी ने जिस दिन स धोती लपटना प्रारभ किया ठीक उसके दूसरे दिन से धोती म फँस कर गिरने की परपरा अपन देश म शुरू हुई। उसी दिन से ही धोती बाँधने के बाद पीछे मुड कर देखने की राजनीतिक और सामाजिक आदतो का भी सूत्रपात हुआ। पीछे मुड कर देखन के पीछे जो सायकोलाजी काम करती है वह यह है कि आदमी इस बात से सतुष्ट हो जाए कि पीछे से धोती खीचने का काम नही हो रहा है। अपनी नगई को छिपाना गौण रह गया और देखा देखी की यह आदत प्रधान हो गई। इस आदत से प्रेरित होकर कई लोग 'प्रधान' हो गए। बहरहाल, धोती और आदमी का सबध जो विकसित होना शुरू हुआ तो आज तक विकसित हो रहा है।

हमारे एक मित्र आदमी भी हैं और धोती भी पहनते हैं। पहले वे हाफ धोती पहनते थे। इसमे सुविधा यह होती थी कि उनकी टाँगा को धोती मे फँसने का चास बहुत कम रहता था। वे कमोबेश घुटना छाप थे इसलिए अपने घुटने धोती के बाहर रखना ही पसद करते थे ताकि सनद रहे और वक्त जरूरत पर काम आए। लेकिन जब भारतवष ने विकास करना प्रारभ किया तब उनकी धोती की लबाई भी सिचाई परियोजना की तरह लम्बी हो गई। अब तो वे पूरी तरह आभिजात्य वग से जुड गए हैं। इसलिए उन्हे छोटी धोती पहन कर घुटना दिखाने मे शम आती है। लम्बी धोती म व कद और पद से काफी सम्पन्न होने का भ्रम पदा कर लेते हैं। धोती की लम्बाई के साथ उनकी सम्हल कर चलने की आदत

भी बन गई है।

लेकिन हानी का टालना अपने देश में बहुत मुश्किल काम होता है। अब स्थिति यह है कि नगर के कई गण्यमान्य टाइप लोगों की नजर उनकी धोती पर है और इसके पहले कि वे खुद इस दुर्घटना का सामना करें उन्होंने धोटी टाइम धोती खींचने की कोचिंग कक्षाएँ अपने घर पर प्रारंभ कर दी हैं। ये कुछ युवा धोती कर्मी भी तैयार कर रहे हैं। कुल मिलाकर उनकी ट्रेनिंग की प्रक्रिया यह है कि सबसे पहले धोती की परिक्रमा करो और देखो कि किस कोण से झटका देने पर धोती नीचे आ जाएगी। फिर बारीकी से इस बात का अध्ययन करो कि किस स्थल पर धोती खींचने पर सामने वाला व्यक्ति आकर्षक लगेगा। वे कभी कभी भोपाल और दिल्ली का चक्कर लगाकर अपने वरिष्ठों की सलाह भी ले लेते हैं। इस सिद्धांत के पीछे मूलमंत्र यह है कि अगले को आपकी नीयत का पता न चले। यदि पता चल जाए तो आप तुरंत उनके चरणों पर गिर कर कहिए—श्रीमान, मैं आपकी धोती खींचने नहीं आया था। मैं तो आपके चरण स्पर्श करना चाहता था, दुर्भाग्य से धोती का छोर मेरे हाथ में आ गया।

धोती पहनने वाला हर आदमी जानता है कि उसकी धोती के साथ खिंचाई की संभावना हमेशा जुड़ी है। इसलिए समझदार किस्म का धोती-धारी आदमी अपनी धोती की गठान मजबूत बाँधता है। कई लोग तो धोती अपने विधानसभा क्षेत्र में पहनते हैं और गठान बँधवाने दिल्ली चले जाते हैं। यानी कि धोती का दारोमदार गठान पर है। जिस आदमी को गठान मारने की तमीज आ गई, समझ लो उसकी धोती भी सुरक्षित हो गई। खींचा बटा, कितनी खींचते हो। ये भया जो की गठान है, आसानी से नहीं खुलेगी।

बिना गठान वाली धोती केवल कपड़ा होती है। यही कपड़ा जब ढंग से घुन्नट डालकर सही गठान के साथ किसी विधायक ग्रेड के आदमी की कमर में लपेट दिया जाता है तब कहा जाता है कि अब इस आदमी को राजनीति में धोती लपेटने की तमीज आ गई है।

पिछले दिनों एक अजीब दुर्घटना हो गई। हमारे एक मित्र दूसरे की

धोती मे फँस कर गिर गए। मैंने दूसरे की धोती मे फँस कर गिरने वाला पहला आदमी देखा था। जब मैंने उससे यह सवाल किया कि यह सब हुआ कैसे तो मित्र ने कहा—बडे लोगो की धोती मे फँस कर गिरना भी गौरव की बात होती है। मैंने पूछा—सो कैसे ? वे बोले—जब गिरनेवाले का जिक्र हाता है ता उसके साथ उस आदमी का भी जिक्र होता है जिसकी वह धोती होती है।

—आपको दूसरा की धोती मे फँस कर गिरन की प्रेरणा कहा से मिली ?

—प्रेरणा गई भाड मे, मैं गिरा नही था, मुझे गिराया गया है। राजनीति मे ऐमा ही होता है।

—इसके पीछे दशन ?

—दशन यही है कि धोती इसीलिए पहनी जाती है कि या तो खद फँस कर गिरो या दूसरो को गिराओ।

मैंने सोचा कि दूसरा को गिराने वाली प्रथा ही हमारे प्रजातत्र की पहचान है। धोती चाहे मोरारजी भाई की हा या चौधरी चरणसिह की, आखिर वह धोती ही रहती है। जब तक देश मे धोतियाँ रहेंगी, ऐसा ही होता रहेगा। हर पाच साल बाद हम अपना एक आदमी तयार करेंगे और उससे कहेंगे—जा भइया, तू ऊपर चला जा और अपनी धोती की लबाई बढा। तेरी धोती की लम्बाई से ही हम अपने क्षेत्र का विकास नाप लेंगे, धोती पहन और सरकारी गाडी म घूम। जा, तेरा राम रखवाला।

हमे विश्वास है कि वह पाँच साल म अपनी धोती मे गठान बाँधन मे प्रवीण हो जाएगा। लाग उसकी धोती खीचेंग लेकिन वह नगा नही होगा। सच्चा प्रजातत्र का सुख यही है। रहिमन होत तो कहते—रहिमन धोती राखिए, बिन धोती सब सून।

सगीत-प्रेमी डाक्टर

यह कथा मेरे डाक्टर दोस्त की है। डाक्टर इसलिए कि बहुत-से लोगो की मौत और जिन्दगी का |निणय उनके हाथ मे होता था। और दोस्त इसलिए कि अपना यह सिद्धात है कि सारे जमाने से दुश्मनी करो लेकिन डाक्टर जहाँ भी रहे, जैसा भी रहे उस दोस्त बनाकर रखो। उसकी कृपा रही तो बचे रहोगे, नही तो बस जाना ही जाना है।

लेकिन एक बात आपको बताए देता हूँ कि यह डाक्टर बहुत विचित्र किस्म का प्राणी था। इसलिए कि वह अब इस शहर मे नही है। सरकार ने उसका सगीत प्रेम देखकर उसे दूसरे नगर मे पदस्थ कर दिया। 'बात निकलेगी तो बहुत दूर तक जाएगी' वाले स्टाइल म व इस शहर से बहुत दूर चले गए। अब तो बस केवल उनकी यादें शेष हैं। वे जिस सरकारी क्वाटर मे रहते थे, वहाँ से निकल जाएँ ता खिडकी से तलत महमूद पुकारता है-- सब कुछ लुटा के होश मे आए तो क्या किया' और रोशन दान से लता मगेशकर कहती है—'मेरी आखो म बस गया कोई रे मोहे नीद न आए मैं क्या करूँ'। कमरे की दीवारो पर अनूप जलोटा, पकज उधास, गुलाम अली महदी हसन की गजलो के अलावा आपको यदि कोई चीज मिलेगी तो वह है दवाइयो की गध। इसी मिली-जुली महक स वह बेचारा क्वाटर आज भी उन्हे याद कर रहा है। आप कहेंगे हरिओम शरण कहाँ गए ? मेरा जवाब है कि भाई साहब कुछ तो उनकी मिसस के लिए भी छोड दीजिए कमरे मे।

मेरी पहली मुलाकात उनके सरकारी अस्पताल म हुई थी। मुझे

देखकर वे जगजीत की गजल गुनगुनाने लगे—कोई पास आया सबेरे-सबेरे।

मैं समझ गया कि डाक्टर सगीत प्रेमी हैं जगजीत सिह का बचना मुश्किल है।

डाक्टर साहब दिखने मे कोई बहुत अच्छे नही थे लेकिन उनके चेहरे पर जो मोटा चश्मा लगा था, उससे उनकी खूबसूरती मे कुछ निखार आ गया था। मैंने इसी से अदाजा लगा लिया कि ये डाक्टर जो हैं इ्ह नेत्र विशेषज्ञ होना चाहिए और पट्ठा निकला भी वही। जब तक मैं उसके पास पहुँचता उसने जगजीत सिह का एल० पी० अपने मुँह से निकाल दिया था और लता का एक ई० पी० बजाते हुए बोले—मेरी आखो म बस गया कोई रे।

मैंने कहा—मोतियाबिन्द हो गया है क्या ?

वे चौंके। सोच रहे होंगे सरकारी अस्पताल म कौन सगीत प्रेमी आ गया ? मुझे पास बुलाकर बोले—क्या तकलीफ है ? मैंने कहा—दीवारो से मिलकर रोना अच्छा लगता है हम भी पागल हो जाएँगे ऐसा लगता है।

बस वही से हमारी दोस्ती हो गई। इसका श्रेय मैं लता मगेशकर और पकज उधास को ही देना चाहता हूँ। उनकी गायकी मे डाक्टर और मरीज की जो सवेदना स्वर-लहरी है उसकी सार्थकता का अहसास आज मुझे हो गया था।

उन्होंने मुझसे कहा—चलिए घर चलते हैं वही आपको देखेंगे और एक प्याला काफी का भी लेंगे।

सरकारी अस्पताल से लगा हुआ यह सरकारी क्वार्टर था जिसम सगीत की यह महान प्रतिभा निवास करती थी। सामने के बराडे मे लकडी की एक जाफरी थी जिसमे एक झबरेदार कुत्ता बँधा था। वह इस स्टाइल से गर्दन हिलाता रहा था कि मुझे लगा कि डाक्टर के इस कुत्ते म भी अच्छे और समझदार सगीत-श्रोता के गुण डाक्टर साहब की सगत के कारण आ गए हैं। दूसरा कुत्ता होता तो मुझ जैसे अजनबी को देखकर

भोंकता लेकिन उसमें इतनी समझदारी आ गई थी कि किस मरीज पर भोंकना है।

जाफरी पार करने के बाद ही एक बड़ा सा कमरा था। इस कमरे में एक खिड़की थी जो अन्दर से बंद थी और उस पर डाक्टर साहब ने वह अखबार ठोंक दिया था जिस पर विधानसभा चुनाव के बाद जीतने वालों के चित्र बने थे। इसमें इस बात का भी अंदाजा लगता था कि डाक्टर संगीत के अलावा जनप्रतिनिधियों की भी कद्र करने वाला है।

एक लम्बा सोफा और उसके सामने दो सोफे की कुर्सियाँ थीं जिन पर मेडिकल जर्नल्स, अखबारों की रद्दी और सुपारी का एक डिब्बा भी रखा था। संगीत से समय निकाल कर वे जरूर इनका अध्ययन करते होंगे और जब ऊब जाते होंगे तो सुपारी फाँक कर किसी गायक का निपटा देते होंगे।

मैंने पूछा—डाक्टर साहब यह खिड़की आपने बन्द क्या रखी है ? वे बोले—खिड़की से लगा हुआ सर्जन-क्वाटर है और वे नाक, कान और गले वाले हैं।

मैं समझ गया कि कुल मिलाकर इस सरकारी परिसर में संगीत का भविष्य सुरक्षित नहीं है। मैंने कहा—फिर आप कैसे जी रहे हैं यहाँ ? वे बोले—मैं किसी की परवाह नहीं करता रात भर मेरे यहाँ गायन गोष्ठी चलती है मैं जानता हूँ अधिक से अधिक मेरा ट्रांसफर हो जाएगा इससे ज्यादा यह औरंगजेब संगीत का और कुछ नहीं बिगाड़ सकता।

उन्होंने हारमोनियम सोफे के नीचे से निकाला और बोले—लगता है आप भी संगीत में रुचि रखते हैं हो जाए एक दो पुराने फिल्मी गीत मैं पुराने गानों का बहुत शौकीन हूँ जब मेडिकल कालेज में पढ़ता था उस समय के० एल० सहगल ही मेरे सब कुछ थे।

मैंने कहा—उनकी पुण्य तिथि तो 18 जनवरी को निकल गई। आपने तो मनाई होगी ?

वे बोले—हाँ मनाई थी। मैंने और मिसेस ने मिलकर 'बाबुल मोरा नैहर छूटो जाए' गाया था कि हंगामा हो गया अस्पताल में एक लाश आ गई पोस्टमार्टम के लिए और इंचार्ज ने मुझसे कहा कि यह पोस्टमार्टम निपटा दो मैंने कहा कि आज सहगल की पुण्य तिथि है—मैं यह काम

नही कर सकता ।

मैं सोच रहा था कि भारतीय सगीत की क्या हालत हुई होगी जब दो डाक्टर आपस मे भिड गए होगे ।

वे बोले—बस मेरी ठन गई उनसे मैंने कहा कि सगीत अपनी जगह है और नौकरी अपनी जगह मैं प्राइवेट प्रेक्टिस करूँ या अनूप जलोटा के भजन गाऊँ, इससे आपको क्या लेना है मैं आज यह पोस्टमाटम नही करूँगा यदि मैंने किया तो महफल की आत्मा मुझे कभी माफ नही करेगी आपको जो करना है कीजिए ।

उसने मेरी ओर देखा। अब तक मैंने हारमोनियम हाथ मे ले लिया था। काली एक और चार को मिलाकर मैंने कमरे को स्वरबद्ध किया और एक पुरानी चीज दाग दी।

वे बोले—ठहरो, मैं डेगची ले आता हूँ बिना ताल के मजा नही आएगा जिन्दगी मे रिदम ही सब कुछ है

फिर हम दोना भारतीय सगीत का सत्यानास करते रहे । उसके बाद हर हफ्ते हमारी गोष्ठी होती रहती थी। इस सरकारी क्वाटर ने हम बहुत झेला। एक मरीज और डाक्टर की दोस्ती को प्रगाढ किया। वे मुझसे हर बार कहते—यार, तुम्हारी आवाज तलत महमूद से बहुत मिलती है। यह उनका दुभाग्य था कि मैंने कभी उसके उत्तर मे यह नही कहा कि आप गाते हैं, तो लगता है जैसे लता जी गा रही हैं।

मुगल काल मे औरगजेब के समय जो दुर्गति सगीत की हुई थी, वह इस बार भी हुई जब उनको ट्रासफर आडर मिला। मियाँ बीवी ने मिलकर राजेन्द्र मेहता और नीना मेहता स्टाइल मे—'अलविदा ओ सनम ' गाया और मुझस बोले—देखना मैं इस भारतीय सगीत से मातियाबिन्द ठीक करूँगा किसी दिन ।

मरी दोस्ती उनसे थी, इसलिए मैं बच गया। दोस्त होने के नाते यह प्रयोग उन्होंने मुझ पर नही किया। इसलिए कहता हूँ, डाक्टरो स दोस्ती बनाकर रखो ।

कला-प्रेमियो की कमी है देश मे

कला प्रदर्शनी हुई। आड़ी तिरछी रेखाओ से जीवन को चित्रित किया गया। हर कलाकार महान होता है, जो न करे वही कम है। काले धब्बो से अपने तैलचित्र मे प्रतिक्रियावादी ताकत बता देगा आसमान को लाल कर देगा और आदमी को नगा दिखाकर देश की हालत बता देगा। बस, यही महानता होती है कलाकार मे जो उसे आम आदमी से अलग करती है। कला प्रदर्शनी का आयोजक कलाकार से भी महान होता है जो लोगो को आमन्त्रित करता है देश की हालत देखने के लिए और उससे भी महान आदमी वह होता है जो किसी कला प्रदर्शनी का उद्घाटन कर हमे बताता है कि कलाकार इतना महान है कि वह देश के चिंतन मे पूरी तरह जुटा है।

मेरे एक कलाकार मित्र कला प्रदर्शनी से बहुत प्रभावित थे। अपना एलबम लेकर मेरे पास पहुँचे। बोले—मैं कला का पुजारी हूँ कला के लिए ही जी रहा हूँ।

मैंने कहा—कौन-सी कला? एम० ए० इकनामिक्स वाली या बी० एस सी० फाइनल वाली?

वे बोले—आप मजाक कर रहे हैं। मैं अब भी सीरियसली कह रहा हूँ कि मैं तो बस कला का पुजारी हूँ, कला की पूजा ही मेरा जीवन है।

मैंने कहा—यह तो मैं आपका अलबम देखकर ही समझ गया। आपके अलबम म अगरबत्ती के निशान अभी भी मौजूद हैं।

वे जरा गभीर हुए। बोले—मैं अपने चित्रो की प्रदर्शनी लगना

चाहता हूँ लेकिन डरता हूँ।

मैंने कहा—बिलकुल मत डरिए। आपको कोई नही मारेगा।

वे बोले—वो बात नही शहर मे वैसे भी कला-प्रेमियो की कमी है। कही मेरा श्रम बेकार न हो जाए।

मैंने उन्हें धीरज बंधाया। कहा—हम जैसे कला प्रेमियो के रहते आप निराश क्यो होते हैं। हमे बस कही भी कला दिखनी चाहिए, हम वही ढेर हो जाएँगे।

उन्होंने अपनी कला का प्रदशन शुरू किया। एक पेंटिंग दिखाई। जिसका शीषक था—'दो करोडपति'। चित्र था दो भिखमगो का। जिंदगी की विसगतियों को उन्होने रेखाकित किया था। माडन आर्ट की रचना थी।

मैंने कहा—चित्र भिखमगो का और शीषक करोडपति? मुझे बात समझ म नही आ रही है।

वे बोले—इसीलिए कहता हूँ कि देश मे कला प्रेमियो की कमी है नही समझेंगे आप। यह माडन आट है कोई दकियानूस चित्रकारी नही।

मैंने फिर सवाल किया—भिखमगे और करोडपति आह देश कितना विकास कर रहा है!

उन्होने सिर पीट लिया। बोले—य बात नही है। दोनो करोडपति थ लेकिन एक जमीन का मामला लडते-लडते उनकी यह हालत पैदा हो गई। यह देश की न्याय व्यवस्था पर प्रहार है। समझे आप?

मैंने फिर पूछा—लेकिन एक नगा क्यों है? क्या वह पैदा ही ऐसा हुआ है?

वे बोले—वह तो मामला जीता है। जीत कर अपने वकील के पास आया और बोला—वकील साहब, मैं मामला जीत गया। वकील ने उसे ऊपर से नीचे तक देखा। बोले—जीत गए तो बडी खुशी की बात है लेकिन हमारा ईमान कहाँ है? नगा बोला—अब तो मेरे पास आपकी कृपा से केवल लगोटी बची है।

वकील साहब का मुशी बहुत अनुभवी था। बोला—तो क्या हुआ,

देखो तो इस प्रेमदास को। कांडी मार रहा है अच्छे काम मे। अरे भई, समझौता हो गया तो हो गया। अच्छा ही हुआ कि हो गया। समझौता करना हमेशा अच्छा होता। क्यो ?

हम लोग पान ठेले के सामने खडे होकर मूगफली खा रहे थे कि वह लका समझौता इधर आ गया। मैंने कहा—लो, मूगफली खाओ।

सम्पतलाल बोल—यार, एक बात बताओ। जाफना म मूगफली होती है या नही।

मैंन कहा—यार सम्पतलाल, एक हफ्ते स तुम लका समझौते को घोट रहे हो और हमसे पूछते हो कि उधर मूगफली होती है कि नही ? तुमको ही जब यह बात नही मालूम तो इस शहर म और कौन बता सकता है। हम लाग तो लका समझौते के बारे मे बिल्कुल जयहिन्द है। तुम ही बताओ कुछ, तो पता चले कि आखिर क्या समझौता हो गया।

सम्पतलाल ने एक मूगफली उठाई। उस हाथ मे इधर उधर घुमाया और फिर दाहिने हाथ की तजनी अँगुली और अँगूठे के बीच दबाकर उसम स तीन दाने निकाले। फिर उन तीनो दानो को मसलने लगे। एक एक छिलका निकल जाने पर उसे हथेली पर लेकर जोर से एक फूक मारी और पान पराग खाने के स्टाइल मे तीनो दानो को हवा में उछालकर सीधे मुह मे लिया और बोले—इत्ती बडी हो गई और तुम लोगो को कुछ नही मालूम ? पेपर पढते हा या केवल रद्दी बचने के लिए लेते हो ?

मैंने कहा—यार तुम्हारे रहते हमे पेपर पढने की जरूरत ही क्या है। कल ही लोग कह रहे थे कि अपने सम्पतलाल का नालेज लका समझौते के बारे मे बहुत तगडा है। नब्बे पैसे के पेपर मे वो बात कहाँ मिलेगी जो तुम बताओगे। कुछ बताओ यार, लका समझौते के बारे मे, नही तो हम पिछड जाएँगे। बोलो भइया ! कुछ बताओ यार ! आखिर जरूरत क्या पड गई कि लका समझौता करना पडा ? बिना किए काम नही चल सकता क्या ?

सम्पतलाल ठहाका मारकर हँसे। बोले—होगा क्या। बस समझौता हुआ।

—कैसे हुआ ?

सम्पतलाल—लंका समझौता करने वाले

अखबार पढ़कर परेशान होने में अपने सम्पतलाल अग्रणी माने जाते हैं। कभी कभी तो वे अखबार केवल इसलिए पढ़ते हैं कि कुछ दिन परेशान हो लें। जिस दिन लंका समझौते की बैनर लाइन चली, उसी दिन से सम्पतलाल परेशान हैं। जो दिखता है उसे रोककर कहते हैं—लो देखो, हो गया ना आखिर लंका समझौता। अब बोलो?

अब आप ही बताइए कि क्या बोलें। हो गया तो हो गया। लेकिन कौन समझाए। कम से कम सौ आदमियों को तो वे अब तक पकड़ चुके थे। इस समझौते के साथ वे दो-तीन शब्द और कहते थे और शब्द थे—जाफना, सिंहली और तमिल। इन तीनों का वे पहले मिक्सचर तैयार करते और उस पर जो पेपर लगाते वह लंका समझौते का होता। अब थोड़ा डेवलपमेंट उन्होंने हथियार डालने का भी कर लिया है। जो मिलता है उसे रोककर कहते हैं—गिरा दिया ना आखिर हथियार। अब बोलो?

पहले तो मैं समझता रहा कि कोई बहुत बड़े पत्रकार होंगे अपने सम्पतलाल। जाने कितना चिंतन-मनन किया होगा उन्होंने। बात इस तरह करते थे जैसे जयवर्धने अभी अभी उनके साथ हाफ चाय पीकर गए हों। जब वे अपनी राजदूत से उतरे तो धूल सने हुए। कपड़े अस्तव्यस्त, बाल बिखरे हुए लगता जैसे सीधे लंका से गाड़ी स्टार्ट कर यहां पान ठेले पर ब्रेक मारा है। उधर गाड़ी स्टैंड पर खड़ी करने के पहले ही कहते—

देखो तो इस प्रेमदास को। फांडी मार रहा है अच्छे काम मे। अरे भई, समझौता हो गया तो हो गया। अच्छा ही हुआ कि हो गया। समझौता करना हमेशा अच्छा होता। क्यो ?

हम लोग पान ठेले के सामने खडे होकर मूंगफली खा रहे थे कि वह लका समझौता इधर आ गया। मैंने कहा—लो, मूगफली खाओ।

सम्पतलाल बोले—यार, एक बात बताओ। जाफना म मूंगफली होती है या नही।

मैंने कहा—यार सम्पतलाल, एक हफ्ते से तुम लका समझौते को घोट रह हो और हमसे पूछते हो कि उधर मूगफली होती है कि नही ? तुमको ही जब यह बात नही मालूम तो इस शहर म और कौन बता सकता है। हम लोग तो लका समझौते के बारे म बिल्कुल जयहिन्द है। तुम ही बताओ कुछ, तो पता चल कि आखिर क्या समझौता हो गया।

सम्पतलाल ने एक मूगफली उठाई। उसे हाथ मे इधर उधर घुमाया और फिर दाहिने हाथ की तर्जनी अँगुली और अँगूठे के बीच दबाकर उसम स तीन दाने निकाले। फिर उन तीनो दानो को मसलने लगे। एक एक छिलका निकल जाने पर उसे हथेली पर लेकर जोर से एक फूक मारी और पान पराग खाने के स्टाइल म तीनो दानो को हवा में उछालकर सीधे मुह म लिया और बोले—इत्ती बडी हो गई और तुम लोगो को कुछ नही मालूम ? पेपर पढते हो या केवल रद्दी बेचने के लिए लेते हो ?

मैंने कहा—यार तुम्हारे रहते हमें पेपर पढ़न की जरूरत ही क्या है। कल ही लोग कह रहे थे कि अपने सम्पतलाल का नालेज लका समझौते के बारे मे बहुत तगडा है। नब्बे पैसे के पेपर मे वो बात कहाँ मिलेगी जो तुम बताओगे। कुछ बताओ यार, लका समझौत के बारे मे, नही तो हम पिछड जाएँगे। बोलो भइया ! कुछ बताओ यार ! आखिर जरूरत क्या पड गई कि लका समझौता करना पडा ? बिना किए काम नहीं चल सकता क्या ?

सम्पतलाल ठहाका मारकर हँसे। बोले—होगा क्या। बस समझौता हुआ।

—कैसे हुआ ?

—जैसे होता है। कभी अदालत गए हो? देख लो अदालत जाकर कि कैसे होता है समझौता। दो पार्टी जब लड़ते-लड़ते थक्ख हो जाती हैं तो वकील लोग कहते हैं कि समझौता कर लो। तुम्हारा मामला कमजोर है। दोनों परछी में बैठकर समझौता कर लेते हैं, बस।

मैंने सम्पतलाल को याद दिलाया कि हम लोग लंका समझौते के बारे में पूछ रहे हैं।

वे तुरत बोले—तो मैं कहाँ दूसरे समझौते की बात कर रहा हूँ। अरे यार, हम हड़ख खा गए शरणार्थियों का माल भेज भेज के। खुद को पोस नहीं पा रहे हैं और उनके पेट के लिए दाना भेजा। समझौता होगा कि नहीं? बोलो? बड़ी गहरी बात है, इस लंका समझौते में हाँ।

मैंने पूछा—क्या गहरी बात है? यार हम तो कुछ समझाओ। इस तरह गोल मोल बात मत करो सम्पतलाल। तुमसे हम लंका समझौता समझना चाहते हैं और तुम घुमा रहे हो हमें।

वह बोले—हम कहाँ घुमा रहे हैं। अखबार पढ़ते तो समझ में आती हमारी बात तुमको। अब अखबार तो पढ़ोगे नहीं और कहोगे कि लंका समझौता समझ में आ जाए तो कैसे होगा।

मेरे मित्र ने पूछा—तुम रोज पढ़ते हो अखबार?

वे बोले—अरे कहाँ टाइम मिलता है रोज अखबार पढ़ने का। तीन चार दिन में एक बार पढ़ लेते हैं कभी कभी।

मेरे मित्र ने जरा मजाक करते हुए कहा—तब तो यह हाल है। यदि रोज पढ़ने लगोगे सम्पतलाल, तो कई लोगों का भट्ठा बिठा दोगे। अच्छा यह बताओ कि लंका समझौते के पाइंट क्या-क्या हैं?

सम्पतलाल बोले—कोई हम गए थे समझौता करवाने कि पाइंट याद करके घूमते रहें? जो गया हो, उससे पूछो। हम तो बस इतना जानते हैं कि लंका समझौता हो गया। चलो ठीक हुआ। इतने दिनों बाद कुछ तो हुआ। सच बताएँ कि हमको पेपर पढ़ने में मजा ही नहीं आ रहा था। अब जरा मजा आ रहा है।—ऐसा कुछ न कुछ होता रहना चाहिए तो अखबार पढ़ने वालों को भी लगता है कि हम पानी में मच्छ पैसा नहीं फेंक रहे हैं।

हमने बहुत कोशिश की कि अपने सम्पतलाल लका समझौत पर हमारा ज्ञान बढ़ाएँ। कुछ बताएँ हम कि हम लका समझौते की क्या जरूरत पड गई थी। लेकिन उनके जीमने का टाइम हो रहा था इसलिए उन्होंने राजदूत स्टड से उतारी और उसे किक मारकर बोले—आज रात को अच्छी नीद आएगी। मजा आ गया।

वे लगभग इसी मुद्रा म मुस्कराते हुए दिखे कि 'जाओ मरो साले, यदि कुछ नहीं जानते लका समझौते के बारे में। हम क्या करें!' जितना मालूम था बता दिया। आगे पेपर पढो और समझो। सम्पतलाल लका समझौते को लेकर वहीं रात भर खडा रहेगा कि घर जाकर अपना हिसाब-किताब देखेगा ?

हम भी लगभग इतना सहम गए कि उसे देखते और कहते—दूर हट जाओ। लका समझौते वाला आ रहा है।

एक अखबार स ही इतनी प्रसिद्धि कम लोगो का ही मिलती है। जितनी अपने सम्पतलाल को मिली है। नब्ब पैसे मे और क्या प्रसिद्धि लोगे ? बोलो ?

बेगानी शादी मे अब्दुल्ला

शादियाँ बहुत हुई इस साल। सब अपने वालों की थी। बहुत दिनो से बेगानी शादी की इच्छा मन म थी। मैंने एक मित्र स पूछा—क्या गुरु! इस साल कोई बेगानी शादी नही हुई ?

वे बोले—एक-दो हुई थी। तुम दिल्ली गए थे तब।

—उधर अब्दुल्ला दिखा ?

—कौन अब्दुल्ला ? अब्दुल्ला फलवाला या लकडी की टालवाला ?

—मेरा मतलब है अब्दुल्ला दीवाना। मैंने सुना है कि वह अक्सर बेगानी शादी मे जरूर दीवाना होता है।

वह हँसा। बोला—समझ गया। उसकी बात कर रहे हो ना ? वह तो था। जनवासे मे जहाँ महिलाएँ थी वही घूम रहा था।

मैं उदास हो गया। उसने कारण पूछा तो मैंने कहा—यार, फिर मैं मिस कर गया।

वह बोला—चलो अभी दिखा दते हैं अपने पडोस मे ही तो रहता है।

मैंने पूछा—क्या काम करता है ?

वह बोला—बस वही अब्दुल्ला और क्या करेगा।

वह ठहाका लगाकर हँसा। मैंने सोचा कि साला एकदम मूख आदमी है। इसमे हास्य तो कही पैदा ही नही हुआ। मैंने कहा—हँसने की क्या बात है इसम ?

उसने हास्य को री-डबल करते हुए फिर एक ठहाका लगाया। मैंने

फिर कारण पूछा तो उसने कहा—ठहाका लगाकर हँसने से सामने वाला नरवस हो जाता है। तुमने अपने महाराज को नही देखा? हँसन की बात हो या न हो, इतने जोर का ठहाका मारते हैं कि सामने वाला घुटन टेक देता है।

—लेकिन यह तो मूखता है।

—तो मैं कब कह रहा हूँ कि बुद्धिमानी का काम है।

फिर थोडी दर चुप्पी रही। अचानक बिना किसी बात के वह फिर हँसा तो मैं समझ गया कि मेरा दोस्त भी मूख है। हँसने की कोई बात ही नही थी। अन्तिम बार मैंन फिर कारण जानना चाहा तो उसने कहा—हिन्दी साहित्य मे हास्य की कमी है, इसलिए हँस रहा हूँ।

मैंने सोचा, बडा उजबक किस्म का आदमी है। कहाँ की बात को कहाँ लाकर पटक रहा है। बेगानी शादी, अब्दुल्ला, हास्य और हिन्दी साहित्य सब का कॉकटेल बनाते हुए उसने कहा—तुम सोच रह होगे कि मैं मूख हूँ बिल्कुल ठीक सोचते हो। मूर्ख आदमी ही ठहाके लगा सकता है देश मे। जिस दिन बुद्धिमान हो जाओगे—हँसी गुम हो जाएगी। हँसोगे तो हेल्थ बनेगी। पेट के ऊपर चर्बी जमेगी। शादी की है तुमने?

जो आदमी रोज मेरे घर आता हो और जानता हो कि मैं सतान-प्रधान व्यक्ति हूँ और वह मुझसे पूछे कि मैंने शादी की है या नही, उस आदमी को आप क्या कहेंगे? यह सवाल सुनकर मैं ठहाका लगाकर हँसा। वह बोला—इसमे हँसन की क्या बात है? सीधा सवाल है।

मैंने कहा—तुम्हें देखकर मेरा भी मूड हिन्दी साहित्य मे हास्य की कमी दूर करने का हो गया।

वह बोला—तब ठीक है, मैं तो कुछ और समझा था।

—क्या समझे थे?

—बस वही।

देखा आपने? एक लेखक को कोई प्लाट मिल जाए और वह उस पर कुछ लिखना चाहे तो कितनी दिक्कतें सामने आती हैं? मेरे दोस्त जसे दस-बीस लोग इस देश मे हो जाएँ तो साहित्य का सत्यानास कर

देंगे। यहाँ का हास्य और यहाँ का व्यंग्य। अब यदि बेचारे आलोचक अभी भी यह कहते हों कि हिन्दी में हास्य की कमी है तो क्या गलती करते हैं? सोचा था कि इस बार 'शादियों के मौसम में अब्दुल्ला दीवाना' पर व्यंग्य लिखूंगा। एकदम नये किस्म का प्लाट है। यह मैं इसलिए कह रहा हूँ कि कहीं आप यह न समझने लगें कि मैं हमेशा घटिया प्लाट पर ही लिखता हूँ। बिल्कुल चरित्र प्रधान व्यंग्य बनेगा श्रीमान। बस अब्दुल्ला भर मिल जाए। अब बहुत कुछ तो मेरे इस दोस्त पर डिपेंड करता है। अब आप ये मत कहना कि ये वाक्य ही गलत है। इधर इसी तरह का वाक्य विन्यास चलता है। हेल्थ का डाउन होना, रोज अप डाउन करना, रिजाइन दे देना, सपोज करना आदि।

कल एक अफसर मिल गए। बोले सपोज करो कि अपने राजीवजी ने मन्त्री पद से इस्तीफा दे दिया।

मैंने कहा—क्यों सपोज करें?

—नहीं ये बात नहीं। सिर्फ सपोज करना है।

—अच्छा चलो सपोज कर लिया। फिर?

—अब सपोज करो कि व्ही० पी० सिंह प्रधानमन्त्री बन गए।

—मैं ऐसा सपोज नहीं कर सकता।

—देखो, सिर्फ सपोज करने की बात है।

—अच्छा चलो कर लिया। फिर?

—अच्छा अब सपोज करो कि

मैंने सपोज कर लिया कि ये भी मूर्ख आदमी है। इसका जन्म हिन्दी के व्याकरण के साथ करने के लिए ही हुआ है। 15 मिनट की अवधि में उसने मुझे पच्चीस बार सपोज करवाया।

यह उदाहरण मैंने इसलिए दिया कि कहीं आप यह न समझने लगें कि 'डिपेंड करना' गलत है। शादी का मौसम है तो [illegible] गों पर डिपेंड करना पड़ता है।

मैंने दोस्त से कहा—यार, [illegible]

अब्दुल्ला कहाँ मिलेगा।

वह तत्काल बोला—वो तो [illegible]

है ना इधर कैसे रहेगा।

—अच्छा तो मुझे बेगानी शादी के बारे मे ही कुछ बताओ। किसकी थी ?

—बस उसी की ?

—कैसे हुई ?

—बस, जैसे होती है।

—बाजा बजा ?

—खूब बजा।

—कौन बजा रहा था ?

—अब्दुल्ला और कौन बजाएगा।

—तुम तो अभी कह रहे थे कि वह जनवास म महिलाओ के पास था।

—वो अब्दुल्ला दूसरा है भइया। तुम तो समझ रहे हो कि देश मे एक ही अब्दुल्ला है।

—ये कहाँ स आ गया ?

—आएगा कहाँ स यहीं पैदा हुआ है।

—उसका इस बेगानी शादी से क्या लेना-देना ?

—बस वही।

अब आप बताइए कि लेखक क्या अपना माथा फोडेगा ? ऐस आदमी से क्या प्रामाणिक तथ्य निकालेगा ? इसीलिए लोग कहते हैं कि व्यग्य लिखना कठिन काम है। देश मे ऐसे कठिन लोग रहेंगे तो हिन्दी साहित्य मे ऐसी ही स्थिति व्यग्य की रहेगी। कितना बढिया प्लाट उठाया था मैंने व्यग्य के लिए। बेगानी शादी मे अब्दुल्ला दीवाना। लेकिन क्या लिखें ? इस दोस्त पर डिपेंड कर रहा था तो वह भी गोल बात करता है।

मैंने अतिम कोशिश करते हुए पूछा—कुछ पहचान तो बताओ यार अब्दुल्ला की।

वह फिर हँसा। बिल्कुल महराज की तरह ठहाका लगाकर बोला—सपोज करो वाले साह्ब को जानते हो ?

—मैं बेगानी शादी की बात कर रहा हूँ।

—तो मैं कहाँ अपनी शादी की बात कर रहा हूँ। बोलो जानते हो कि नहीं ?

मैंने कहा—जानता हूँ।

—जानते हो तो घर जाओ और कुछ लिखो। मेरे साथ माथा फोड़ी करने से कुछ नहीं मिलेगा।

मेरी इच्छा हुई कि उसकी गर्दन पकड़ कर पूछूँ—बता साले कहीं तू ही तो अब्दुल्ला नहीं है ?

एक व्यक्तिगत नीर-क्षीर

एक नीर-क्षीर का पच्चीस सौ रुपये पारिश्रमिक का जब चैक आया तो मुझे कोई प्रसन्नता नहीं हुई। मुझे लगा कि अखबार वाले लेखकों का शोषण आज भी कर रहे हैं। पच्चीस सौ रुपया कोई पारिश्रमिक होता है ?

आप सोच रहे होंगे कि मैं ऊटपटाँग हाँक रहा हूँ। अखबार से एक नीर-क्षीर का पारिश्रमिक पच्चीस सौ रुपया मिल ही नहीं सकता। यदि यह हो जाए तो जितने गुरु लोग हैं सब के सब नीर-क्षीर ही लिखने लगें और सरकार भी मुश्किल में पड़ जाए कि अब क्या करें। लेकिन मैं आपसे फिर कहता हूँ कि मैं बिल्कुल सही बात कर रहा हूँ। चैक तो पच्चीस सौ का ही आया और मुझे प्रसन्नता के बदले दुःख इस बात का हुआ कि वकालत छोड़कर मैंने स्वतन्त्र लेखन का रिस्क बेकार लिया। उधर कम से कम कुछ मंदबुद्धि लोग मिल ही जाते थे जो लेखक से ज्यादा पारिश्रमिक मेरी डिग्री का दे जाते थे।

मैंने सोचा कि चैक वापस कर दूँ और पत्र लिख दूँ कि वे पारिश्रमिक मनीआर्डर से ही भेजा करें। इसका मूल कारण यह था कि चैक के कलेक्शन में 950 रुपया लग जाता था और पारिश्रमिक हाथ में मात्र पंद्रह सौ पचास रुपया ही आता था। यह नुकसान सहन करने की हिम्मत मैं इसलिए भी उठा रहा था कि एक लिफाफे में मात्र साठ रुपये की ही पोस्टल टिकट लगती थी। साठ रुपया जाए तो जाए, मनीआर्डर आने में चौबीस सौ चालीस रुपये तो हाथ में आ जाएँगे।

शाम होने का थी। घडी मे शाम के पचास बजे थ।

आप साच रह हाग कि भाँग ता नागरजी को भी प्रिय थी लकिन एमा ऊलजलूल उडान कभी नही लिखा, जो मैं अभी लिख रहा हूँ। आपको बता दूँ कि मैंने भाँग वाँग नही ली है। हकीकत यह है कि सरकार न घडियो मे दशमलव प्रणाली लागू कर दी है। और एक दिन अब सौ घटे का होने लगा है। ततीय वग कमचारी भी गव से कहत है कि हम आफिस मे पचास घट अपना शरीर गलाते हैं। सरकार को भी गर्व होता है कि अपने यहाँ का कमचारी वग बहुत मेहनत करता है।

शाम के समय मेरे मित्र शर्माजी अक्सर आ जाया करते थे। फिर हम दोनो का प्रोग्राम घूमने और नाश्ते-पानी का बनता था। रात्रि लगभग 85 बजे हम मुन्ने के ठेले की कुल्फी जरूर खाते थे। इस कुल्फी कायक्रम की अध्यक्षता प्राय बस्ती सेठ ही करते थे। जिस दिन वे बहुत मूड म होते चौक पर खडे सभी लोगो को बुला कर कुल्फी खिलात। वैस भी चौक पर खडे-खडे चार पाँच हजार रुपया खच करने की उनकी आदत थी। दिन भर मे व सोलह सत्रह सौ रुपये की तो विल्स सिगरट ही पी जाते थे। हम जब बस्ती सेठ से कहते कि आप इतना खच क्या करत हो तब व हँसते हुए जवाब देते—यार एक गाडी भूसा नहीं सही।

आप फिर विश्वास नही करेंगे। भूसा उन दिना पच्चीस सौ रुपया गाडी बिकता था। मेरी जेब मे तो कवल दो-तीन हजार रुपये ही रहत थ इसलिए जब मेरी बारी मुन्ने को कुल्फी [illegible] न।
डरता रहता कि कहीं कोई पहचान क[illegible]
लेखक आदमी की हिम्मत तीन प्लेट म[illegible]
मौका देखकर कभी-कभी मैं भी अपनी [illegible]

अब आप ही [illegible] कि पच्चीस सौ
म तीन प्लेट कुल्[illegible]
डबल मेरे लिए, [illegible] ढाई
शर्माजी के [illegible]
पेमेन्ट केवल [illegible]
पा, चमन [illegible]

एक 550 रुपये की होती थी। किशोर ने इसी पान ठेले से बिल्डिंग टिका दी थी। यानी कि पान-सिगरेट का बिल ही अट्ठारह सौ रुपया हो जाता। जिस दिन मुझे पेमेंट करना होता मेरा खर्च तीन हजार आठ सौ रुपया होता। अब यदि एक नीर क्षीर से पच्चीस सौ रुपया मिला तो मान कर चलिए कि उसमे जब अपनी तरफ से 1300 रुपये मिलाता तब चौक पर मेरी हैसियत इतनी बनती कि मैं अपने दो दोस्तो को कुल्फी और पान खिला सकूं। मैं मुन्ना कुल्फी वाले के पास जाकर कहता, बाकी पैसे सुबह ले लेना।

कहने का मतलब यह कि व्यग्य लेखक की स्थिति खराब ही थी। जो लोग मेरी तरह स्वतन्त्र लेखन पर आश्रित थे उनकी तो और भी सोचनीय थी। किसी व्यग्य कथा का पारिश्रमिक मिलने के बाद सौ बार सोचना पडता कि दोस्तो को इटरटेन करें या नही ? हाफ चाय ही पाँच सौ रुपये मे आती थी। बत्तीस सौ रुपये किलो तो फल्ली तेल था। जिस पारिश्रमिक से एक किलो फल्ली तेल भी न आए उसे पाकर भला क्या प्रसन्नता हो सकती है ? इसीलिए मैं सोच रहा था कि इस बार साहब से बात करके अपने लेखो का पारिश्रमिक पच्चीस सौ की जगह तीन हजार प्रति नीर क्षीर करवा लूगा। कहूँगा कि महगाई इतनी बढ गई कि कम पारिश्रमिक म पासाता नही है।

मुझे लगता है कि अब आप इस निणय पर पहुँच ही गए होगे कि आज का यह नीर क्षीर केवल बकवास ह। आप सोच रहे होगे कि आपका समय मैंने बर्बाद किया।

बात दरअसल यह है कि यह नीर क्षीर लतीफ घोंघी का है ही नही। यह तो मेरे लडके के लडके का है। वह भी घोंघी के नाम से ही व्यग्य लिखन लगा था। यह परम्परा तो हिंदी साहित्य मे सौ साल पुरानी है।

यह नीर क्षीर सन् 2087 मे प्रकाशित होने वाले अमत सदेश का है जब हर वस्तु के दाम सौ गुना बढ गए थे। निश्चित तारीख तो मैं आपको बता नही सकता क्योकि फिर चक्कर मे पड जाएगे। दस माह का एक साल होता था और एक माह म सौ दिन हुआ करते थे। दशमलव प्रणाली उधर भी सरकार ने लागू कर दी थी।

प्रसन्नता मुझे इसी बात की है कि मेरा नाती भी व्यग्य लिखने लगा था, मरी तरह चौक पर कुल्फी खाने का शौकीन हो गया था।

केवल इस नीर-क्षीर का एक पात्र बिल्कुल सही है और वह है बस्ती सेठ। उनकी उमर आज एक सौ सत्तावन साल की है। दिलेरो की उम्र वैसे भी खमीनो से ज्यादा होती है। कृपया यह न समझिएगा कि उम्र मे भी दशमलव प्रणाली लागू हो गई थी। बस्ती सेठ मुझे इतना चाहते थे कि एक दिन मैंने ही कह दिया कि सेठ, मेरी उमर भी आपको लग जाए, आप तो हमे कुल्फी खिलाते रहो। बस, उसी दिन से लग गई।

'लेखक की वाणी मे इतनी शक्ति आ गई थी वह केवल इसीलिए कि मैंने वकालत छोड दी थी। ऊपरी तौर से मैं जरूर कह रहा हूँ कि मुझे नीर क्षीर का पच्चीस सौ का चैक प्राप्त कर प्रसन्नता नही हुई लेकिन सही बात यह है कि कलम की इस कमाई स मुझे अत्म सतोष हो रहा था।

और सबसे मजे की बात तो यह है कि इस महँगाई के बाद भी कोई आदोलन नही हो रहा है। वे दिन गए जब विपक्ष रेट बढ़ जाने पर मुखर होकर सामने आ जाता था और सरकार को कीमतें कम करनी ही पडती थी। वे दिन अब कहाँ रहे, विपक्ष भी तो नही रहा।

आशीर्वाद के लिए मुझे बुलाएँ

पिछले दिना देश मे जो दुघटनाएँ घटी उनमे सबसे प्रमुख थी—मेरे बाल सफेद हो जाना। हमारे एक मित्र ने कई बार कहा था कि बालो का बीमा करवा लो। लेकिन प्रीमियम पटाने के डर से मैंने ऐसा नही किया। बीमे वाले तो यहाँ तक कह रहे थे कि एक बार बीमा भर करवा लो तुम्हारे बाल काले रखने की पूरी गारटी हम देते हैं। मैं तो बीमे वालो से वैसे भी बहुत डरता हूँ। बडे चिपकू किस्म के होते हैं। आपने जरा-सी बात की नही कि पीछे लग गए। आप सिनेमा जा रहे हैं तो आपकी सीट के पास बैठेंगे, चाय पीने जाएगे तो पीछे लगे रहेंगे, यहाँ तक कि शका-समाधान के समय भी यही कहेंगे—यार हमारी मानो और बीमा करवा लो, मजे मे रहोगे, मरोगे तो बाल-बच्चे ऐश करेंगे।

इसी एलर्जी के कारण मैंने बालो की परवाह नहीं की और आज मेरा सिर झक सफेद है। इससे कई लाभ भी हुए। नारी वग में व्याप्त भय दूर हो गया। इज्जत बढ गई, चेहरा विद्वान व्यक्ति की तरह दिखने लगा। लेकिन सबसे बडा लाभ यह हुआ कि हम आशीर्वाद देने वालो की लिस्ट मे आ गए। यह बात हमे उस समय पता चली जब एक 'मिलनी' समारोह में हम डिनर खाने के लालच से गये थे। वर-वधू किराया भण्डार की महाराजा कुर्सियो पर बैठे थे। रिश्तेदारान आपस मे मिल रहे थे। अत मे आशीवाद का सिलसिला जब शुरू हुआ तो मच से सचालन कर रहे एक दाढ़ीदार सज्जन ने सबसे पहले हमारा नाम पुकारा।

बडा रोमाचक अनुभव था। जिस आदमी ने जिंदगी भर दूसरा के

अनक बातें बेसिक रूप में मुझे तय करना पड़ती थी । एक रिक्शेवाला ससुर अपनी बेटी की शादी में किस तरह का आशीर्वाद पसंद करेगा या फिर एक आफिस म काम करने वाला हेडक्लर्क अपने बेटे के लिए किस श्रेणी का आशीर्वाद पसंद करेगा—यह सब मैं तय करता था और पूरी तैयारी के साथ ही आशीर्वाद के मच पर आना था। टलेन्ट तो इस विद्या के लिए मुझम था ही, बस कमी थी तो प्रेक्टिस की।

अब तो स्थिति यह थी कि लोग कहते—फलां काम कर रहे हो अच्छा है, लेकिन आशीर्वाद के लिए लतीफ घोंघी को जरूर बुलाना बहुत तगडा माहौल बना कर देते हैं आशीर्वाद।

शादी तय हुई नहीं कि लडकी के पिता आते। कहते—आप 28 को रहेंगे ना, गुड्डी की शादी है आशीर्वाद तो आपका ही देना है।

मैं एक सीनियर आशीर्वादिस्ट की तरह डायरी निकालकर कहता, भई शर्मा जी, क्षमा चाहता हूँ 28 को तो मैं काडागाँव मे हू वहा एस० डी० एम० साहब की लडकी का पाणिग्रहण है 29 को जगदलपुर चला जाऊँगा वहां से वापस होते ही राजनांदगाँव भी जाना है कोठारी जी का निमत्रण कैसे ठुकरा सकता हूँ हाँ 2 के बाद आप जब कहें आ जाऊँगा आपकी बिटिया मेरी बिटिया लेकिन इस बार तो मुझे माफ ही करें।

आप सोच रहे होंगे, मैं सचमुच बहुत व्यस्त हूँ। नही, बिल्कुल नही। मुझे कही नहीं जाना है। लेकिन आशीर्वाद को कुछ लोगो ने चीप बना दिया है और सोचते हैं कि फोकट म ले लें, इस मानसिकता से लडना है मुझे। इसलिए मैं सामने वाले को महसूस कराना चाहता कि आशीर्वाद को रवडी समझ कर मत दो। इन सफेद बालो के पीछे अपने सस्कार की गरिमा बनाए रखने का महत्त्व छिपा है।

इस व्यवसाय के प्रति मेरी लगन और विकास की सभावनाओ को देखते हुए शहर के अनेक लोगों ने अपने बाल रखिया लगाकर सफेद कर लिए हैं। यह जेलेसी तो हमारी जन्मजात है। किसी को फलता फूलता देखना अच्छा नही लगता हमे। लोग कहते—साला बहुत आशीर्वाद भिडा रहा है हम भी देखते हैं

आशीवाद ही लिए हो वह मच पर आशीर्वाद दे तो इसे विधि की विडबना ही कहेंगे। दाढी वाले सज्जन का सचालन करने दिया। हम मच पर गए। अपने सिर पर हाथ फेरा और बोले—यह हमारा सौभाग्य है कि हमारे बाल पक गए है। सज्जनो, आपको बता दू कि आशीर्वाद देने के मामले म अभी नया हूँ। कुछ दिनो म प्रेक्टिस हो जाएगी तो आपकी कृपा स अच्छा आशीर्वाद भी दे लूगा। जिस ढग से शादियाँ हो रही हैं मुझे भी विश्वास हो चला है कि आपके सामने खडा यह आदमी किसी दिन आशीर्वाद देने के मामले मे अपना रिकाड कायम करेगा। वर वधू दाम्पत्य जीवन म प्रवेश कर रहे हैं, बडी अच्छी बात है। सबको करना ही चाहिए। अब सवाल इस बात का है कि आशीवाद कैसे दें ? लेकिन जब हमारा नाम पुकारा गया है तो देना ही पडेगा उल्टा सीधा। सो दे रहे हैं आशीर्वाद।

लेकिन एक बात बता दू कि मुझे धोखे से बुलाया गया है आशीवाद देने। आप मेरे सफेद बालो पर मत जाइए। बाल सफेद हो जाना और अच्छा आशीवाद दे लेना अलग अलग विधाएँ हैं। जरूरी नही कि जिसके बाल सफेद हो उसके आशीर्वाद से वर वधू का दाम्पत्य जीवन सुखमय हो। यह भी जरूरी नही कि

पीछे से एक बाराती चिल्लाया—ऐ बुडढ, जल्दी दे और फूट। अभी बहुत लोग बाकी हैं।

आशीर्वाद के मामले मे भी मुझे छूट हो जाना पडेगा ऐसा मैं नहा सोचता था। मैंने वर-वधू के लिए मगलकामना की और निश्चय किया कि कवि सम्मेलन के मच की तरह आशीर्वाद के इस मच को भी साधूगा। बाल सफेद हुए हैं तो इनका सही उपयाग तो होना ही चाहिए।

किस्मत से इस साल बडी शादिया हुइ। पिछले मुहूत मे मेरे ही शहर मे तीन सौ शादिया एक ही दिन म सम्पन्न हुईं, पब्लिसिटी भी कुछ ऐसी हुई कि नगर मे मैं अच्छा आशीवाद देने वाला माना गया। इसके पीछे मेरी अपनी मेहनत है। मैंने आशीवाद का अच्छा साहित्य पढा, मामूली सो दिखने वाली इस विधा को गभीरता म लेते हुए मैंने आशीर्वाद की श्रेणियाँ बनाईं। किस टाइप के आदमी को किस टाइप का आशीवाद सूट करेगा, *सकी लेंग्थ कितनी होगी, उसकी भाषा सपाट होगी या मुहावरेदार आदि*

अनेक बातें बेसिक रूप से मुझे तय करना पड़ती थी। एक रिक्शेवाला ससुर अपनी बेटी की शादी मे किस तरह का आशीर्वाद पसन्द करता या फिर एक आफिस म काम करने वाला हेडक्लर्क अपने बेटे के लिए किस श्रेणी का आशीवाद पसद करेगा—यह सब मैं तय करता था और पूरी तैयारी के साथ ही आशीर्वाद के मच पर आता था। टलेन्ट तो इस विधा के लिए मुझमे था ही, बस कमी थी तो प्रेक्टिस की।

अब तो स्थिति यह थी कि लोग कहते—फलां काम कर रहे हो अच्छा है, लेकिन आशीर्वाद के लिए लतीफ घोंघी को जरूर बुलाना बहुत तगडा माहौल बना कर दते हैं आशीवाद।

शादी तय हुई नहीं कि लड़की के पिता आते। कहते—आप 28 को रहेंगे ना, गुड्डी की शादी है आशीर्वाद तो आपको ही देना है।

मैं एक सीनियर आशावादिस्ट की तरह डायरी निकालकर कहता, भई शर्मा जी, क्षमा चाहता हूँ 28 को तो मैं कोंडागाँव म हू वहा एस० डी० एम० साहब की लड़की का पाणिग्रहण है 29 को जगदलपुर चला जाऊँगा वहाँ से वापस होते ही राजनादगाँव भी जाना है कोठारी जी का निमत्रण कैसे ठुकरा सकता हूँ हाँ, 2 के बाद आप जब कह आ जाऊँगा आपकी बिटिया मेरी बिटिया लेकिन इस बार तो मुझे माफ ही करें।

आप सोच रहे होंगे, मैं सचमुच बहुत व्यस्त हूँ। नही, बिल्कुल नही। मुझे कही नहीं जाना है। लेकिन आशीवाद को कुछ लोगो ने चीप बना दिया है और सोचते हैं कि फोकट मे ले लें, इस मानसिकता से लडना है मुझे। इसलिए मैं सामने वाले को महसूस कराना चाहता कि आशीर्वाद को रेवडी समझ कर मत दो। इन सफेद बालो के पीछे अपने सस्कार की गरिमा बनाए रखने का महत्त्व छिपा है।

इस व्यवसाय के प्रति मेरी लगन और विकास की सभावनाओ को देखते हुए शहर के अनेक लोगो ने अपने बाल रखिया लगाकर सफेद कर लिए हैं। यह जेलेसी तो हमारी जन्मजात है। किसी को फलता-फूलता देखना अच्छा नही लगता हमे। लोग कहते—साला बहुत आशीर्वाद भिडा रहा है हम भी दखते हैं

आज स्थिति यह है नगर में गली गली लोग बाल सफेद किए घूम रहे हैं। लेकिन जो पहले आ गया धंधे में वह सीनियर हो गया। और कमोबेश यही स्थिति मेरी है। चिटिया भी पापा का यही कहती है—पापा, आशीवाद के लिए धापी अक्ल को ही बुलाना।

जा मेरे दोस्त इस व्यवसाय मे लगे हैं उनस मैं यही कहना चाहता हूँ कि आशीर्वाद जैसी पवित्र और महान परपरा का रेट न घटाएँ। सबके बाल-बच्चे हैं। जियो और जीन दो के हिसाब से ही काम करें। मेरा क्या है जिस दिन लगेगा कि मारकेट गिर गया है, जगदीश के भाई से बाल काले करवा कर फिर साहित्य के मैदान मे आ जाऊँगा।

समझदार लोगो के बीच

कुछ समझदार किस्म के लोग लगभग हर शहर म होते हैं। वे शहर म केवल समझदारी के लिए पैदा होते है और समझदारी करते-करते ही पचतत्र म लीन हो जाते हैं। उन्होंने हमे बताया कि नगर निगम की नालियो से दुग ध आ रही है। आज तक हम तो यही समझत थे कि नालिया से बदबू आ रही है। तब नालिया के प्रति हमारा दष्टिकोण थोडा-सा बदल गया। हिदुस्तान म जहाँ भी नाली होगी, यही काम करेगी। तसल्ली के लिए चाहे डी० डी० टी० का छिडकाव करवा लो या इत्र छिडक लो, अपने देश की नालियो मे मच्छर डेरा जमा कर स्थायी निवास कर रहे है। निगम को चाहिए कि उन्हे पट्टा द दे। वैस ता मच्छरो म कोई खास नुकसान इस मिट्टी की देह को नही होता लेकिन उनकी समझदारी का तकाजा था कि इससे मलेरिया जैसा घातक राग होता है जो अस्सी करोड योनिया म भटकने के बाद प्राप्त इस मनु-दह को जयहिन्द कर दता है।

एक दूसरे समझदार भाई फिर वही बदबू की शिकायत लेकर आए। हमने उन्हें समझाया—देखो भाई साहब आपकी नाली में जा बदबू है वह आपकी अपनी बदबू है इसलिए नगर निगम की शिकायत करना मेरे हिसाब से उचित नही है।

वे बोले—अजीब बात करते हो यार अरे नाली हमने बनवाई है या कि निगम ने ?

हमने कहा—बनवाई तो निगम ने ही है लेकिन बच्चे ता आप धडा-

घड पैदा किए जा रहे हो। अब रोज प्रात काल नाली मे बिठाओगे ता नाली से बदबू नही आएगी तो क्या खुशबू आएगी ?

वे हमारी तरफ मुह फाडकर देखने लगे। हमने कहा—भइया, पहले अपने बच्चा का हाजमा ठीक करवाआ तो नाली आपम आप ठीक हो जाएगी। तुम्हारे बच्चे जब तक इस नाली के याग्य रहग तब तक नगर निगम वाला के बस का रोग नही है कि तुम्हारी नाली की बदबू दूर कर दें।

वे बोले—अरे यार, हम तो तुम्ह समझदार आदमी समझे थे लकिन तुम हो कि नगर निगम वालो का पक्ष ले रहे हा। क्या हमने कहा था उनको कि हमारे घर के सामने नाली बनाओ ?

मैंने बीच म ही कहा—नहीं, नगर निगम वाला का पागल कुत्ते ने काट लिया था।

वे बाले—बेकार बात मत करो यार। हम जानते हैं कि ये निगम का काम है कि नगर को स्वच्छ रखे और तुम हो कि निगम के पजामे म घुसे जा रहे हो।

हमने कहा—कुछ नियम-कानून भी समझोगे कि बस अपनी ही पेलत रहोगे। नगर निगम ने बता दिया है कि गदगी करना है तो एक निश्चित स्थान पर करो तो वह अपने जमादारा से साफ करवा देगी। अब तुम अपने बच्चा की फौज पूरे नगर मे छाड दोगे तो निगम वाले बेचारे कहाँ-कहाँ साफ करते रहेंगे गदगी।

अब की बार वे गुस्से मे आ गए। बोले—हम कह दते हैं बार-बार हमारे बच्चा का नाम मत लो। अपने दम पर पैदा किए है कोई निगम के भरोसे यह फौज नही लगाई है, समझे !

हम जानते थे कि उन्हें हमारा राष्ट्रीय स्तर का सुझाव पसद नही आएगा। वे तो इस शस्य श्यामला धरती पर गदगी के लिए ही पैदा हुए हैं। बस स्टैड जाएँगे तो वहीं बैठेंगे। जहाँ निर्देश दिया गया होगा कि यहाँ किसी प्रकार की शका करना मना है। तम्बाकू वाला पान मुह मे भर लेंगे और जहाँ सरकारी इमारत की दीवार दिखी वहीं पिच्च से थूक देंगे। बस स्टड पर जहाँ यात्रियो के बठने की जगह है वहाँ आज थूक की नदियाँ

बह रही हैं। सब उनके कारण।

उन्हें याद आया और वे पिच्च से हमारी बैठक की दीवार पर थूक कर बोले—निगम की तरफदारी कर रहे हो सो ठीक है लेकिन जिस दिन मलेरिया होगा तो तुम ही मारोगे बेमौत तब हमारी बात याद आएगी कि निगम की गदगी से पैदा हुए मच्छर कोई मामूली जीव नही हैं। नरक मे जाओगे तब पता चलेगा।

हमने कहा—भइया, जब हम इस शहर की गदगी मे जी रहे हैं तो नरक मे भी हमे कोई तकलीफ नही होगी। तुम तो अपनी नाली की गदगी देखो। हमारे स्वर्ग-नरक की चिंता मत करो। मौत यदि नगर निगम के मच्छर के हाथो लिखी है, तो उसे कोई नही टाल सकता।

वे बोले—ये दर्शन मत बघारो यार और गदगी की बात सोचो। नगर के हजारो आदमियो के भविष्य की बात है और तुम हो कि झटके मे उडा रहे हो।

मैंने कहा—तो क्या करें?

वे बोले—सम्पादक के नाम एक पत्र बनाते हैं।

मैंने कहा—तो क्या सम्पादक आ जाएँगे तुम्हारी नाली साफ करने? अजीब चुगद आदमी हो तुम भी। अरे सम्पादक को लिखने के बदले अपने चमचो को सही जगह बिठाओ भइया

वे बोले—मेरा मतलब है पेपर मे छपेगा तो निगम वाले ध्यान देंगे आजकल लोकवाणी और जनवाणी को मत्री लोग भी ध्यान से पढते हैं। बस छपने दो, फिर देखना कसे निगम वाले घर का पता पूछते आते हैं। तुरत सफाई हो जाएगी।

हमने कहा—भइया, ये निगम वाले है एक नही दस अखबार मे छापो लेकिन सफाई अपनी मरजी से ही करेंगे। तुम्हारा काम है गदगी करना तो तुम करते रहो। निगम का काम है गदगी साफ करना तो वह अपनी योग्यता के अनुसार साफ करेगी। मच्छर केवल तुम्हे ही नही काटेगा। शहर मे तुमसे भी मोटे तगडे लोग अभी जिन्दा है मच्छरो के लिए, रही मरने की बात तो चाहे मच्छर के काटने से मरो या सरकारी अस्पताल म मरो, एक दिन तो सबको उसी रास्ते पर जाना है। इसलिए

हमारा विचार है कि इस गदगी के लिए नगर निगम वालो को दोष देना उचित नहीं है। रही बात बदबू की तो हम कहते हैं कि इस बदबू से बचकर कहाँ जाओगे। चारो तरफ तो नालियाँ बह रही हैं क्या राजनीति मे और क्या समाज मे। इसलिए भइया हम तो कहते हैं कि अपने को बदबू से एडजस्ट करके चलो और गदगी को बर्दाश्त करने की क्षमता अपने अदर पैदा करना सीखो। थाडे दिन तकलीफ जरूर होगी बाद म अभ्यस्त हो जाओगे तो मजे मे रहागे। शुरू-शुरू म सबको ऐसा ही लगता है।

लेकिन वे समझदार किस्म के आदमी थे और समझदारो के साथ यही दिक्कत है कि समझदारी की बातो के साथ साथ कभी-कभी गालियाँ भी देने लगते हैं। पहले उन्होने नगर निगम को गालियाँ दी, बाद म प्रदश के स्वास्थ्य मत्री के सम्मान मे कुछ शब्द कहे और अत म मुझे गालियाँ देकर चले गए।

समझदार लोगो के बीच रहना भी कम समझदारी का काम नहीं है और यही सोचकर हम प्रसन्न हैं।

छेड़े जाने का मौलिक अधिकार

इस प्रजातान्त्रिक व्यवस्था मे हर ऐसी महिला को छेडे जाने का मौलिक अधिकार प्राप्त है जो इसकी पात्रता रखती है। पिछले दिनो भोपाल के सचिवालय मे एक विधायिका ने अपने इस मौलिक अधिकार का प्रयोग किया। उनकी इस सफलता से हमारे इधर की विधायिकाएँ दुखी हैं। सोचती हैं हाय हम सत्ता मे रहने के बाद भी इस काबिल क्या नही हुई ?

वल्लभ भवन मे एक बाबू ने विधायिका को छोड दिया। इस सुखद दुघटना के दिन हमारे विधायक अपने नगर मे थे। उन्हें ऐसे मौके पर राजधानी मे न रहने का दुख होना स्वाभाविक है। किसी अन्य क्षेत्र के विधायक ने शक्ति का परिचय दिया तो उनकी भी बाबूओ ने पिटाई कर दी। वैसे हमारे विधायक भी छेड छाड मे रुचि रखते हैं लेकिन उनकी छेड छाड का स्तर इतना ऊँचा नही है। वे अपन क्षेत्र मे इधर की चीज को उधर रख कर ही छेड छाड से सतुष्ट हो लेते है। यह बात अलग है कि कभी वे किसी सस्था मे अपना अध्यक्ष बनाए जाने की छेड छाड मे पिट जाते हैं।

हमारा तो यह कहना है कि छेड छाड करो लेकिन पहले सामन वाले को देख लो। यही कारण है कि अपने सचिवालय मे पिछले चार दशक से चल रही छेड छाड पकड मे नही आयी। आखिर किसी फाइल और विधायिका मे फक तो होता ही है। छेड छाड का सिद्वात यह है कि ऐसे आदमी को छेडो जो तुम से कमजोर हो। अब तुम बाबू होकर अडर-

सेक्रटरी को छेड दोगे तो पियेंगे नही तो क्या बचोगे ? बाबू का हक अपनी टाइपिस्ट तक ही बनता है। विधायिका के बारे मे एक बाबू का सोचना भी वर्जित है।

मुझे लगता है कि इस बार भी कुछ ऐसी ही गलती हुई। विधायिका का स्तर किसी मत्री के लिए उचित हो सकता है, सचिवालय के बाबूओ के लिए नही। बाबूओ न सोचा होगा कि प्रजातत्र म सब धक जाएगा। चला, छेड दो इसे। अब यह पूरी विधानसभा की प्रतिष्ठा का प्रश्न बन गया। एक विधायक को विधानसभा की गरिमा बनाए रखन के लिए बीच मे आना पडा और उस बाबू को डाटना पडा। बाबू लोग उसे भी शायद नही पहचान पाए और वे बेचारे पिट गए। कभी-कभी गरिमा बनाए रखन का काम भी बडा जोखिम का होता है।

हमसे यदि आप पूछें कि दोष किसका है तो हम ता बाबूओ के बचाव का ही पक्ष लेंगे। सारा दोष आला कमान का है। ऐसी महिला को टिकट ही क्यो देना जो सचिवालय म हगामा खडा कर दे और विधानसभा की प्रतिष्ठा को आच आने द। हम कहते है क्या प्रदेश म ऐसी महिलाओ की कमी है जिन्हे छेडना तो क्या दखन की भी इच्छा पैदा नही होती ? टिकट देना है तो ऐसी महिलाओ को दो तो कुछ नारी कल्याण की बात भी सार्थक हा।

कुछ भूल उन महिलाओ की भी है जा सचिवालय म सज सँवर कर आती हैं। इसलिए तो काग्रेस मे खादी पहनन का रिवाज है। अब आप गाडन सिल्क की चिकनी साडी पहन कर सचिवालय जाएँगी तो किसी न किसी की नजर फिसलेगी ही। खादी हो ता जरा नजर भी ठहर जाए। इससे सचिवालय के बाबूओ को दोष दना ठीक नहा है।

विधानसभा चुनाव होने के बाद हर बाबू को तत्काल विधायक और विधायिकाओ की तस्वीर द देनी चाहिए और एक मेमा भी जारी कर देना चाहिए कि इन्हे पहचान लो ये हमारे प्रदेश के जनप्रतिनिधि हैं इनस बिल्कुल छेड छाड मत करना बाकी तुम लाग कुछ भी करो प्रशासन को कोई आपत्ति नही है।

यह व्यवस्था होती तो बेचारे बाबू भी पहचानते कि कौन विधायिका

है और कौन डिस्पेंच क्लर्क है। अब आपने ये काम तो किया ही नहीं और कर्मचारियों का दोष देते हो। जब बेचारे पहचानते ही नहीं, तो छेड़ेंगे नहीं तो क्या करेंगे ? अब आपको समझ म आया कि अपने प्रदेश के बाबू को जब तक पहले से नहीं बताओगे कि इसे नहीं छेड़ना है, व नहीं समझेंगे।

वैसे इन्फारमेशन से अल्लम-गल्लम लिटरेचर प्रकाशित हो रहा है। डायरियाँ छपवा कर बाँटी जाती हैं। हम कहते हैं कि प्रशासन जब सरकारी छुट्टियों की लिस्ट छाप कर बँटवाता है तो उसी के साथ एक लिस्ट और लगा दे कि किन्हें छेड़ना है और किन्हें नहीं छेड़ना है। अब कहते हो कि विधायिका के साथ छेड़ छाड़ बुरी बात है। विधायिका हो गई तो बुरी बात है, कोई बेचारी दूसरी महिला होती तो 'प्रजातन्त्र म ऐसा ही होता है' वाले स्टाइल मे सब पचा देते।

छिड़ जाने म कुछ नैतिक जिम्मेदारी विधायिका की भी बनती है। चुनाव के समय तो गले म लाकेट लगा कर घूमती थी जिस पर लिखा होता था—केन्द्र को मजबूत करने के लिए प्रदेश मे कांग्रेस को वोट दो। हम आपका लाकेट देखकर ही समझ जाते थे कि आपकी स्थिति क्या है। चुनाव जीतने के बाद आपने गले से लाकेट ही निकाल दिया तो हम क्या करें। चुनाव जीतने के बाद आपने यदि गले मे लाकेट टाँग कर उस पर लिखवा लिया होता—"हमे मत छेड़ना, हम प्रदेश कांग्रेस हैं" तो आज यह नौबत नहीं आती। कर्मचारी देखता और तुरत दूर हट कर चलता आप से। जब आपने ये काम तो किया नहीं तो सचिवालय के बाबू को सपना आएगा कि किसे छेड़ना है और किसे नहीं ?

हम तो यह जानते है कि अपने देश के आदमी की आदत सामने वाले की स्थिति देख कर ही छेड़ छाड़ करने की होती है। यह तय है कि वह अपने से ऊँचे स्तर वाले से कभी छेड़-छाड़ नहीं करेगा, लेकिन इसके लिए अगले को यह बताना भी जरूरी है कि आपका स्तर क्या है। हमारी ब्यूरोक्रेसी की भी अंतरात्मा इतनी तगड़ी नहीं है कि चेहरा देख कर समझ जाए कि यह आदमी छेड़ छाड़ के लायक नहीं है। अपने यहाँ के

सेक्रटरी को छेड दोगे ता पियेंगे नही तो क्या बचोगे ? बाबू का हक अपनी टाइपिस्ट तक ही बनता है। विधायिका के बारे मे एक बाबू का सोचना भी वर्जित है।

मुझे लगता है कि इस बार भी कुछ ऐसी ही गलती हुई। विधायिका का स्तर किसी मत्री के लिए उचित हो सकता है, सचिवालय के बाबूओ के लिए नही। बाबूओं न सोचा होगा कि प्रजातत्र मे सब धक जाएगा। चला, छेड दो इसे। अब यह पूरी विधानसभा की प्रतिष्ठा का प्रश्न बन गया। एक विधायक को विधानसभा की गरिमा बनाए रखन के लिए बीच मे आना पडा और उस बाबू को डांटना पडा। बाबू लोग उसे भी शायद नहीं पहचान पाए और वे वेचारे पिट गए। कभी-कभी गरिमा बनाए रखने का काम भी बडा जोखिम का होता है।

हमसे यदि आप पूछें कि दोष किसका है तो हम ता बाबूओ के बचाव का ही पक्ष लेंगे। सारा दोष आला कमान का है। ऐसी महिला को टिकट ही क्या देना जो सचिवालय म हगामा खडा कर द और विधानसभा की प्रतिष्ठा को आंच आने दे। हम कहते हैं क्या प्रदेश म ऐसी महिलाओ की कमी है जिन्हे छेडना तो क्या दखने की भी इच्छा पैदा नही होती ? टिकट देना है तो ऐसी महिलाओ को दो तो कुछ नारी कल्याण की बात भी सायक हो।

कुछ भूल उन महिलाओ की भी है जा सचिवालय म सज सँवर कर आती हैं। इसलिए ता काग्रेस म खादी पहनन का रिवाज है। अब आप गाडन सिल्क की चिकनी साडी पहन कर सचिवालय जाएगी तो किसी न किसी की नजर फिसलेगी ही। खादी हो ता जरा नजर भी ठहर जाए। इससे सचिवालय के बाबूओ को दोप दना ठीक नहा है।

विधानसभा चुनाव हाने के बाद हर बाबू को तत्काल विधायक और विधायिकाओ की तस्वीर दे देनी चाहिए और एक ममा भी जारी कर देना चाहिए कि इन्हें पहचान लो ये हमारे प्रदश के जनप्रतिनिधि हैं इनसे बिल्कुल छेड छाड मत करना बाकी तुम लाग कुछ भी करो प्रशासन को कोई आपत्ति नही है।

- यह व्यवस्था होती तो वेचारे बाबू भी पहचानते कि कौन विधायिका

है और कौन डिस्पैच क्लर्क है। अब आपने ये काम तो किया ही नहीं और कर्मचारियों को दोष देते हो। जब बेचारे पहचानते ही नहीं, तो छेड़ेंगे नहीं तो क्या करेंगे ? अब आपको समझ में आया कि अपने प्रदेश के बाबू को जब तक पहले से नहीं बताओगे कि इसे नहीं छेड़ना है, व नहीं समझेंगे।

वैसे इन्फारमेशन से अल्लम गल्लम लिटरेचर प्रकाशित हो रहा है। डायरियाँ छपवा कर बाँटी जाती हैं। हम कहते हैं कि प्रशासन जब सरकारी छुट्टियों की लिस्ट छाप कर बँटवाता है तो उसी के साथ एक लिस्ट और लगा दे कि किन्हें छेड़ना है और किन्हें नहीं छेड़ना है। अब कहते हो कि विधायिका के साथ छेड़ छाड़ बुरी बात है। विधायिका हो गई तो बुरी बात है, कोई बेचारी दूसरी महिला होती तो 'प्रजातंत्र में ऐसा ही होता है' वाले स्टाइल में सब धका देते।

छिड़ जाने में कुछ नैतिक जिम्मेदारी विधायिका की भी बनती है। चुनाव के समय तो गले में लाकेट लगा कर घूमती थी जिस पर लिखा होता था—केन्द्र को मजबूत करने के लिए प्रदेश में कांग्रेस को वोट दो। हम आपका लाकेट देखकर ही समझ जाते थे कि आपकी स्थिति क्या है। चुनाव जीतने के बाद आपने गले से लाकेट ही निकाल दिया तो हम क्या करें। चुनाव जीतने के बाद आपने यदि गले में लाकेट टाग कर उस पर लिखवा लिया होता—"हमें मत छेड़ना, हम प्रदेश कांग्रेस हैं" तो आज यह नौबत नहीं आती। कर्मचारी देखता और तुरंत दूर हट कर चलता आप से। जब आपने ये काम तो किया नहीं तो सचिवालय के बाबू को सपना आएगा कि किसे छेड़ना है और किसे नहीं ?

हम तो यह जानते हैं कि अपने देश के आदमी की आदत सामने वाले की स्थिति देख कर ही छेड़ छाड़ करने की होती है। यह तय है कि वह अपने से ऊँचे स्तर वाले से कभी छेड़ छाड़ नहीं करेगा, लेकिन इसके लिए अगले को यह बताना भी जरूरी है कि आपका स्तर क्या है। हमारी ब्यूरोक्रेसी की भी अंतरात्मा इतनी तगड़ी नहीं है कि चेहरा देख कर *समझ जाए कि यह आदमी छेड़ छाड़ के लायक नहीं है।* अपने यहाँ के

बाबू को तो हर बात बतानी और समझानी पड़ती है। मौलिक अधिकार के प्रयोग की स्वतन्त्रता के लिए प्रशासन की जिम्मेदारी भी बनती है। अब तो छेड़ छाड़ अधिनियम बन ही जाना चाहिए। जन प्रतिनिधियों की सुरक्षा के लिए मुझे यह जरूरी लगने लगा है। बाबूओं को इस छेड़ छाड़ के लिए दोष देना मैं उचित नहीं समझता।

नेताजी—बन्दर वाले

नेताजी इन दिनो बेकार हैं। बेकार इसलिए कि वे फिलहाल किसी सस्था के अध्यक्ष नही हैं और जब वे अध्यक्ष नही होते तो अपने को बेरोजगार ही मानते हैं। एक एक कर सभी समितियो के अध्यक्ष पद से उन्हे किक पड गई। अभी तक तो यही होता रहा कि उधर किक पडी और इधर नेताजी दूसरी समिति के अध्यक्ष हो गए। लेकिन इस बार ऐसा कुछ नही हुआ इसलिए उनका चिन्तन गभीर हो गया है और वे देश के बारे मे बहुत गभीरता से विचार करने लगे।

कल मैं भैयाजी के राजनीतिक गैरेज के सामने से गुजरा तो वे अपने ग रेज के सामने एक बन्दर नचवा रहे थे। मदारी डुगडुगी बजा रहा था और बन्दर नेताजी के सामने मगन होकर नाच रहा था। मदारी लकडी सामने रखता और बन्दर को आदेश देता—चल बेटा कूद जा। बन्दर कूद जाता। नेताजी उसे देखते और देश के बारे म सोचने लगते—इस देश का क्या होगा?

मैंने नेताजी से कहा—बडे दिनो बाद आपको गभीर चितन मे देखा है क्या सोच रहे हैं आप?

नेताजी न मेरी बातो की ओर कोई ध्यान नही दिया और मदारी से बोले—क्या रे मदारी कितने दिनो से नचा रहा है तू इस बन्दर को?

मदारी ने कहा—हुजूर, हम तो खानदानी बन्दर नचाने वाले हैं। वैसे यह बन्दर पिछले पाच सालो से मेरे पास है। बडा निष्ठावान है सरकार। जैसा नचवा लो कोई ना-नुकुर नही करता।

नेताजी कुछ सोच कर बोले—अबे पाँच साल तो हो गए अब छोट इस वायद स तू इस अब नही नचा सकता।

मदारी बोला—हुजूर कायदा-कानून ता आप नेता लोग ही जानें लेकिन हम तो इतना जानत हैं कि इसी बन्दर की रोजी रोटी स हमारे बाल-बच्चे पल रह है। बडे-बडे साहब लोग इसका नाच दखत हैं और पैसा फेंकत है। और असली बात तो यह हुजूर कि पाँच साल म यह इतना ट्रेंड हो गया है कि आन वाल पाँच साल तक यह बहुत अच्छा नाचेगा।

पाँच साल बाद फिर क्या करोगे ? नाचन लायक नहा रहा तो ?

नाचने लायक नही रहा तो दूसरा बन्दर ले आऊँगा मालिक हम तो अपनी पूरी जिंदगी इन्ही बन्दरो के बीच रहना है।

—अब कहाँ से लाएगा, हमे भी ता बता ?

—सुना है गुजरात मे अच्छे बन्दर मिलत हैं। इस बार वही जाऊँगा सरकार ! कुछ जुगाडमेन्ट तो बिठाना ही पडेगा।

मुझे नेताजी और मदारी की बातो म आनन्द आ रहा था। लगता था जैस अपने-अपने फन मे माहिर दो लाग दश की किसी ज्वलत समस्या पर बात कर रहे हो। मैं नेताजी स कहना चाहता था—"इस मदारी की बात म मत आना हो नताजी। ये साला बडा चालू किस्म का दिखना है।" लकिन इसके पहले ही नताजी ने मर लिए मीठे पान का आडर दकर मुझे अपनी बैठक मे बुला लिया। यही तो नेताजी का राजनीति म अपना अनुभव है। जानते ह कि हम जसो का मुह बन्द करना हा तो मुह म एक मीठा पान भर दो, बस।

नताजी की बैठक वाला कमरा नताओ की तस्वीरा स लबालब भरा था। दीवार पर हर जगह नता ही नता टँगे थे। बापू की तस्वीर पर नेताजी ने खादी की माला डाल रखी थी। इस एक माला के कारण ही नेताजी का कमरा गाधीवाद से महक रहा था। सामन की आलमारी म तीन बन्दरा की मूर्तियाँ थीं। नेताजी का कहना था कि य मूर्तिया वे किसी अधिवेशन से लाए थे।

अब मेरे और नेताजी के अतिरिक्त बैठक म जो उल्लेखनीय वस्तु थी, वह एक अभिनन्दन-पत्र था जिसे नेताजी ने फ्रेम करवा कर ऐसी जगह

टाँग रखा था कि बैठक में आने वाले हर आदमी की नजर पहले उस पर पड़े। यह अभिनन्दन पत्र नेताजी को सफाई कामगारों की ओर से दिया गया था।

मैंने वातावरण और नेताजी की चिन्ता की गंभीरता को समाप्त करने के लिए कहा—नेताजी, इस बार आप बन्दरों की समिति के अध्यक्ष क्यों नहीं बन जाते ? मेरे विचार में तो शहरी और ग्रामीण दो समितियाँ बना कर किसी एक पर अपनी अध्यक्षता जमा दें ? क्यों ?

लगता था कि नेताजी ने मेरी इस बात को गंभीरता से लिया है। उनकी आँखों में चमक आ गई। बोले—ठीक ही कहते हो इस बार यही सही लेकिन ये तो बताओ कि बन्दरों की समिति का अध्यक्ष बन कर मैं करूँगा क्या ? मेरा मतलब है कुछ तो मेनिफेस्टो होना ही चाहिए ना ?

मैंने कहा—नेताजी, ये बात तो आप छोड़ दो बन्दरों पर। इस पर उन्हें विचार करना है, आपको नहीं। मैं तो इतना जानता हूँ कि स्कोप बहुत है। देखिए ना दिल्ली में सरकार उल्लुओं और चमगादड़ों के लिए वातानुकूलित कमरे बनवा रही है। यहाँ तक कि सरकार ने भालुओं और बिल्लियों तक को इस आवास योजना में शामिल कर लिया है। हम कहते हैं कि बेचारे भारतीय बन्दरों ने क्या बिगाड़ा है ? जब तक बापू थे देश में बन्दरों की इज्जत थी। क्या बापू ने इसी दिन के लिए भारत को आजाद करवाया था ? क्या उल्लू और चमगादड़ से भी गया बीता हो गया है अब देश में बन्दर ? इसका विरोध तो होना ही चाहिए। हम आपसे अपेक्षा रखते हैं कि आप इस सैद्धांतिक विरोध का नेतृत्व करें।

बात इतनी गंभीरता से रखी गई थी कि नेताजी फिर गंभीर हो गए। बाहर मदारी अभी भी अपना बन्दर नचा रहा था और बन्दर नेताजी को किसी संस्था के अध्यक्ष होने की पीड़ा कचोट रही थी। वे वर्तमान राजनीतिक परिवेश में जानवरों के मौलिक अधिकारों को लेकर चिंतित नजर आ रहे थे। मुझे पूरा विश्वास था कि वे इस बार किसी सांसद से मदारी की रस्सी पर नाचने वाले बन्दरों के हितों और अधिकारों पर कोई गंभीर चर्चा अवश्य करेंगे। इसी बहाने जनचर्चा का कोई नया मुद्दा भी वे

जरूर उठाएँगे। जब भी वे किसी सस्था स अध्यक्ष की हैसियत से जुडे हैं, उन्होंने ऐसा ही किया है।

नेताजी मदारी से कुछ जरूरी सवाल पूछने के लिए बैठक से बाहर आ गए।

मदारी ने नेताजी की ओर देख कर कहा—मिले माई बाप इस बन्दर के लिए कोई फटा-पुराना कपडा मिल जाए हुजूर !

फिर मदारी ने बन्दर की ओर देखा और कहा—चल बेटा, लेट जा नेताजी के पैरो मे हाँ शाबाश।

मदारी बोला—बस, अब खडा हो जा और दिखा दे अपनी हैसियत।

बन्दर पिछली दो टाँगो से खडा हो गया और दोनो हाथो से अपना पेट बजाने लगा। जैसे कहना चाहता हो—नेताजी, इस पापी पेट का सवाल है।

नेताजी फिर गभीर हो गए। उन्हें लगा कि इस बार अध्यक्ष बनने पर उन्हे नई जिम्मेदारियो से जूझना पडेगा।

मेरे तो गिरधर प्रसाद

मेरे इस गिरधर के हाथ में सब कुछ है। प्रमोशन से लेकर डिमोशन और सस्पेंशन तक सब कुछ। जब मैं पहली सरकारी नौकरी मे आया था, तब उन्होंने कहा था—मेरी भक्ति करोगे तो मजे म रहोगे।

मैंने इधर चाज लिया और उधर भक्ति मे लीन हो गया। आफिस की टेबल पर ही मैंने उनकी प्रतिमा स्थापित की और कुर्सी पर बैठने के पहले उसका स्मरण करके ही हर फाइल का हाथ लगाता। फिर वह आते और मुझे बुलाते। कहते—घर के लोग कैसे हैं ? बेबी कैसी है ?

बडी दीदी का वे बेबी ही कहते थे। मैं कहता—साली की शादी तय हो गई है। मुझे एक हफ्ते के लिए जाना पडेगा। वे पूछते—बेबी भी जा रही है ? मैं कहता—नहीं। न फिर कहते—तो हो आओ कुछ सरकारी काम आफिस का भी निकाल लेना भोपाल के लायक टी० ए०, डी० ए० भी बन जाएगा।

मैं उन्हें नमन करता। जानता हूँ इस आफिस मे छुट्टी लेना आसान काम नहीं है। बडे बडो को पसीना आ जाता है। आपने छुट्टी की दरख्वास्त दी नहीं कि गिरधर प्रसाद गरम हो गए। कहते—इधर आफिस का इतना काम पडा है शम नहीं आती, आ गए कैजुअल लीव की दरख्वास्त लेकर जाओ कुर्सी पर बठो मथली रिटन बन गए तुम्हारे ?

हर बाबू गिरधर से परेशान है लेकिन सच बताएँ, हम तो मजे म हैं। आफिस का काम कम करते हैं, उनकी भक्ति अधिक करते हैं। भक्ति स बडा काम सरकारी कार्यालयों मे और क्या हो सकता है ? भक्ति ही

शांतिदायिनी है। भक्ति ही मोक्षदायिनी है। हमने तो अपने आपको उनके चरणों पर डाल दिया है। हर नोट शीट पर उसकी चरण-रज लगाते हैं और फिर कलम उठाते हैं किसी काम के लिए।

सरकारी शास्त्रों के अनुसार इस गिरधर प्रसाद के ऊपर एक और गिरधर प्रसाद हैं। उनके ऊपर भी एक हैं और सबसे ऊपर जो गिरधर प्रसाद है उसके हाथों में कुछ भी नहीं है। वे खाली हाथ लोगों को सब कुछ बाँटते हैं। इस तरह प्रशासन में गिरधर प्रसाद का सिलसिला चलता है नीचे से ऊपर तक। हमारे गिरधर बड़े गिरधर के बंगले पर जाकर उनकी चरण रज लेते हैं। उनको दंडवत करते हैं। भक्ति की इस महान परंपरा से खुश सभी रहते हैं।

सरकारी आफिस में जो दुष्टजन भक्ति में आस्था नहीं रखते, वे सदैव दुखी रहते हैं। वे बीमार होते हैं तो उन्हें कोई देखने नहीं जाता। हफ्ते में दो बार उन्हें गिरधर की वार्निंग मिलती ही रहती है। नास्तिकों के लिए सरकारी शास्त्रों में यही दंड निर्धारित है। उनका टी० ए० बिल महीनों पास नहीं होता। उनके सिर जिन्दगी भर फाइलों में इतने झुके रहते हैं कि सिर उठाना भूल जाते हैं। हम तो कहते हैं सिर तो झुकने के लिए ही बना है। उसे झुकाना ही है तो सही जगह झुकाओ। फाइलों में झुकाए रहोगे तो मोक्ष मिलने वाला नहीं है। लेकिन इतना आत्मज्ञान कहाँ से लाए? वे तो फाइलों में ही पैदा होते हैं और फाइलों में ही मर जाते हैं।

इस बार हमारी भक्ति में विघ्न आ गया। हुआ यूँ कि गिरधर पर ही संकट आ गया। उनका तबादला हो गया। अब यह सरकारी मंदिर छूट जाएगा। चढ़ोती छूट जाएगी। सब कुछ छूट जाएगा। ठेकेदार विदा हो जाएँगे। सरकार ने इस बार उन्हें ऐसी जगह पटका है जहाँ दान दक्षिणा का कोई स्कोप नहीं है। उन्हें पहली बार रोना आ रहा है। यह सरकारी माया मोह उन्हें रुला रहा है। मैं कहता हूँ—आप गिरधर होकर रोते हैं तो हमारा क्या होगा?

वे पथराई आँख में से फाइलों की ओर देख रहे हैं। मुझे एक लम्बी लिस्ट लेकर कहते हैं—इन गण्यमान्य ठेकेदारों को बता देना कि हमारी

चलाचली की बेला आ गई है। अंतिम दर्शन कर लें और अपना ठेकेदारी धर्म निभा लें। किसी लोकवाहन की व्यवस्था कर दें जिससे हम अपनी टी० वी०, फ्रिज और बीबी सहित इस नगर से कूच कर जाएँ।

हमने सलाह दी—एक बार बड़े गिरधर साहब से तो मिल लीजिए। वह बोले—कुछ नहीं हो सकता। हमारे खिलाफ भ्रष्टाचार की बड़ी शिकायतें हैं सेक्रेटेरियट में। हमारा दाना पानी यहाँ से उठ गया समझो।

मैंने कहा—तो भोपाल वाले गिरधर से ही मिल लीजिए। वे तो संकट मोचन हैं। बंगले से ब्रीफकेस मँगवा दूँ?

वे अंतर्यामी हैं। बोले—भक्त, ब्रीफकेस खाली है। मैंने जो ठेकेदारों की सूची तुम्हें दी है, उसे ले जाओ और उन्हें हमारे यहाँ सादर आमंत्रित कर दो।

सच्चे और निष्ठावान भक्तों का यही काम होता है। मैं सूची लेकर बाहर आ जाता हूँ। वे जानते हैं, भक्त खाली ब्रीफकेस लेकर कभी नहीं लौटेगा लेकिन भक्ति का मार्ग बहुत कठिन होता है। ठेकेदार के घर जाता हूँ तो पता चलता है, ठेकेदार पुल पर गया है। पुल पर जाता हूँ तो ज्ञात होता है कि बचा हुआ सरकारी सीमेंट बेचने बाजार गया है। बाजार जाता हूँ तो पता चलता है कि ठेकेदार बैंक गया है। बैंक जाता हूँ तो पता चलता है, घर चला गया। मैं उसे घर पर पकड़ता हूँ।

मैं सच्चे भक्त की तरह निवेदन और प्रार्थना दोनों एक साथ करता हूँ—ठेकेदार साहब, हमारे गिरधर का ब्रीफकेस है। उन पर विपत्तियों का पहाड़ टूट पड़ा है। गिरधर की रक्षा का भार आपके कंधों पर है। उनका आमंत्रण स्वीकार कीजिए।

शाम तक ब्रीफकेस तैयार हो जाता है। अब मेरे गिरधर भोपाल जाएँगे। किला फतह करके ही वापस लौटेंगे। लौटने पर ब्रीफकेस खाली होगा लेकिन उनके हाथ खाली नहीं होंगे। उनके हाथों में कागज का एक टुकड़ा होगा जिस पर प्रकाशन की मुहर होगी। वे पुनः इस सरकारी मंदिर में प्रतिस्थापित हो जाएँगे। हम भक्तों की पुकार सुनेंगे। हमें आशीर्वाद देंगे और कहेंगे—भक्तो, खूब फलो फूलो। आज तुम्हारे गिरधर प्रसन्न हैं जो वरदान माँगना चाहते हो तो माँग लो।

मैं उनकी भक्ति मे लीन रहने का वरदान मांग लूगा। वे तो मेरे गिरधर हैं, उनके चरणो मे ही मेरा सुखी ससार है। उनके चरण नहीं होते तो मेरा यह जीवन व्यथ हो जाता। जानता हूँ व लात भी मारेंगे तो उनकी चप्पलो के नीचे मेरा प्रमोशन आर्डर ही होगा।

मुझे प्रतीक्षा है गिरधर के भोपाल स लौटन की। वे लौटेंगे। मुझे अपने चेम्बर मे बुलाएँगे। पूछेंगे—बेबी कसी है?

मैं उनके चरणो की रज शीश पर लगा लूगा क्योंकि मैं जानता हू—मेरे तो गिरधर प्रसाद, दूसरो न कोई।

साहित्य से जुडता पशु विभाग

इन दिनो हमारी दोस्ती पशु चिकित्सक से है। वे भी इसलिए प्रसन्न हैं कि हमेशा जानवरो के बीच रहने के बाद उन्हे हम जैसे साहित्यकारो के साथ थोडा समय गुजारने का मौका मिल जाता है। वे हम देखते हैं और उनका प्रेम विभागीय स्तर पर फसफसा जाता है। इस बार जब मैं पशु अस्पताल के पास से निकला तो वे बोले—यार, इस उम्र मे बन-ठन के निकलते हो तो हमारे दिल पर साप लोट जाते हैं। मैंने पूछा—क्यो? वे बोले—हमारे विभाग मे होते तो कई जरसी गायो को घायल कर देते।

पशु चिकित्सक ने मेरी शृगार भावना के लिए गाय का प्रतीक क्या चुना यह बात मेरे लिए विचारणीय थी। गाय वात्सल्य रस की जनक है। यानी कि मैं साहित्य मे अभी भी बछडा लगता हूँ। जहाँ तक साहित्य का सवाल है, साड का प्रतीक अधिक प्रतिष्ठाजनक लगता है। उनके हिसाब से जो लोग आचंलिक साहित्य से जुडे हैं वे 'बछरू' कहलाएँगे। मैंने आपत्ति प्रकट करते हुए कहा—मित्र, आपने मुझे गाय से जोडा यह मेरे लिए सम्माननीय स्थिति नही है। मैं हिन्दी का वरिष्ठ लेखक हूँ।

वे बोले—गाय से मेरा मतलब सरकारी गाय से है। आप इस व्यापक सन्दर्भों मे लें।

मुझे इस बात का आश्चय हुआ कि पशु विभाग का यह आदमी अचानक साहित्य परिषद की भाषा कसे बोलने लगा। अपने प्रदेश के सचिवालय की गाय कई साहित्यकारो को अपना पौष्टिक दूध पिला पिला कर तगडा बना रही है। कई बछडे राजधानी की गलिया मे सजनरत हैं।

मुझे याद आता है कि पिछले साल एक बछडे का गाय ने बुलाकर कहा—बेटा, अब तू गाष्ठियो मे बोलने लायक हा गया है।

बछडा बोला—अम्मा, तुम्हारे बिना मरा अस्तित्व शू य है। तुम्हारा दिया हुआ खा खाकर मैं साहित्य म त ना रहा हूँ।

गाय ने वात्सल्य दष्टि डालते हुए कहा—ले, ये फेलोशिप रख और कोई लम्बा काम कर जिससे मेरा नाम अमर हा।

बछडा गद्गद हो गया। उसन गाय को नमन किया। कहा—माता, तुम्हारे आशीर्वाद से मैं साहित्य म अपना नाम ऊँचा करूँगा। मुझे आशीर्वाद दा अम्मा।

जब पशु चिकित्सक ने इसी गाय के स दभ मे बात प्रारम्भ की तो मुझे लगा कि उ ह साहित्य से गहरा लगाव है। मैंने कहा—डाक्टर साहब, आप यह नौकरी छोडकर कविताएँ क्या नही लिखते ?

वह बोले—इच्छा तो होती है। मैं भी गभीरता से महसूस कर रहा हूँ कि देश का वेटरीनरी साहित्य की आवश्यकता है। सूक्ष्म रचनाएँ आम पाठक का समय म नही आती हैं। जब तक साहित्य म वेटरीनरी डोज नहा दिया जाएगा हिन्दी साहित्य का विकास नहीं होगा। इसी बीच एक आदमी गोद मे बछडा लेकर अस्पताल आया। डाक्टर ने पहले मेरी ओर देखा और बाद मे बछडे की ओर देखकर बोले—क्या हो गया ?

आदमी ने कहा—गाय ने इसे अपने परा मे रौंद दिया है। इसकी पसली खिसक गई है। आप देख लें। सेठजी न कहा है कि पैसे की चिन्ता न करें। बछडा किसी भी हालत मे ठीक होना चाहिए। गाय कल स दूध नही उतार रही है। सेठजी परेशान हैं। सरकारी दूध से उनको गैस बनती है।

डाक्टर ने मुझसे कहा—देखते हो जमाना कहा से कहाँ पहुँच गया ! एक समय था कि गाय बछडे के बिना रहती नही थी। जिधर देखो उधर गाय और बछडा। दीवार पर कागज पर। सरकारी कार्यालयो मे। और आज स्थिति यह है कि गाय बछडे को परा तला रौंद रही है। साहित्य मे तुम इसे क्या कहोगे ?

मैंन कहा—यह दक्षिणपथी प्रक्रिया है। गाय जब अपने बछडे को

मारती है, तो इसका मतलब साफ है कि बछड़ा प्रतिक्रियावादी रचनाधर्मिता को जन्म देने लगा है। अम्मा यह बर्दाश्त नहीं कर सकती कि बछड़ा प्रतिबद्धता के खिलाफ जाए।

वे बोले—आपकी बात मेरे पल्ले नहीं पड़ रही। इस कस्बे में इतना ऊँचा साहित्य समझने वाले नहीं हैं। मैं तो यही कहना चाहता हूँ कि रौदन के पीछे कोई न कोई राजनीति कहीं काम कर रही है।

मैंने कहा—हमसे आपने मित्रता की है तो साहित्य को राजनीति से मत जोड़िए। मैं जानता हूँ कि इस अस्पताल में आपकी सोच के सारे संदर्भ केवल उस गाय से जुड़े हैं जो केवल दूध देती है दुलत्ती नहीं मारती।

उन्होंने पूछा—दुलत्ती से आपका क्या तात्पर्य है? दूध देने वाली गाय की दुलत्ती भी अच्छी मानी गई है साहित्य में, क्यों?

मैंने कहा—साहित्य में नहीं, राजनीति में।

बहस के लिए काफी गुंजाइश बन गई थी। दुलत्ती को परिभाषित करना आसान काम नहीं था। एक बैठक में निर्णय लेना न्यायसंगत नहीं होगा यही सोचकर मैंने कहा—देखिए, जल्दबाजी में किसी निर्णय को परिभाषित करने का पक्षधर मैं नहीं हूँ। आपने बछड़े के मौलिक अधिकारों का प्रश्न उठाया है। साथ ही आपने उन साहित्यकारों की नैतिकता पर प्रश्नचिह्न लगाया है जो दुलत्तियाँ खा खाकर हिन्दी साहित्य में अपनी प्रतिष्ठा बना रहे हैं। मैं चाहता हूँ कि नगर के बुद्धिजीवी इस पशु अस्पताल में सादर आमन्त्रित होकर कोई आलेख पढ़ें और इस विषय पर गोष्ठी आयोजित कर किसी ठोस निर्णय पर पहुँचें। आपका क्या विचार है?

उन्होंने बछड़े की ओर देखा। बोले—पहले इसे निपटा दूँ। सेठजी का बछड़ा है। ज्ञानपीठ वालों का ध्यान तो हम भी रखते हैं।

मुझे लगा कि देर-सबेर यह पशु चिकित्सक भी साहित्य से जुड़ कर अपने विभाग की सार्थक भागीदारी साहित्य में स्थापित कर देगा।

अपन तो बच गए गुरु

दिखने मे मैं हट्टा-कट्टा जरूर हूँ लेकिन शास्त्रीय संगीत वालों को देखकर थर-थर काँपने लगता हूँ।

हुआ यह कि मेरे बाजू वाले मकान में एक पक्की गायकी वाले गुरुजी किराये पर आ गए। इस शहर में उन्हें मकान नहीं मिल रहा था। मैंने सोचा, गुरुजी आदमी हैं तो उसे दिला देते हैं यह मकान। बस, इसी उदारता के कारण आज तक मर रहे हैं। मकान क्या दिलाया उन्हें, हमने बैल को मारने के लिए आमंत्रित कर लिया समझो। रात को भोजन करके उठे नहीं कि गुरुजी आ जाते। कहते—चलो तुमको आज मालकौंश सुनाते हैं।

हम नये नये थे संगीत के मामले में तो चले गए एक बार और हिला दिया अपना सिर। बस, यही तो गल्ती हो गई। अब वे हमें रोज पकड कर ले जाने लगे। हमको सामने बिठाया और उठा लिया तानपुरा और हो गए चालू। चला मालकौंश बारह बजे तक। फिर उन्होंने चन्द्रकौंश पकड लिया। हम उठने उठने को करें और वे बैठो बैठो एक और सुनो कहते हुए ऐसा भिड़ते कि तीन बजा देते। बडी मुश्किल में जान फँस गई थी। पड़ोसी थे तो भागते भी नहीं बनता था। एक हफ्ता जब उनकी ख्याल गायकी चली तो हमारी हालत यह हो गई कि हमारा पाँच किलो वजन कम हो गया। हमने सोचा कि महीना दो महीना यही हालत रही तो हम ज हरि हो जाएँगे। ऊपर से मिसेस को अलग शक हो गया कि जाने रात भर क्या करते हैं गुरुजी के घर बैठकर। हमारा तो दाम्पत्य

जीवन नष्ट हो गया इस शास्त्रीय संगीत के चक्कर में। किसको बताएँ। हम ही जानते हैं कि हमारी आत्मा कितनी दुखी है।

लोगो मे सलाह ली तो बोले—एक काम किया करो बाहर से ताला मारकर लाइट बुझा दिया करो कमरे की गुरुजी समझेंगे कि घर म कोई नही है।

हमने यह करके भी देख लिया। लेकिन वाह रे गुरुजी दूसरे दिन पाच बजे आकर बठ गए हमारे यहाँ। अब आप ही बताइये कि कैसे मारें ताला अपने मकान को? इच्छा तो होती कि इस गुरुजी को एक कमरे मे बद करके ताला मार दें तो न रहे बाँस और न बजे बाँसुरी। लेकिन फिर डर यह भी लगा कि ये आदमी कही बद कमर के अदर से ही बिना तानपूरे के गाना शुरू कर देगा तो हम किधर भगेंगे? हम तो इतना जानते हैं कि यदि ऐसा हुआ तो इस घर से सुबह हमारा जनाजा ही निकलेगा। दस-बीस किलो वजन कम हो जाएगा तो काजू किशमिश खाकर बढ़ा ही लेंगे लेकिन ऊपर ही चले गए तो काजू किशमिश भी बेकार हैं। इससे अच्छा है सुनते रहो दरबारी कानडा और मियाँ की तोडी। कम से कम बचे तो रहेंगे।

वैसे मैं पक्की रसोई का शौकीन हूँ लेकिन पक्की गायकी हजम नहीं कर सकता। और जब से गुरुजी मेरे पडोस म आए हैं मेरा हाज्मा लगातार खराब है। लेकिन गुरुजी मानें तब ना? रोज कहता हूँ— गुरुजी हजम नही हो रहा है अब तो माफ करो, लेकिन गुरुजी हैं कि दिए जा रहे हैं डोज। कभी दो खुराक बागेश्वरी की तो कभी तीन खुराक अहीर भैरव की।

एक रात हमारी हालत इतनी बिगड गई कि गुरुजी उधर तिलक कामोद लेकर बैठे और फडफडाने लगे कि कब कमोड मिले और हम बठें तो कुछ जी हल्का हो। लेकिन गुरुजी जो थे वे सम पर आते ही नही थे। अब बीच मे कैसे बोलें कि हमारी हालत गभीर है। बडी देर के बाद व सम पर गिरे तो इधर से हमने कहा —लोटा कहाँ है गुरुजी? जल्दी द दो हमे।

वे बोले—अरे बैठो यार विस्तार म ही लोटा माँगने लगे?

मैंने दीन भाव से कहा—दे दो गुरुजी! बाद में हमको दोष मत देना कुछ हो जाएगा इस कमरे में तो। हमसे अब तुम्हारा यह राग सहन नहीं हो रहा है। मान जाओ दादा और दे दो लोटा। क्यों शास्त्रीय संगीत के माहौल को दूषित करने पर तुले हो! शास्त्रीय संगीत का नाम सुनकर गुरुजी को कुछ दया आ गई। लेकिन दिक्कत यह थी कि न वे तानपूरे को छोड़ रहे थे न तानपूरा उनको छोड़ रहा था। इसलिए वहीं में बैठे बैठे बोले—देख लो बाहर ही कहीं रखा होगा।

मैं तो बस इसी आदेश की प्रतीक्षा कर रहा था। तुरन्त बाहर भागा। लेकिन लोटा मिले तब ना। पता नहीं गुरुजी ने कहाँ छिपा कर रख दिया था। मेरी अंतरात्मा ने कहा—बेटा, यही परीक्षा की घड़ी है अपनी सहनशक्ति से काम ले और जी-जान से भिड़ जा लोटा खोजने में।

बड़े लोगों ने ठीक ही कहा है। खोजने से क्या नहीं मिलता। जब खोजने से हिन्दुस्तान मिल सकता है तो लोटा कैसे नहीं मिलेगा? गनीमत यह थी कि पानी की हंडी गुरुजी ने छिपा कर नहीं रखी थी। वर्ना मेरे बहुमूल्य क्षण पानी खोजने में नष्ट हो जाते और खेल खतम हो जाता।

कष्ट का यह तीसरा शानदार हफ्ता चल रहा था कि एक दिन गुरुजी बोले—सोचता हूँ फेमिली ले ही आऊँ तुम्हारा क्या विचार है?

मैं प्रसन्न हुआ। फेमिली आ जाएगी तो कुछ मुझे भी राहत मिलेगी।

मैंने कहा—ले ही आओ गुरुजी बिना बाल-बच्चों के घर भी सूना लगता है।

वे बोले—लेकिन पैसे तो अभी मिले नहीं हैं?

मैंने कहा—मुझसे दो सौ रुपया ले जाओ लेकिन आप जाओ जरूर। लौटाने की चिन्ता मत करना।

इसी लालच में गुरुजी चले गए। मेरा सौभाग्य था कि वहां जाकर बीमार पड़ गए। हम जैसे असहाय लोगों की आह लगे तो बीमार नहीं पड़ेंगे तो क्या पड़ेंगे। बीस पच्चीस दिन मजे में गुजरे होंगे कि पता चला कि गुरुजी बिना फेमिली लिए आ गए। मेरी अंतरात्मा ने फिर कहा—

भरा बेटा   और दो-दो सौ रुपया।

लेकिन अपने यहाँ यही बहुत अच्छी बात है कि मारने वाले से बचाने वाला बडा होता है। पता नही सरकार को कैसे पता चल गया कि मेरा स्वास्थ्य खतरे मे है। भोपाल मे आर्डर गया कि गुरुजी का ट्रासफर किया जाता है। वे तत्काल जाकर नयी जगह का चार्ज ले लें। गुरुजी फिर मुझसे सलाह लेने आए। बोले—अब क्या करें   बताओ यार ?

मैंने कहा—तुरन्त जाकर चार्ज ले लो   आजकल अनुशासनहीनता की कार्यवाही बहुत हो रही है   नौकरी से जाओगे तो बाल बच्चे तुम्हारा यह तानपूरा नही पालेगा।

वे बोले—यार, किसी नेता वेता को बोल के रुकवा दो ट्रासफर सच कहता हूँ वहाँ तुम्हारे जैसा पडोसी नहीं मिलेगा।

अब आप ही बताइये गुरुजी का ट्रासफर रुकवा कर मुझे मरना है क्या ? मैंने कहा—नेता वेता के चक्कर मे मत पडो गुरुजी और तुम तो सीधे जाकर ले लो   बाद मे जमाएँगे कुछ।

वे बोले—वो तो ठीक है   लेकिन अभी पे नही मिली है ना ?

इसके पहले कि वे आगे कुछ कहते मैंने इस बार तीन सौ रुपये अपनी जेब से निकाल कर उनके हाथो मे रख दिए।

ईमान से कहता हू जी० पी० एफ० से जो लोन निकाला था वह इसी शास्त्रीय संगीत के पीछे उड गया। तीन सौ रुपये बचे थे वो भी आज चले गए। मारो गोली। फँस गए तो गए अपन बच गए।

बहस-प्रेमी नागरिक

मेरा दावा है कि आप उनसे बहस नहीं कर सकते। वे आपको कहीं टिकने नहीं देंगे अपने सामने। उनके जैसा नागरिक न मैंने कभी देखा और कभी निकट भविष्य में दिखने की संभावना है। बहस करना ही उनकी मौलिकता है। यह उनकी महानता है कि वे उसे अपना मौलिक अधिकार मानते हैं। मैं यह सोचता था कि कुछ साल वकालत करने के बाद मुझे बहस करने की तमीज आ गई। लेकिन नहीं, वकालत मैंने की और तमीज आई है उन्हें।

प्रेस क्लब से लौट रहे थे हम लोग। वे दिख गए। दरअसल दिख क्या गए वे पान ठेले पर खड़े सोच रहे थे कि आज बहस के लिए किसे पकड़ा जाए। मेरे साथ एक मित्र भी थे। उन्हें इस खोजी स्थिति में देख कर मित्र ने मुझसे कहा—उधर मत देखना।

लेकिन उधर मत देखना क्या वे खुद आकर डट गए सामने बोले—हद हो गई यार जमानती वारंट निकल गया मेरे नाम से।

मैंने कहा—पेशी में नहीं गए होगे।

वे बोले—नहीं जाने से क्या होता है एक बार में निकाल दोगे वारंट? बापू ने इसीलिए दिलाई थी आजादी कि निकालो वारंट? साहब चार बार छुट्टी पर रहेंगे तो कुछ नहीं हम एक बार नहीं गए तो वारंट?

—यह तो कानूनी प्रक्रिया है। मुलजिम बने हो तो पेशी में हाजिर रहना चाहिए।

—हमको समझाते हो प्रक्रिया ? यार हम भी इत्ते दिन मे यहाँ रहते हैं। प्रक्रिया ब्रक्रिया जानते हैं भय्या ऐसा नही है कि बिल्कुल बोडम हैं। अगला पेशी पर एक बार भी नही आया लेकिन निकला है कभी वारट उसके नाम से ? बोलो निकला है ?

—वह तो फरियादी है। वारट मुलजिम के नाम से जारी होता है। अपने वकील से पूछ लेना। कोई कारण तो होगा ही।

—क्या कारण होगा हम जानते हैं।

—जानते हो तो पूछ क्या रहे हो। सीधे थाने जाकर जमानत दे दो बस।

—जमानत तो देंगे। तुमसे सलाह नही माँग रहे हैं यार। लेकिन ये तो बताओ कि वारट निकला क्यो ?

—मैं क्या बता सकता हूँ।

—बड़े अजीब आदमी हो यार इतने साल वकालत की और यह भी नही बता सकते ?

—कुछ कारण होगा। पेशी पर हाजिर नही हुए होंगे। जमानतदार भी नही आया होगा।

—अरे यार वो तो हम भी जानते हैं। लेकिन कुछ कारण तो होना चाहिए कि नही ? जिस आदमी पर आठ साल से मामला चल रहा हो उसके खिलाफ एक बार मे वारट ? मैं इस बार देख लूगा सबको।

—किसको देखोगे ? अपने वकील को ?

—वकील को क्या देखूगा। उसको तो हमेशा देखता हूँ।

—फिर किसको देखोगे ?

—क्यों बताऊँ तुमको। जिसे देखना है, देख लूगा। ये बताओ हमारे सविधान मे क्या है ?

—किस बाबत ?

—लो देखो पच्चीस साल वकालत करते हो गए, ये भी नही मालूम।

—क्या नही मालूम ?

—अब ये भी हम ही बताएँ। सब हम बता देंगे तो तुम किस दिन के

निए हो। हमारे खिलाफ वारट निकल गया अब हम तुमको बता रहे हैं सब कुछ तुम्हारी भी कुछ जिम्मेदारी है कि नहीं ?

—किस बात की जिम्मेदारी ?

—बड़े अजीब आदमी हो यार तुम। बिल्कुल कुछ नही समझते। कैसे वकालत करते थे इत्ते दिन ? अच्छा हुआ वकालत छोड़कर लखन की लाइन म आ गए। अच्छा हुआ, नही तो दस बीस लोगों को घँसा देते उधर।

—किधर ?

—दादा की टाकीज मे और किधर। वारट फिल्म देखी थी ? नही देखी तो जरूर देखो। देखते देखते नही और फालतू बहस कर रहे हो। मैं कहता हूँ कि वारट निकलने के बाद भी नहीं जाऊँगा तो क्या कर लोगे मेरा ? बोलो क्या कर लोगे ?

—हम क्या कर लेंगे। जाना है तो जाओ, नही जाना है तो मत जाओ।

—और तुम करोगे भी क्या मेरे लिए। तुम जैसे लोगो स देश को उम्मीद भी क्या हो सकती है। अपने दम पर लड रहे है यार। देखना इस पेशी मे बताते हैं। इतना आसान नही है समझे ?

—क्या आसान नहीं है ?

—वारट निकालना और क्या। एकदम से निकाल लोग किसी के नाम पर ?

—एकदम से कैसे ?

—एकदम से नहीं तो क्या हम कोई भाग रहे है यहा से ? हिन्दुस्तान छोडकर भाग तो नही जाएगे। पन्द्रह अगस्त 1947 के बाद इतना भी भरोसा नहा है हम पर ? देख लेंगे हम भी।

—क्या देख लोगे ?

—यही कि वारट कैसे निकलता है। इस पेशी मे जाकर देखेंगे। ऐसा थोडे है कि हमको कुछ नही आता। सब जानते हैं हम।

—तो देख लेना। कौन रोक रहा है। अभी जाकर देख लो।

—अभी क्या जाएँगे ? बेकार आदमी समझ रहे हो हमको ? जब

मूड होगा तब जाएँगे। और नहीं भी जाएँगे तो क्या बिगाड़ लोगे हमारा ?

—तो मत जाओ।

—क्यो नही जाएँ ? पब्लिक कोट है। कोई भी जा सकता है तो हम क्यों नही जाएँगे ? वारट हमारे नाम से निकला है। जाना है कि नही जाना है, यह सोचना हमारा काम है । तुम क्यो परेशान हो रहे हो ?

—हम कहाँ परेशान हो रहे हैं !

—लो दखो इतनी बात कर रहे हो और कहते हो कि परेशान नही हो रहे हो। अजीब आदमी हो ईमान से। वारट हमारे नाम से निकला है और परेशान तुम हो रहे हो। हम कहते हैं बिल्कुल परेशान मत होना। हमको बडा अनुभव है हर बात का। देखना हम समझ जाएँगे कि वारट क्यो निकला है।

—समझोगे कैस ? अपने वकील से पूछ कर या अपने आप ?

—वकील से क्यो पूछेंगे उसकी क्या गलती है। निकल गया तो निकल गया। इसमे वकील से क्यो पूछें ? आठ साल से मामला लड रहे हैं, कोई मजाक बात नही है। लेकिन हम पूछते हैं वारट निकला क्यो ? बताओ ?

—मैं क्या बता सकता हूँ।

—क्यो नही बता सकते ? साफ कह दो कि बताना नही चाहते। तुमस दोस्ती है इसका मतलब यह है कि तुम कुछ मत बताओ ? क्या ?

—ये बात नही है।

—तो फिर क्या बात है ? बताओ सीधे से ?

—क्या बताएँ। हम तो तुम्हारे मामले मे कुछ जानत ही नहीं।

—अरे वाह रे दोस्त पूरे शहर को मालूम है और तुम कुछ जानते नही ? ऐसा दास्त हमने नहीं देखा यार।

—क्या मालूम है, पूरे शहर को ?

—अरे यही कि हमारे खिलाफ जमानती वारट निकल गया है। हमको समझ मे नही आता कि जब वकालत करते थे, तो बहस कैसे करते थे। हमारे सामने तो टिक नही पा रहे हो और अकेले मे डीग मारते हो।

जानते हो, क्यो निकला है वारट ?

—नही मालूम ।

—लो, इत्ते साल वकालत की और ये भी नही मालूम । हम वताते हैं । सीधी बात है कि हम पेशी की तारीख भूल गए ।

—मेरे मित्र ने कहा—चलो यार तुम इनके सामने बहस मे नही टिक पाओगे । फालतू इनका टाइम खराब क्यो कर रहे हो । उनके चेहरे पर विजय की मुस्कान थी । जसे कहना चाहते हा—बिल्कुल ऐसा ही मत समझना हमे राजनीति पर भी इतनी ही तगडी बहस कर सकते हैं चाहो तो आजमा लेना कभी स्वतत्र देश के नागरिक हैं, हम हा ।

मुँह की दुर्गन्ध तो रहेगी ही

इधर हमारे हबीब भाई इसलिए परेशान हैं कि बीमारियाँ ठीक से चल ही रही है शहर मे। कहाँ गए वे दिन जब एक बार हैजा आता था तो हजारो रुपयो की दवाइयाँ बिकती थी। बीमारियो के उस स्वर्णयुग को याद कर हबीब भाई उदास हो जाते है। कुछ कुछ डेंगू और फ्लू न अपना योगदान हबीब भाई की आर्थिक स्थिति बढाने मे दिया था। उन सम्पन्न बीमारियो का ही आशीर्वाद है कि आज नगर मे हबीब भाई की दवाई की दुकान न केवल अपनी पहचान रखती है बल्कि हबीब भाई की तरह काफी मोटी भी हो गई है।

हबीब भाई ने हमसे कहा—यार, क्या हो गया साली बीमारियो को एक नही आ रही है एक महीने से ग्लूकोज की एक बाटल नही बिकी उल्टी दस्त बिलकुल नही चलगा क्या ?

मैंने कहा—हबीब भाई, आप यह सोच कर खुश होते हो कि कोई बीमार पड जाए। दूसरो के दुःख मे खुश होना अच्छी बात नही है।

वे बोले—ये तो हम भी जानते है। लेकिन एक बात बताओ कि कोई बीमार नही पडेगा तो हमारा भट्ठा बैठ जाएगा ना। एक लाख की दवाइयाँ हैं स्टाक मे सब की एक्सपायरी डेट खत्म हो गई तो समझो कि हम तो गए बारह के भाव से ये दवाइ की दुकान बन्द करके जाना पड जाएगा हमको भी फकीर बन कर कही।

हबीब भाई की बातो मे मुझे बहुत बडी फिलासफी नजर आई। सचमुच हम अपने व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए ही जीने वाले लोग होकर रह

गए हैं। अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए लोगो को बीमार देखना हमे अच्छा लगता है। यह देश बीमार लोगो का देश है। हम शरीर से भी बीमार हैं और मानसिकता से भी। स्वस्थ बातें सोचना हम अच्छा नही लगता। ऐसे देश मे बीमारियो के न होने से हबीब भाई का चिंतित हो जाना स्वाभाविक है। हबीब भाई की जगह मैं होता और मेरी भी कफन बेचने की दुकान होती तो मैं भी खुदा से रोज दुआ करता कि वह दो चार ग्राहक रोज भेजे मेरी दुकान पर। यह पेट हम पर इतना हॉवी हो गया है कि अपने सिवाय दूसरो के बारे मे कुछ साचन ही नही देता।

हबीब भाई बोले—यार, इस पर कुछ लिख दो मजा आ जाएगा। लेकिन हमारी दवाई की दुकान का नाम जरूर लिखना इससे हमारा एडवर्टाइजमेन्ट होता है।

अब लेखक और बीमारियो के बारे मे क्या लिखू ? हमे तो समाज की विसगतियाँ पकडने की बीमारी है। यह बीमारी हमारे साथ नही होती तो हमारी यह दुकान भी बद हो जाती।

मैं एक सज्जन को जानता हूँ जिन्हें अजीब किस्म की बीमारी है। उनका मुह बन्द ही नही रह सकता। और अब तो यह बीमारी इतनी क्रानिक हो गई है कि उनका मुह बन्द हो जाएगा तो वे चल बसेंगे। बात चाहे राजनीति की हो या नगर की किसी दुघटना की हो उस पर मुह खोलना वे अपना कर्त्तव्य समझते है। सविधान मे अपने विचार व्यक्त करने का जो मौलिक अधिकार हमे मिला है उसका सबसे अधिक लाभ उन्होंने ही उठाया है। यदि आपने उन्हे अपने विचार व्यक्त करने के लिए आमत्रित किया तो समझ लीजिए कि वे अपनी थूक के माध्यम से नाना प्रकार के जीवाणु आप तक नि सकोच पहुँचा देंगे। उनकी खास विशेषता यह है कि उनके मुँह मे दुगन्ध अच्छी आती है। मैंने एक बार इस महक का रहस्य जानना चाहा तो वे मुझसे बोले—मुह मे पायरिया हो गया है।

मैंने कहा इसका इलाज क्यों नही करवाते ? देखिए कितनी दुगन्ध आ रही है आपके मुँह से।

वे कुछ देर गभीर हो गए। उनका मुँह अन्दर ही अन्दर विचार कर

रहा था कि बातों को कहा मे गति दी जाए। मेरे सवाल पर उन्होंने चिंतन किया और बोले—यही आदत तो अपने यहाँ के लोगो मे बुरी ह अरे भई दाँत मेरे सडे हैं, दुगन्ध मेरे मुँह से आती है तो दूसरो को क्या तकलीफ होती है माफ करना भइया हमने ता ऐसे लोग भी देखे ह जो ऊपर स नीचे तक दुगन्ध मे सराबोर रहते हैं लेकिन लोग उनस घटो चिपके रहते है। सच बात तो यह है कि हमसे तुम्हारा कोई मतलब नही है तो तुम्ह हमारे मुह से दुगन्ध आ रही है आज हमे बन जाने दो मिनिस्टर फिर देखना ये दुगन्ध कहाँ जाती है हमसे मुह सटा कर घटो बातें करते रहोगे अपने मतलब को। समझे ?

दुर्भाग्य से ये बातें हबीब भाई की दवाई की दुकान के सामने ही हो रही थी। जब वे वायुमडल की शुद्ध हवा मे अपना योगदान देकर आगे बढे तो हबीब भाई हमसे बोले—साला बात करता है तो बहुत बरसाता है इच्छा होती है कि दो जूते मार दू साले को।

मैंने कहा—तो मार क्यो नही देते ?

हबीब भाई बोले—अपना ग्राहक है ना यार महीने मे पच्चीस तीस रुपये की दवाई ले जाता है अपनी दुकान से ग्राहको को जूता मारेंगे तो अपनी दुकान कैसे चलेगी, बोलो !

अपनी दुकान चलाने की सबको फिक्र है। किसी के मुह की दुगन्ध का एहसास हमे उस समय तक नही होता जब तक उस दुगन्ध मे कही न कही हम लाभ मिलता रहता है। यह दुगन्ध समाज की हो सकती है, राजनीति की हो सकती है और व्यक्ति की भी हो सकती है। यह दुगन्ध बीमारी के सैकडो कीटाणु स्वच्छ वायुमडल मे घोल कर हजारो लोगो का बीमार कर सकती है। हम इसकी चिन्ता नही है। हमे चिन्ता केवल इस बात की है कि उन मरन वालो स हमारा कोई रिश्ता है तो बस केवल लाभ का रिश्ता है। वे बीमार रहें और हमारी दुकान चलाते रहें यही हमारी सोच का स्तर है।

यदि हबीब भाई उस दुगन्ध फैलाने वाले से प्रसन्न हैं तो इसमे उनका दोष नही। अदालतो मे जब बलात्कार का मुलजिम पहली बार आता है तो कानून के रक्षक यह सोच कर खुश होते हैं कि उन्हे लाभ दिलाने वाला

आ गया। मुजरिम को छुड़ाना वकील का नैतिक कर्तव्य है। वह खुश होता है और अपने कर्तव्य के प्रति हमेशा सजग रहता है। उसकी क्लायटेंज का सवाल है। एक बार बन गई तो उम्र भर साथ देगी। डाक्टर उस वक्त खुश होता है जब नगर मे कोई वायरस आ जाता है। पुलिस उस समय प्रसन्न होती है जब किसी बड़े घर की लड़की का अपहरण होता है और लड़की का बाप अपनी प्रतिष्ठा के लिए पुलिस की खुशामद करता है। हमारी प्रसन्नता के सारे पैमाने अपने व्यक्तिगत लाभ ही होते हैं। सरकार को यदि शराब के ठेके से करोड़ो रुपये की आय होती है तो यह कहना बेमानी लगता है कि शराब से दुर्गंध आती है, शराब से कई घर बरबाद होते हैं, शराब प्राणों के लिए घातक है।

अब हमारे हबीब भाई इसलिए परेशान हो कि शहर मे बीमारियाँ ठीक नही चल रही है तो उनकी परेशानी वाजिब ही लगती है। आखिर वे भी तो हमारे इसी समाज के अंग हैं।

स्थगित हो गया आत्मदाह कार्यक्रम

इधर बहुत दिनो बाद हम आत्मदाह देखने का सौभाग्य प्राप्त हो रहा था। यह आत्मदाह का प्रोग्राम कुछ इस तरह बना कि कुछ लोगो ने यह कहा कि महँगाइ बढ़ रही है और इसके लिए हमे शासन को चेतावनी देना है। मुझसे सलाह ली गई तो मैंने कहा—चेतावनी देना अच्छी बात है हमारी तरफ से भी द दो लेकिन महँगाई जो है वह कम होने वाली नही है।

जहाँ यह बातचीत हो रही थी, वहाँ एक जागरूक नागरिक भी खडा था। उसने सरकार को ललकारते हुए कहा—कम कैसे नही होगी सरकार को महँगाई कम करना ही पड़ेगी।

मैंने कहा—सरकार तुम्हारा कहना मानेगी कि सत्ता के सघर्ष से जूझेगी? नही करेगी महँगाई कम तो क्या तुम मर जाओगे?

जैसा कि मैंने आपसे कहा कि वो जो नागरिक था, वह कुछ जरूरत से ज्यादा ही जागरूक था। बोला—हाँ महँगाई कम नही होगी तो मैं सरकार के सामने मर जाऊँगा।

लोगो ने समझा कि वह आत्मदाह का अल्टीमेटम सरकार को दे रहा है। लोगो ने उसके नाम से जिन्दाबाद के नारे लगाए। कुछ लोग जल्दी से लाउडस्पीकर ले आए और रिक्शे मे भोगा बाँधकर आम सूचना जारी हो गई—आप लोगो को सूचित किया जाता है कि बढती हुई महगाई के विरोध म कल दिनाक को शाम सात बजे गाधी चौक मे श्री जागरूक

प्रसाद सिंह आत्मदाह करेंगे आपसे प्रार्थना है कि अधिक से अधिक संख्या मे उपस्थित होकर कार्यक्रम की शोभा बढाएँ।

जागरूक नागरिक ने जब यह सूचना सुनी तो सबसे पहले अपने माथे का पसीना पोछा। कहा—मेरा मतलब है कि

बीच म एक सज्जन बोले—ठीक है हम अभी आत्मदाह समिति का गठन करते हैं हम सब आपके साथ हैं आप अपने इस सार्थक उद्देश्य मे सफल होगे इसकी जिम्मेदारी हम पर है- बोलो भारत माता की

अब तक काफी लोग जमा हो गए थे। इनमे सभी समझदार थे ऐसी बात भी नही थी। एक आदमी अपने पास खडे एक जाकेटधारी सज्जन से पूछ रहा था—क्यो दादा ये आत्मदाह क्या होता है?

सज्जन उसे समझाने के मूड मे आ गए। बहुत देर तक समझाते रहे कि आत्मदाह जो होता है वह एक कुर्बानी का काम होता है इससे बडा नाम होता है। बडा साहस का काम है। आया समझ मे?

इतना डिटेल म बताने के बाद भी उस आदमी को मतलब समझ म नही आ रहा था। बोला—लेकिन होता कैसे है ये तो बताओ दादा? हमे नाम और साहस से क्या लेना देना। हम तो बस जानना चाहते है इस लिए पूछ रहे है।

मेरी इच्छा हुई कि उस आदमी को दो झापड मार दू। रोज इतनी बहुएँ जल रही हैं और साले को आत्मदाह का मतलब भी नही मालूम। फिर मुझे अचानक उस पर तरस भी आया। नई शिक्षा नीति पहले लागू हो जाती तो बेचारा कुछ समझदार हो जाता। सज्जन उसे फिर समझाने लगे। एक वाक्य बोलते और पूछते, आया समझ म? फिर दूसरा बोलते और पूछते आया समझ मे? मुझे भी विश्वास हो गया कि वे इस आदमी को आज आत्मदाह समझा कर ही रहेंगे। ऐसे निष्ठावान लोगो की आज देश को जरूरत है। बहुत-सी बातें है जो लोगो को आज तक समझ मे नही आई हैं।

लेकिन मेरा भ्रम उस समय टूट गया जब वही आदमी मेरे पास आया और उसने पूछा—क्या हो रहा है यहाँ? कोई सांस्कृतिक कार्यक्रम है क्या?

मैंने कहा—समिति का गठन हो रहा है।

उसने आगे पूछा—कौन-कौन खडा हो रहा है ? कोई व्यापारी सघ वाला है कि नही ? देखिए हम बता देते हैं कि हम तो वोट उसी को देंगे। वो सामने खडा है, वह कौन है ?

उसने जागरूक नागरिक की ओर इशारा किया था। मैंने कहा—वह महँगाई के लिए सरकार से लडाई लड रहा है।

वह बोला—तीन चार दिन से भूखा है क्या ? अरे भई, पहले उसे खिला पिला कर ताजा करो लडाई झगडा तो चलता ही रहता है अपने यहा।

इसके पहले कि मैं उससे कुछ कहता, उसने मुझे हीन दृष्टि से देखा और कहा, उ हूँ हम तो जानते थे इसी को आत्मदाह कहते होगे लेकिन हमने सोचा कि किसी से पूछ लेन मे अपना क्या जाता है अच्छा भाई साहब ! नाराज मत होना हम चलते हैं।

मुझे लगा कि उसने अपने पैर मे पहना हुआ चालीस साल पुराना जूता निकाल कर मेरे मुह पर मारा है और 'हम चलते हैं' कहकर विकास शील देश की तरह आगे बढ गया।

इस बीच समिति का गठन हो गया था। मेरे एक कवि मित्र उस समिति के अध्यक्ष बन गए थे। लोगो ने उनका स्वागत किया और उनसे आग्रह किया कि वे उपस्थित लोगो को सबोधित करें। 'चलो सबोधित कर ही दो' वाली अदा से वे आगे आए और भाइयो और बहनो के बाद बोले—प्रसन्नता की बात है कि इस व्यवस्था के खिलाफ आत्मदाह का निणय लेकर हमारे मित्र ने साहस का परिचय दिया है मेरी शुभ-कामनाएँ उनके साथ हैं। आप लोगो न मुझे इस समिति का अध्यक्ष बनाया इसके लिए मैं आप सबका हृदय से आभारी हूँ। बढती हुई महँगाई इस देश की एक बहुत बडी समस्या है मैं जानता हूँ सरकार चाहे तो इसे रोक सकती है लेकिन जब रोक ही नहीं रही है ता आप ही बताइए कि हम क्या करें ? हम आत्मदाह करके व्यवस्था को दिखा देना चाहते हैं कि आज भी अपने देश मे कुर्बानी देने वालो की कमी नही है अध्यक्ष होने के नाते मैं आज इस मच से घोषणा करता हूँ कि यह आत्मदाह चालू रहेगा

और रोज एक आदमी आत्मदाह तब तक करता रहेगा जब तक महँगाई कम नहीं होगी।

लोगो ने तालियाँ बजाइ। मैं समझ गया कि आज यह कवि "गर के सौ पचास लोगो को मारेगा।

जब सब लोग चले गए तो मैंने उससे पूछा—क्यो यार, य तो बताओ कि रोज एक आदमी को कुदाओगे ही क्या ?

वे जोश मे थे, बोले—बिलकुल ग्खत है सरकार कब तक हमारी माग पूरी नही करती।

मैंने कहा—रोज कूदने वाला मिल जाएगा ?

वे बोले—कैसे नहीं मिलेगा। लोग महँगाई से त्रस्त हैं तो सोचेंगे कि ऐस भी मर रहे हैं तो क्यो न कुछ नाम कमा कर ही मरें।

मैंन कहा—जिस दिन कूदन वाला नही मिलेगा तो तुम कूदोगे क्या ? वे बोले—म कसे कूद सकता हूँ मैं तो अध्यक्ष हूँ। मैं ही कूद गया ता आत्मदाह समिति ही भग हो जाएगी।

मैंन मोचा कि प्रोग्राम कई दिना तक चलेगा। रोज बोड पर पेंटर लिखेगा—आत्मदाह का शानदार दूसरा हफ्ता। आज के कलाकार हैं श्री

लकडी विक्रेता आत्मदाह के लिए स्पेशल डिस्काउट लागू करेंगे तो मैं भी दो चार क्विटल ले लूगा।

लेकिन एसा कुछ भी नहीं हो सका इसका मुझे दुख है। दूसरे दिन अदालत मे एक सज्जन ने याचिका दायर कर दी कि आत्मदाह समिति के अध्यक्ष का चुनाव प्रजातान्त्रिक प्रणाली मे नहीं हुआ है तथा इस चुनाव की विधिवत सूचना किसी को नही दी गई है। उन्हे पता होता तो व जरूर अध्यक्ष पद का चुनाव लडत, इसलिए आत्मदाह की कायवाही स्टे कर दी जाए।

अदालत न स्थगन आदेश जारी कर दिया। अध्यक्ष महोदय दुखी थ। कोई प्रसन्न हुआ होगा या मुझे नहीं मालूम। लकिन कायक्रम तो गया। जाने फिर कब दखने को मिलेगा हमे आत्मदाह।

जनसेवा की खुजली

सक्रिय राजनीति में घुसने के बाद वे दो बार भोपाल क्या हो आए, बस खुजली से परेशान रहने लगे। खुजा खुजाकर हालत खराब है। पहले खुजली का नाम लेते ही उन्हें शर्म आती थी लेकिन अब तो बेशर्मी से खुजा रहे हैं। राजनीति का यही असर तो स्थायी है।

पैसे वाले और खाते पीते घर के है। फिर तुर्रा ये कि सक्रिय राजनीति मे हैं। फिर शर्म काहे की? पहले तो लोगो की नजरें बचाकर खुजाते थे लेकिन अब तो खुजाने के पहले ये भी नही देखते कि आसपास सभ्रान्त महिलाएँ खडी हैं। ये जनसेवा भी साली बहुत फालतू चीज होती है। आदमी को कहाँ से-कहाँ ले जाती है। न भोपाल गए होते न इस जनसेवा की खुजली का शिकार हुए होते। लेकिन अब पछताए का होत है जब चिडियाँ चुग गई खेत। अब तो जब तक जीना है, बस खुजाना ही-खुजाना है।

तो क्या हुआ उसका? सुना है कोई लफ्डा हो गया और उसे इस्तीफा देना पडा।

बात शुरू करने से पहले ही खुजली शुरू हो गई। उन्होने अपना दाहिना पंजा बायें हाथ की उँगलियो के पास धीरे से रखा और चालू हो गए।

लेकिन भई वो तो एकदम करप्ट है। कितने मिनिस्टरो के साथ मैंने डाक बँगले मे देखा है।

खुजली बढ़ गई। अब तो उन्होंने खुलेआम रगडना शुरू कर दिया।

पहले दो उँगलियों से चुटकी काटते रहे और जब संतोष नही हुआ तो नाखून का उपयोग करने लगे।

जनता शासन में भी एक बार यही लफडा हुआ था।

अब तो खुजली तेजी से फलन लगी। वे खुजाते-खुजाते ऊपर की ओर बढे। इधर खुजली शात होती तो दूसरे प्रदेश मे शुरू हो जाती। वे इस प्रदेश से उस प्रदेश मे जाते और खुजाते।

—भई तुम कुछ भी कहो है तिकडमी। गोटी बिठा ही ली उसने।

अब उन्हें याद आया कि सामने बैठी एक महिला उन्हें खुजाता हुआ देख रही है। उन्होने खुजाना बन्द कर दिया। इतने बेशम अभी नही हुए हैं—ऐसा उन्होने सोचा। लेकिन अन्दर-ही अन्दर सुरसुराहट होती रही। उन्हे लग रहा था कि कुछ क्षेत्र अभी भी बाकी है जहाँ उनके नाखून नही पहुँचे है।

पहले वे बहुत छोटे थे। कम कमाते थे, अधिक आराम करते थे। बदन पर कोई बीमारी नही थी। सुबह एक बार जाते थे और फिर पूरे चौबीस घटे की फुरसत। अचानक एक चान्स लग गया दो नम्बर का। वे बहुत बडे आदमी हो गए। पहले तो आलम ये था कि रात मे जो सोए तो सुबह प्रेशर आने पर ही नीद खुलती थी। अब तो नीद ही नहीं आती। क्या-क्या लेना पडता है इस नीद के लिए। एमीबियासिस भी है। पाईल्स भी तग करता है। सुगर भी है। इधर इसनोफीलिया शुरू होता है तो उधर बीस हजार का प्राफिट हो जाता है। डाक्टरो का अधाधुध पैसा बाँट रहे है लेकिन पैसा है कि कम ही नही हो रहा है।

लोगो ने सलाह दी कि होमियोपैथ को दिखाओ। राजधानी के एक मशहूर होमियोपथ से सलाह ली तो उसने कहा—बडी बीमारी पैदा करो तो छोटी बीमारी अपने आप भाग जाएगी। यही होमियोपथी का सिद्धात है।

इसलिए विवश होकर बडी बीमारी की तलाश मे निकले। अमृतसर गए, चडीगढ घूमे और दिल्ली हो आए। लोगो ने कहा तुम्हारे लायक बडी बीमारी केवल भोपाल मे ही मिलेगी। वहाँ दो चार दिन डेरा-डडा डालकर पडे रहो।

बहुत कोशिश करने के बाद यह खुजली की बीमारी हाथ लगी है। जनसेवा के नाम पर यह बीमारी उन्हें फली। अब तो स्थिति यह है कि जब ऐसा लगता है कि कोई बीमारी परेशान कर रही है, वे खुजाने लगते हैं। ब्लडप्रेशर भी नारमल हो जाता है और भूख भी उठने लगती है।

कुल मिलाकर मस्त हैं, दोनों हाथों से खुजा रहे हैं। लोगों की परवाह नहीं करते कि कौन क्या कर रहा है। अब तो बस वे हैं और यह जनसेवा की खुजली है। हफ्ते-पन्द्रह दिन में एक बार भोपाल हो आते हैं इलाज के बहाने। इलाज तो बहाना होता है। वैसे वे भी चाहते हैं कि यह बड़ी बीमारी बनी रहे ताकि छोटी बीमारियों से निजात मिले।

खुजली के फायदे वही समझता है जिसको यह बीमारी हो। खुजाने के बाद दिल को जो सुकून मिलता है, इसे केवल वे ही जानते हैं।

जेब की राजनीति

पहले मैं सोचता था कि कुरते मे सामने की जेब केवल नोट रखने के लिए ही लगाई जाती है। डबल घोडा बोस्की का कुरता और उस कुरते की सामने की जेब मे जब सौ का नोट दिखता है, तो सामने वाले आदमी पर इसका अच्छा प्रभाव पडता है। इस जेब के सहारे आप किसी भी दूकान से पाच सौ का माल उठा लीजिए और बिना पैसे दिए चले जाइए। लेकिन मेरी यह धारणा उस समय गलत हो गई जब से मैंने सेठ के साथ घूमना शुरू किया।

सेठ की आदत है कि वे जब भी बाहर निकलते हैं, अपनी जेब खाली रखते हैं। लोग भी उन्हे इस आदत के कारण ही पहचानते हैं। वे इसी खाली जेब से पान भी खा लेते हैं दवाई की दुकान से चालीस पचास की दवाई भी ले लेते हैं किसी ज्वैलर की दुकान से पन्ना और पुखराज के पीस भी ले लेते हैं और मौका पडता है तो उसी दुकानदार से सौ दो सौ रुपया नगद भी ले लेते हैं।

मैंने उनकी खाली जेब से प्रभावित होकर एक दिन पूछा—सेठजी, जब आपका जेब मे कुछ रखना ही नही है तो कुरते मे जेब क्यो लगवाते हैं ?

सेठजी बोले—मार्क्सवाद पढते रहोगे तो जिदगी भर समझ नहीं सकोगे कि कुरते मे जेब क्यो लगाई जाती है।

दास कैपिटल' समझाते हुए सेठजी ने मुझसे कहा—पहले ढग का कुरता सिलवाओ।

मैंने उधारी में जीवन सेठ की दुकान से डबल घोड़ा बोम्की का कपड़ा खरीदा, उस पर जेब लगवाई और खाली जेब सेठजी के स्टाइल में घूमने निकल गया। पान की दुकान पर पहुँचा लेकिन पान माँगने की हिम्मत नहीं हो रही थी। कहने का मतलब यही है कि खाली जेब की प्रतिष्ठा बनाए रखना हम जैसे टुच्चे लेखकों का काम नहीं है। लेकिन हिम्मत भी नही हारना चाहिए। एक रचना लौट आई, इसका ये मतलब नही कि लिखना छोड़ दें।

मैं प्राविजन स्टोर की ओर बढ़ गया। सेठजी मेरी प्रेरणा के स्रोत थे। मैंने दुकान से चालीस रुपये का सामान डरते डरते खरीदा। सामान तो और भी ज्यादा खरीद सकता था लेकिन एक्सपरिमेंट के लिए इतना ही काफी था।

मैं झोला उठाकर जाने लगा तो दुकानदार ने कहा—पैसा रख दे सेठ उधारी बन्द है।

मुझे इस बात का दुःख हुआ कि आज तक अपने देश के दुकानदार को खाली जेब का मूल्यांकन करना नहीं आया। मैं झोले से सामान निकालने लगा। आखिरी टूथपेस्ट निकालने तक मुझे पूरा विश्वास था कि इसके कुरते की जेब को सम्मान देने के लिए दुकानदार कहेगा—रहने दो सेठ, मैं तो मजाक कर रहा था पैसे कहाँ जाएँगे।

लेकिन वाह रे इस देश के दुकानदार! उसने पूरा सामान गिनाने के बाद अपनी टिप्पणी दी—सेठ बने फिरते हो तो सौ-पचास रुपया जेब मे भी रखा करो।

अब मेरी धारणा फिर से वही बनने लगी कि कुरते मे जेब केवल पैसे रखने के लिए ही होती है।

सेठजी से अब मार्गदर्शन लेने की मेरी हिम्मत टूट चुकी थी। जेब को प्रगतिशील विंग मे जोड़ने की उनकी आदत से मैं परेशान हो चुका था। मैंने इस बार एक दूसरे सेठ को पकड़ा।

ये सेठ ताजा सेठ बने थे। मैं पहले उनके साथ पपलू वपलू खींच लेता था इसलिए उनसे मेरा 'जान बचाने लायक' सम्बन्ध बना हुआ था। वैसे भी नये सेठ की नजरों में मेरी प्रतिष्ठा इसलिए भी थी कि कभी-कभार

किसी अखबार में मेरी रचना छप जाती तो उन्हें गर्व होता कि उसके साथ पपलू खींचने वाला लेखक हो गया है। उन्होंने डबल घोड़े का कुरता सिलवाया, उसी दिन मैं समझ गया कि अब वे कुरते में सामने जेब लगवाएँगे और खाली जेब बाजार में घूमेंगे।

मैंने पूछा—सेठजी, आपकी जेब में कितने रुपये हैं?

वे समझ गए। बोले—आजकल हम जेब में पैसा लेकर नहीं निकलते। पुराने सेठ को देखा है कभी पैसा लेकर घूमते?

मेरे मन में नये सेठ के लिए अपार श्रद्धा उमड़ आई। मैं उनके साथ लग गया। वे दवाई की दुकान पर गए। तीस रुपये की दवाएँ खरीदीं और पचास का नोट दुकानदार की ओर बढ़ा दिया।

नये सेठ की इस प्रक्रिया ने मुझे फिर जेब की इस नई राजनीति के चक्कर में डाल दिया। मैंने कहा—सेठजी अभी तो आप कह रहे थे कि आपकी जेब खाली है फिर

वे बीच में ही बोले—अभी पूरा कान्फिडेंस नहीं जमा है सौ-दो सौ रख लेता हूँ धीरे धीरे जब आत्मविश्वास बढ़ जाएगा तो जेब में बिन पैसा रखे निकलूँगा अभी लोगों को केवल बताता हूँ कि मेरी जेब खाली है लोग धीरे धीरे समझ जाएँगे।

मैंने घिघिया कर कहा—सेठजी मुझे मार्गदर्शन दो ये खाली जेब की राजनीति मेरे पल्ले नहीं पड़ रही है।

वे बोले—कुरता सिलवाने के पहले लोग नहीं समझते कि इस देश में जेब का कितना महत्व है। जिस दिन आदमी को यह तमीज आ जाएगी कि कुरते की जेब कब खाली रखनी है और कब नहीं, तब समझ लो कि अपना देश आगे बढ़ जाएगा। वोस्की और खादी के कुरतों में जेबें इसी-लिए लगाई जाती हैं कि वे हमेशा खाली रहें। जब भी मतदाता देखे उसे खादी की जेब खाली ही दिखे। जेब आखिर जेब होती है। जेब की नियति ही है कि वह खाली रहे। वह जिस कुरते से लग जाती है, अपनी प्रतिष्ठा बना ही लेती है। जिन लोगों ने खादी के कुरते बनवाए हैं उन्होंने कुरतों में जेबें बड़ी लगवाई हैं। समझे कुछ?

मैंने कहा—बताओ सेठ मैं क्या करूँ?

वे बोले—हम लोगो के साथ सौ दो सौ रुपया लेकर चला करो। खाली जेब रखने के पहले ये साच लिया करो कि कही लोग यह तो नही कह रहे है कि तुम्हारा कुरता उधारी का है। समझे कुछ ?

मैंने नये सेठ के चरण स्पश करन का मूड बना लिया। मुझे लगा कि ये आदमी मुझे वैतरणी पार करवा देगा। इसके पहले कि मैं उनकी ओर चुकता वे बोले—दो सौ रुपये है तुम्हारे पास ? जरा यही से क्लब जाने का मूड बन गया है। तुम भी चलो _ एक जैकपाट मार देते है।

मैंने दीन भाव से कहा—हम मे क्या पैसा मांगते हो सेठ हम तो जेब के मामले मे पैदाइशी सेठ हैं।

नये सेठ ने मुस्कराकर कहा—निराश मत हो हिदुस्तान बहुत बडा है धीरे धीरे आत्मविश्वास पैदा करो। खाली जेब रखकर आत्मविश्वास पैदा कर लेना ही जेब की राजनीति है। समझे कुछ ?

मैंने सोचा—हम जैसे टुच्चे लेखक जिस दिन इतनी ऊँची बात समझ जाएँगे, सरकारी पुरस्कार के लिए दुम हिलाते नही फिरेंगे।

धोबी के गधे की कथा

अपने मौलिक अधिकारो के प्रति जागरूक होकर एक दिन गधे ने धोबी से कहा—अब आपको नया वेतनमान लागू करना पडेगा तभी मैं आपके यहाँ सर्विस करूँगा, वरना कल से आपका काम बन्द। इमिडियेट भूख हडताल चालू। समझे श्रीमान ?

धोबी ने सोचा अचानक इस गधे को अक्ल कहाँ से आ गई। पहले तो वह कही भी मुह मारकर पेट भर लेता था लेकिन अब कहता है कि लाल किले की ही हरी घास खाने की सुविधा उसे प्रदान की जाए। धोबी यह भी जानता था कि मेटाडोर मे कपडे लादकर लाना ले जाना महँगा पडता है। जब तक गधा तृतीय वर्ग कर्मचारी की तरह आँख मूद कर उसे अपनी सेवाएँ देता रहेगा तब तक उसका धुलाई उद्योग अधिक चलता रहेगा।

धोबी ने गधे से पूछा—क्यो बे गधे आज तू बहकी-बहकी बातें क्यो कर रहा है ?

गधा ताव खाकर बोला—ठीक से बात करो धोबी साहब ये 'अबे-तबे' मत लगाओ। गधे हैं इसका ये मतलब नही कि तुम मनमानी करते रहो और हम सहते रहें। हम कहते हैं सीधी तरह से हमको नया वेतनमान चाहिए। जब देश मे सब बाबू भैया लोगों को मिल रहा है तो हमने क्या बिगाडा है। नही दोगे तो ये लो हमारा इस्तीफा और खोज लो कोई दूसरा जानवर अपने धंधे के लिए। समझे कि नइ ?

धोबी सकते मे आ गया। उसे समझ मे नही आ रहा था कि आजू-

बाजू तृतीय या चतुर्थ वर्ग कर्मचारी की कोई हडताल नही होने पर भी इस गधे की वाणी आज मुखर कैसे हो गई।

धोबी ने उसे समझाया—साले धोबी का गधा होकर हमसे मुँह लडाता है? जानता नही कि हम तुझे छोड देंगे तो तू घर का रहेगा ना घाट का। तीन दिन मे अकल ठिकाने आ जाएगी और लौट कर फिर यही आएगा।

गधा बोला—ऐ मिस्टर धोबी स्वतत्र भारत मे गधो से बात करने की तमीज आज तक तुम्हें नही आई। तुम जानते हो, तुम किससे बात कर रहे हो?

धोबी समझ गया कि जरूर इस गधे के कान मे किसी यूनियन लीडर ने हवा भरी है। उसे यह भी शक हुआ कि किसी नेता के चक्कर मे तो यह गधा नहीं पड गया।

धोबी ने कहा—ओ ए गधे के बच्चे, सच सच बता, तुझे किसने भडकाया है?

गधे ने चारो ओर अपनी दृष्टि दौडाई। जैसे देख रहा हो कि इस देश मे विकास का काम कैसे चल रहा है। फिर अपने थूथन को इधर-उधर घुमाकर बोला—ऐ धोबी बहुत हो गया। अपनी भाषा पर अधिकार रख। मैं भी जानता हूँ कि दफा 294 भारतीय दड विधान म क्यो लगायी गयी है।

फिर धोबी न सोचा कि साले इस गधे को कायदा-कानून किसने सिखा दिया उसे शका हुई कि पुलिस लाइन क किसी आदमी ने तो इसे सिखा-पढा नही दिया!

जब धोबी ने दखा कि गधा पुट्ठे पर हाथ धरने नही दे रहा है, तब उसन विशुद्ध भारतीय पद्धति अपनाते हुए विनम्र होकर कहा—भाई गधे तुम तो बुरा मान गए। मेरा उद्देश्य तुम्हारी प्रतिष्ठा पर चोट पहुँचाने का नहीं था। यह तो तुम्हारे प्रति मेरा वर्षों का प्रेम था, इसलिए मैं अपनी भाषा म स्नेह की शब्दावली उपयोग म ला रहा था। कृपया मुझे यह बताइए कि आजादी के इन अडतीस सालो के बाद अचानक में इस वचारिक परिवतन का क्या कारण है?

गधा अपने लिए इस्तेमाल किए गए आदरसूचक शब्दों से मगन हो गया। बोला—तुमने मुझे इतने साला में पहली बार आप कहा। मैं तुम्हारी इस सम्मान भावना का आदर करता हूँ। बात ये है कि आज हम पहली बार अपने मौलिक अधिकारों के प्रति सजग हुए हैं। कल ही हमने अखिल भारतीय संघ का गठन किया है और मैं उसका अध्यक्ष हूँ। अब देश के तमाम गधों के अधिकारों की रक्षा का भार मेरी पीठ पर है। अब ये नहीं चलेगा कि तुम हमें दो डंडे मारो और हमसे रगड़ कर काम लो। हम नया वेतनमान चाहते हैं। टी० ए०, डी० ए० और आवास की अच्छी सुविधा चाहते हैं। सरकारी घास पर आज तक तुमने हमें आश्रित रखा लेकिन अब ये नहीं चलेगा। हमसे नौकरी लेना है तो घास का स्टंडर्ड ऊपर उठाना पड़ेगा। दैनिक मजदूरी भी नियमानुसार बढ़ानी पड़ेगी। कहो तुम क्या कहते हो?

धोबी ने समझाया—भाई गधे, मैं तो कहता हूँ कि इस नेतागीरी का चक्कर छोड़ो। देश में वैसे भी नेतागीरी के क्षेत्र में तुम्हारी मानसिकता वाले बहुत लोग हैं। तुम लोग तृतीय श्रेणी वाले हो। हमसे लड़ोगे तो नुकसान में रहोगे। दिल्ली में भी हमारे खानदान के कई धोबी बैठे हैं। तुम हमारा बोझ ढोने के लिए ही इस देश में पैदा हुए हो। तुम्हारे मौलिक अधिकारों के बारे में सोचना हमारा काम है, तुम्हारा नहीं। हमारे पुराने संबंधों का भी ख्याल रखो। इस नये वेतनमान के लिए क्या तुम धोबी और गधे के शाश्वत रिश्ते को ठुकरा दोगे? बोलो? क्या यही हमारी भारतीय परम्परा है?

परम्परा की बात सुनकर गधा विनम्र हो गया। बोला—सो तो ठीक है लेकिन अध्यक्ष होने के नाते मैं तुम्हारी बातों को मान लूंगा तो देश के तमाम गधों की आस्था डगमगा जाएगी।

धोबी ने कहा—मुझ पर विश्वास रखो मित्र कल से मैं तुम्हें सारी सुविधाएँ प्रदान करूँगा। डाक बँगले की अच्छी घास खिलाऊँगा। तुम्हारे और मेरे सम्बन्ध फिर प्रगाढ़ हो जाएँगे और मैं तुमसे मित्रवत व्यवहार करूँगा। मेरी मानो और अध्यक्ष पद से इस्तीफा दे दो।

गधा बोला—मुझे समय दो। मैं बिना दूरगामी परिणाम सोचे कोई

निर्णय लेने का पक्षधर नहीं हूँ।

दूसर दिन गधे ने संघ की आपात बैठक बुलाई और नय वतनमान और सुविधाओं पर बहस हुई। अध्यक्ष की आसदी से गधे न सम्बोधित किया—उपस्थित देवियो और सज्जनो हमारा देश गधा का देश है धोबी से हमारा रिश्ता जन्मे समय से है। धोबी के बिना हमारा कोई स्वतन्त्र अस्तित्व हमे समाज म दिखाई नही देता। मेरा विचार है कि हम इस नये वेतनमान के चक्कर म न पड़ें तो अच्छा है। धोबी आखिर धोबी होता है। यह लड़ाई संघर्ष की लड़ाई जरूर है लेकिन इस धोबी सरकार से अपनी मांगें स्वीकार करवा लेना भी बड़ी मुश्किल का काम है। लिखा-पढ़ी करते-करते ही हमारा रिटायरमेंट का समय आ जाएगा। इसलिए मैं निवेदन करता हूँ कि आप इस पर गम्भीरता से विचार करें, चिंतन करें और काफी सोच विचार के बाद ही कोई कदम उठाएँ। मेरी व्यक्तिगत राय यह है कि धोबी के साथ रहना ही हमारे समाज के लिए अधिक श्रेयस्कर है।

उपस्थित गधो ने 'अध्यक्ष—हाय हाय' के नारे लगाए और कहा कि उनका अध्यक्ष लालच मे आकर धोबी से मिल गया है। गधे को अध्यक्ष पद से इस्तीफा देने के लिए बाध्य किया गया। तब गधे ने अपना इस्तीफा देते हुए वक्तव्य दिया—मैं जनहित म यह त्यागपत्र दे रहा हूँ। आप सब इसे अन्यथा न लें। मेरी बातें आपको बाद मे समझ मे आएँगी। मैं कामना करता हूँ कि इस देश मे आप सब लोगो को जल्दी अक्ल आए। जय हिन्द।

गधा जब वापस लौटकर धोबी के पास आया तो धोबी ने कहा—क्या बे गधे बड़ी नेतागीरी बघार रहा था अबे हम भी खानदानी धोबी हैं और जानते हैं कि धोबी पछाड क्या है। आ गया न हमारे चक्कर मे।

गधा बोला—जय हे भारत भाग्य विधाता जय हे।

इधर नये अध्यक्ष को पद और गोपनीयता की शपथ दिलाई जा रही थी और नारे लग रहे थे—अभी तो ये अंगड़ाई है—आगे और लड़ाई है।

हम परगतिशील है

कल हमारे पास एक आदमी आया। वाला—बाबाजी, मैंने कविता लिखी है। जरा आपको सुनाना चाहता हूँ।

मैंने मन ही मन सोचा, इस आदमी की अकल मारी गइ है। मैंने कहा—भइया तू तो अच्छा भला इज्जतदार आदमी लगता है। इम चक्कर मे कैस पड गया? वह बोला—साहित्य का आप चक्कर कहत हो बावाजी? कविता नही रहेगी तो सवेदना नही रहेगी और जब सवेदना नही रहेगी तो आदमी नही रहेगा। दूसरा का दु ख-दद कम समझेंग बिना सवेदना के?

—क्यो भइया, सबक दु ख दद समझने का ठेका तूने ही ले रखा है क्या? अपने क्षेत्र के नेता अभी जिन्दा है।

—देखिए बाबा जी आप कविता को राजनीति म मत जाडिए।

मैं समझ गया कि वडा हुडड किस्म का आदमी है। समझेगा नही। इसलिए मैंने कहा—अच्छा भइया मेरा क्या है, बन जा कवि और टटोल दूसरा का दु ख-दद।

वह बोला—बाबाजी, आपम यह उम्मीद नहीं थी। आप भी नयी प्रतिभाओ को निराश करते हैं।

मैंन कहा—बच्चा, निराश करन की बात नही। बहुत चिन्तन की जरूरत होती है। कोई टलर मास्टरी नही कि उठाई कैंची और काट कर चड्डी सिल दी। एक कविता लिखाग तो सौ लागा का भेजा खराब हाता है। समझे?

वह बोला—बाबाजी, लगता है आप फ्रस्टटेड हैं। मतलब है कुंठित हैं। आपके विचार प्रगतिशील नहीं हैं।

—क्यों भइया, ये बता कि तू कहीं शिविर विविर मे तो नही गया था?

—गया था तभी कह रहा हूँ कि आप कुंठित है। आपके विचार सकुचित है। आप निराशावादी हैं। आपकी बातो म प्रतिक्रियावादी गध आ रही है। आप अपने देश से साहित्य को मारना चाहत हैं। लकिन याद रखिए बाबाजी, जब तक मेरी सांस म सांस है मैं कविता को मरन नही दूगा। मैं कविता लिखूगा और लिखता रहूँगा फिर चाह आप जैसे पचास बाबा मुझे निराश क्यो न करें। मैं अकेला शोषण के खिलाफ लड गा। जब तक मरे हाथ म कलम है मुझे कविता लिखन स कोई नही रोक सकता।

मैं समझ गया कि इसके दिमाग म कविता की हवा भरी है। मैं एक सवाल करूँगा तो यह साहित्य के पचास सवाल एक साथ मरे सामन फेंक देगा। गम खून वाला है और अभी-अभी किसी साहित्यिक आयोजन स लौटा है। जोश मे कुछ कर देगा तो मेरी फजीहत हो जाएगी।

मैंने कहा—अच्छा बबुआ, बता तू काम क्या करता है?

वह बोला—पान की दुकान है मेरी चौक मे। लेकिन बाबाजी एक बात बता देता हूँ कि मेरी साहित्यिक प्रतिभा का मूल्याकन मर व्यवसाय से मत कीजिए। जब हमारे यहाँ पशु-चिकित्सक कवि हो सकता है, मास्टर कवि हो सकता तो पान वाले ने क्या बिगाडा है साहित्य का। हम कत्था चूना वाले हैं बाबाजी। समझते हैं कि रचनाधर्मिता क्या होती है। पान मे कितनी डडी कत्थे की मारन पर पान जायकेदार बनेगा हम जानत हैं। चूना कब और कहाँ लगाना चाहिए इसकी भी समझ हमको है। एसा नही कि जिन्दगी भर बँगला कपूरी ही कर रहे हैं। साहित्य का पान पराग क्या होता है हम भी जानते है। यकीन न हो तो सुनिए हमारी कविता।

वह अपन झोले से डायरी निकालन लगा। मैंन कहा दख बच्चा, हम तो ठहरे बाबा आदमी। तू कविता सुनाएगा तो हम तुझे गाली देंगे।

वह बोला—अपने देश म समीक्षा का स्तर बहुत गिर रहा है। इसम आपका दोष नही है। मैं जितना कत्थे चूने से प्रतिबद्ध हूँ उतना ही कविता से भी हूँ। किसी का मुह पान खाने स फट जाता है तो वह मुझे गाली देता है। मैं सुन लेता हूँ और एक आधे पान म कत्था लपेट कर थमा देता हूँ। यही होता है साहित्य में। आप गाली दोगे तो मैं एक क्षणिका और थमा दूगा आपका। हम नये लोग हैं बाबाजी। गालियो से नही डरत साहित्य म। आप गाली देंगे तो हमारी सवदना जागेगी। हमारी साहित्य मे सघर्ष क्षमता तगडी होगी। फिर जो कविता हम लिखेंगे वह सीधी चोट करेगी। गम लोहे की तरह उतर जाएगी जनमानस मे।

वह थोडी देर के लिए रुका और फिर उसने एक दनदनाती हुई कविता मेरी ओर दाग दी।

मैंने कहा—बच्चा, अभी तेरे खेलन के दिन, खाने के दिन हैं। कोई शृगार गीत लिख। इस तरह की कविता लिखने के लिए तो अभी पूरी उम्र बाकी है तेरी।

वह बोला—नही बाबाजी। शृगार वर्जित है, हमारे लिए। हम नयी पीढी के फौलादी लोग हैं। जब भी कलम उठाएँगे फौलाद की बात करेंगे। किसी लडकी के गुलाबी गाल देखकर हमे कुछ नही होता। वे दिन नही रहे बाबाजी। सामतवादी युग मे होती थी लडकी। अब तो हमे इस छिछली अनुभूति से मुक्त होना है। नारी देह हमारे लिए कोयले के समान है। हम उस पर थूकते हैं। हम परगतिशील लोग हैं बाबाजी, मच पर मटक मटक कर कविता सुनाने वाल कवि नही हैं। हमारी कविता मे आग होती है आग।

मैंने कहा—भइया थोडी सी आग हम दे दे तो हम अपनी चिलम सुलगा लें।

अब की बार उसने मुझे बुर्जुवा कहा और एक गाली भी दी जो इतनी साहित्यिक थी कि मेरी समझ म नही आई।

दूसरे दिन वह आया तो उसके हाथ मे एक पान था। बोला—बाबाजी, आपके लिए आया हूँ।

इसके पहने कि मैं कुछ कहता उसने कहा दो कविताएँ लाया हूँ। सुन लीजिए। एकदम परगतिशील हैं।

सूर्यनारायना को पकड़ो

भारतीय रेलवे मे लगभग हर स्टेशन पर सूर्यनारायना होता है। आपको आरक्षण नही मिल रहा है, सूयनारायना को पकडो। आपको सिटिंग चाहिए, सूयनारायना को पकडो। आप बिना टिकिट आ रहे है और आपको प्लेटफार्म से बाहर आना है, सूयनारायना को पकडो। वह ट्रेन आने के पाच मिनट पहले प्लेटफाम पर अवतरित होता है, लोगो के दु ख-दर्द बटोरता है और जसे ही गाडी प्लेटफाम पर लगती है थ्री-टीयर के कडक्टर की जेब मे भारतीय मुद्राएँ डालकर रेलयात्रियो को उपकृत करता है। उसका ज म भारतीय रेलयात्रियो को बथ दिलाने के लिए ही हुआ है। वह हर ट्रेन में यह बथ-व्यवसाय निष्ठापूवक चला रहा है।

मुझे भोपाल जाना था। मैंने कई लोगो को बताया कि मैं भोपाल जा रहा हूँ। यही आदत तो मेरी अच्छी है। बक गया तो शर्माजी को बताया, वे बोले—अच्छी बात है हो आओ, गैस त्रासदी की बरसी भी मना लेना।

मैंने कहा—सो तो ठीक है लेकिन आरक्षण नही है।

वे बोले—तो क्या हुआ। सूयनारायना को पकड लेना। हम तो उसी को पकडते हैं।

फिर मैंने यही बात पाडेजी को बताई। वे भी बोले—बस, सूयनारायना को पकड लेना।

मुझे पहली बार लगा कि इतना व्यग्य लिखने के बाद मैं जितना स्थापित नही हो सका उतना तो हमारे इधर सूयनारायना हो गया है।

नगर के हर भले आदमी की जुबान पर सूयनारायना का नाम है।

अब स्थिति यह थी कि मैं सूयनारायना के दर्शन के लिए व्याकुल था। लोगों ने बताया कि उसे खोज पाना आसान काम नहीं है। कभी पासल गोदाम के पास मिलेगा तो कभी रेलवे की पानी की टंकी के पास। वह चलता फिरता रेलवे सेवक है। प्लेटफाम पर मेरी तरह तीन चार और भी सज्जन दिखने वाले लोग सूयनारायना की तलाश में थे। हालत यह थी कि मैं हर काले रंग के नये आदमी को देखकर पूछता—क्यों भाई साहब, आप सूयनारायना तो नहीं हैं? वे कहते—नहीं, मैं खुद सूयनारायना को ढूंढ रहा हूं। आपका आरक्षण हो गया है?

मैंने कहा—हो गया होता तो सूयनारायना को क्यों ढूंढता!

वे मुस्कुरा देते और फिर हम दोनों कोलंबस की मुद्रा बना कर पूरे प्लेटफाम में इधर-उधर कोई गुमी हुई अनमोल वस्तु की तरह सूयनारायना को खोजते रहते।

मैं पूछता—क्यों, भाई साहब, कितने पैसे लगेंगे बर्थ के लिए?

वे कहते—पचास तो देना ही पड़ेगा। आजकल शादियों के कारण रश चल रहा है। मैं पिछली बार दिल्ली से आया तो सत्तर रुपये देने पड़े तब बर्थ मिली।

मैंने कहा—यानी कि बर्थ रेट उछला है शादी में।

वे हँसे। बोले—ये तो सूयनारायना की सुविधा है वरना आपको तो सौ रुपये देने पर भी कंडक्टर अँगूठा बता देगा।

हम बातें कर रहे थे तभी एक विलक्षण प्रतिभावान ओजस्वी चेहरा प्लेटफाम पर अवतरित हुआ। सभी उसकी ओर दौड़े। लोगों ने एक साथ कहा—सूयनारायना आ गया सूयनारायना आ गया।

लोगों ने उसे घेर लिया। सूयनारायना ने ब्रह्मवाणी की—तीस तीस रुपया निकालो जिसको बर्थ लेना है।

दस लोगों ने अपनी-अपनी टिकटें और तीस-तीस रुपये सूयनारायना को अर्पित किए। और चैन की सांस ली। मेरे साथ जो सज्जन थे वे बोले—चलो अब चाय पीते हैं। इधर रेट बहुत सस्ता है बर्थ का।

मेरा मन सूयनारायना के लिए श्रद्धा से भर गया। अरे वाह रे दिव्य-

पुरुष, तू सतयुग की कोई महान आत्मा है जो रेलयात्रियों की सुविधा के लिए इस शस्य श्यामला धरती पर आई है। बारह रुपये तो रेल विभाग को ही चले जाएँगे। यानी कि तू सिर्फ अट्ठारह रुपये में बर्थ दिलवा रहा है? सच, तू बड़ा धर्मात्मा है भाई, ईश्वर तेरे बाल-बच्चे सुखी रखे।

सज्जन बोले—क्या सोच रहे हो भाई साहब?

मैंने कहा—यही कि सूर्यनारायना कितना अच्छा है। इस तरह यात्रियों की सेवा करके वह कितना पुण्य कमा रहा है। उसे तो स्वर्ग ही मिलेगा।

वे बोले—बड़ा अच्छा धंधा है। अट्ठारह में से दस कंडक्टर को देकर आठ अपने पास रखता होगा, तब भी रोज के दो सौ रुपये तो बना ही लेता होगा। न इन्कमटैक्स न सेलटैक्स का लफड़ा। चोखा काम है।

मैंने मन ही मन प्रार्थना की कि मुझे अगले जन्म में सूर्यनारायना ही बनाना। पाँच सौ रुपट्टी की नौकरी करते-करते कमर टूट गई है।

ट्रेन आ गई। थ्री टीयर के सामने कंडक्टर पर लोग टूट पड़े लेकिन कंडक्टर ने सबसे कह दिया—नो रूम। याने कि बर्थ खाली नहीं है। कंडक्टर जहाँ जाता लोग उसके पीछे जाते। भारतीय रेलवे में यही एक दृश्य मुझे हर प्लेटफार्म पर अच्छा लगता है। कंडक्टर सबको ईमानदारी से कह रहा है कि बर्थ नहीं है लेकिन लोग तीस दे रहे हैं, चालीस दे रहे हैं, पचास दे रहे हैं लेकिन वह बस यही कहता है कि जगह नहीं है।

मैं चिन्तित हो गया तो मेरे साथ वाले सज्जन ने कहा—चिन्ता मत करो। हम लोग सूर्यनारायना वाले हैं। हमको बर्थ मिलेगी।

सूर्यनारायना का कर्तव्यबोध जागा और उसने कंडक्टर से संपर्क किया। टिकटें दीं और उन पर बर्थ नम्बर लिखवाए। इसे कहते हैं रेल यात्रियों की सच्ची सेवा। मुझे तो उन लोगों पर तरस आता है जो आरक्षण के लिए दस दिन तक धक्के खाते हैं। ईश्वर, तू उन्हें सद्बुद्धि दे कि वे सूर्यनारायना को पकड़ें।

फिर सूर्यनारायना एक महान पुरुष की मुद्रा धारण किए हम लोगों के पास आए। एक-एक आदमी को पूछ कर टिकट वापस की और पुच्छल तारे की तरह प्लेटफार्म से ओझल हो गए।

भोपाल का सफर वर्थ पर आराम से सोते-सोते कटा। सब सूयनारायना की कृपा थी। भोपाल में जिस दिन मैं वापस आ रहा था तो मन भारी था। गैस त्रासदी की बरसी थी। मुख्यमंत्री आम सभा को संबोधित करते हुए अपनी श्रद्धांजलि गैस त्रासदी में मरे व्यक्तियों को दे रहे थे। बड़ी दुखद बेला थी। प्लेट फार्म पर भीड़ बहुत थी। मेरी तरह अनेक लोग आरक्षण के लिए लोगों को पटा रहे थे। एक जनता पार्टी के समय के विधायक भी थे जो मुख्यमंत्री कोटे से एक सीट भिड़ाने के चक्कर में थे। मैं तो इसलिए निश्चित था कि इधर भी भारत सरकार ने हम जैसे दीन दुखी यात्रियों के लिए सूयनारायना की व्यवस्था जरूर की होगी जो ठीक दस मिनट पहले आएगा और हम लोगों के दु ख-दर्द दूर कर हमें एक बर्थ दिला देगा।

मैंने एक लाल कपड़े वाले कुली से पूछा—क्यों, इधर कोई सूयनारायना नहीं है, उसने पूछा—क्या काम है? मैंने कहा—एक बर्थ चाहिए।

कुली बोला—मैं ही सूयनारायना हूँ भोपाल का। सत्तर रुपये लगेंगे।

उसका जवाब सुनकर गैस त्रासदी की पीड़ा घनीभूत हो गई। मैंने कहा—हमारे यहाँ तो तीस का रेट चल रहा है।

वह बोला—होगा साहब। लेकिन हमारा तो सब गैस में बरबाद हो गया। नया घर बसाना है। हम रोज दस टिकट खरीदते हैं वो भी आज से एक महीना पहले और उसे रिजर्व करवाते हैं। ईमानदारी का काम है साहब। टिकिट और आरक्षण के पैसे के अतिरिक्त हम केवल सत्तर रुपये लेते हैं। आपको लेना हो तो लीजिए नहीं तो किसी दूसरे को दे देंगे।

मैंने उसकी ओर दयनीय दृष्टि से देखा। अपना रेट तीस रुपये से पचास रुपये तक बढ़ाया। लेकिन उसका पत्थर दिल नहीं पिघला। अरे वाह रे भोपाल के सूयनारायना। इससे तो अच्छा हमारा सूयनारायना है।

मैंने अपने सूयनारायना को याद किया और जनरल बोगी में भेड़-बकरी की तरह घुस गया।

दुःखी महासघ

वे पदायशी दु खी हैं। जब पैदा हुए थे तब प्रसूतिगृह के कमचारी हड़ताल पर थे।

कुल मिलाकर वे दु खो म प्रतिबद्ध आदमी हैं। उनके शरीर पर जगह-जगह दु ख चिपका हुआ है। वे इसलिए दु खी हैं कि उनके सिर पर बालो की मात्रा घनी नही है, वे इसलिए दु खी हैं कि उनका कद ऊँचा नही है। वे इसलिए दु खी हैं कि उनके हाथ छोटे हैं, वे इसलिए दु खी हैं कि महिलाएँ उन्ह देखकर हँसती हैं। यानी कोई एक दु ख हो तो कहूं। उनका पूरा शरीर दु ख का लघु उद्योग केन्द्र है, जहाँ दु खो की ढलाइ होती है, दु ख रोज ही टूटते फूटते रहते हैं और कच्चे माल की तरह दु ख के वाहन रोज ही उनके दरवाजे पर खडे रहते हैं। लोडिंग-अनलोडिंग चलती ही रहती है।

किसी की शादी है, तो वे दु खी हो जाते हैं। सोचते हैं उनकी क्यो नही हो रही है ? कोई बडा आदमी मरता है तो वे दु खी हो जाते हैं, वे क्यों नहीं मर रहे हैं ?

उनका आउटलुक पूरी तरह दु खी है। चेहरे पर दु ख की परतें आँख की पुतलिया म तैरता हुआ दु ख, कानो के बालो मे फरफराता हुआ दु ख। जब वे खखारते हैं तो उनके गले से बलगम बाहर आता है। वह इस धरती पर बिखर जाता है और फिर दु खी हो जाता है। किसी ने उन्हें सलाह दी—साहित्य से जुड जाओ तो दु ख कम हो जाएगा। हिन्दी साहित्य ने लोगो का दु ख दूर किया है। कहानी लिखो, कविता लिखो,

खुद प्रसन्न रहो और दूसरा को दु खी करो।

उन्होने अपनी साहित्यिक प्रतिभा का एक छोर फन्टन्टनपन की क्लिप मे डाला और नाटे की तरह साहित्य मे घुस गए। कविता पर अत्याचार करने की मुद्रा मे वे आ गए। किसी के घर बच्चा पैदा होता ता वे कविता लिख देत, सडक पर कुत्ता दिखता तो वे कविता लिख दते कहीं कुछ भी नही दिखता ता भी कविता लिख देते। अब वे इसलिए दु खी हैं कि उनकी रचनाएँ कोई नही सुनता, उनकी कविताएँ कोई नहीं छापता। लोग पहले पीठ पर गालियाँ देते थे अब मुह पर गालियाँ दे रहे हैं। अब वे पूरे हिंदी साहित्य से दु खी हैं।

लोगो ने फिर सलाह दी, साहित्य को छोडो। जनसेवा का काम हाथ म लो। देश को तुम्हारे जैसे व्यक्तियो की जरूरत है। देश सकट मे है। इसे उबारो। उन्होंने कुरता-पाजामा सिलवाया और जनसेवा के मदान मे उतर आए। पर वे वहाँ भी दु खी हैं। लाग मर रहे हैं लेकिन उनको सेवा का अवसर नही दे रहे हैं। लोग कहते हैं कि वे मनहूस हैं, जहाँ जाते है वातावरण गभीर कर देते हैं। अब क्या करें! भाषण देते हैं तो दर्द पीडा, श्वास, श्रासदी, जख्म, फोडा, मवाद, और इमी तरह के शब्दो के अलावा दो चार अन्य शब्दो के साथ भाषण समाप्त करत हैं। लोगो का कहना है, यह आदमी है या पिछले जन्म का राक्षस? गालो दो फिर भी नही समझता।

मुझसे मिले तो कहने लगे बताओ अब क्या करूं? मेरा जीवन दु खी है। मुझे मागदशन दो। मैंने कहा पूरा देश दु खी है। जिनकी बहुएँ नही जल रही हैं, उनके पति दु खी हैं जिनको मत्रालय मे नही लिया जा रहा है वे सासद और विधायक दु खी हैं, जिनको नौकरी नही मिल रही है वे दु खी हैं, जिनकी नौकरी है वे इसलिए दु खी हैं कि बाहर की आमदनी नही है। कोई एक दु ख हो तो कहें। आपका दु ख देश का दु ख है।

वे मरी बातें ध्यान म सुनत रहे।

मैंम फिर कहा—आप कोचिंग क्लास चलाइए। दु खी लोगो का सघ बनाइए और आप दु खी महासघ के अध्यक्ष बन जाइए। अपने देश मे

कोई पैदा होता है तो दु ख व्यक्त कीजिए, कोई मरता है तो दु ख व्यक्त कीजिए कोई मन्त्री बनता है तो दु ख व्यक्त कीजिए। दु खी महासघ सक्रिय होगा तो सरकार विचार करेगी कि सघ का प्रतिनिधित्व ससद या विधानसभा मे होना चाहिए। मेरी सलाह है कि दु खी की रोटी खाने से बडा सुख इस देश मे और कोई नही है।

उन्होने गभीरतापूर्वक विचार किया।

अब वे दु खी सघ के लिए सदस्यता अभियान प्रारम्भ कर रहे हैं। सुना है सघ के पहले अधिवेशन के लिए वे किसी प्रदेश के मुख्यमत्री से भी सम्पर्क कर रहे हैं।

शोक-सन्देश एक्सपर्ट

भारत एक्सपट प्रधान देश है। यहा एक्सपट टेलर्स हैं, एक्सपर्ट ड्राइक्लीनस है, चमडे के एक्सपट हैं और दिल के भी एक्सपट हैं। युवा वग चाकू मारने और गोली चलाने मे एक्सपट हैं। एक बडा वग उधारी के पैसे डुबाने म एक्सपट है और कुछ लोग उधारी लेने म एक्सपट हैं।

इस देश के ऐसे ही नगर के वे नागरिक हैं, दिखने म मरियल लेकिन अपने आपको एक्सपट मानते है, शोक स देश एक्सपट। उधर कोई मरा नहीं कि उ होने शोक स देश टिका दिया। और मजे की बात यह है कि अपने शोक स देश मे वे यह प्रमाण पत्र जरूर देते है कि मरने वाले स जो क्षति हुई है, वह अपूरणीय है। कुल मिलाकर उनका शोक-स देश देने का नशा है। वे लोगो से यही पूछते हैं कि आज कौन मरा है। बस नाम भर मालूम हो जाए, वे इतना तगडा शोक स देश दंगे कि मरने वाला भी प्रस न हो जाएगा। सौज य से सभी प्रस न रहते है।

मैं जब उनसे मिला तब वे अपनी दुकान पर बैठे थे। उनकी नजरें अखबार पर थी। पता चला कि एक टैक्सी दुघटनाग्रस्त हो गई है और उसम बैठा एक व्यक्ति मौके पर ही जयहि द हो गया है। अखबार म उसका नाम नही था, इसलिए वे बेचैन हो गए। मुझस पूछा, कौन हो सकता है ? मैंने कहा अपने नगर का नहीं है। होता तो शवयात्रा निकल गई होती। वे बोले, फिर कौन हो सकता है ? मैंने कहा—हि दुस्तान का कोई आदमी हो सकता है। मरने वालो की कमी अपने देश मे नही है।

उनकी आत्मा शोक स देश के लिए फडफडा रही थी। मैं जानता हूँ

यदि उन्हें मरने वाले का नाम-पता मिल जाएगा तो वे तुरत उसके घर पहुँच कर उनके रिश्तेदारों को सान्त्वना देकर कहेंगे—इस देश में मरना-जीना तो लगा रहता है, लेकिन आदमी हीरा था हीरा। भगवान मृतात्मा को शांति प्रदान करे।

इस तरह उन्होंने पहले मौखिक शोक सन्देश समाज में प्रसारित करने की प्रैक्टिस की और जब उनका आत्मविश्वास बढ़ गया तब वे अखबारों की ओर बढ़े। वे देश के सभी प्रमुख अखबार मँगाने लगे और देखने लगे कि कौन से शहर में कौन सा भारतीय नागरिक मरा है। वे तुरत एक पोस्टकार्ड लेते और सम्पादक के नाम शोक संवेदना प्रकट करते हुए लिखते कि उन्हें इस नागरिक के मरने का गहरा शोक है तथा उनकी ओर से मृतक के जीवित रिश्तेदारों को सूचना दे दी जाए कि ईश्वर उन्हें यह दुख सहन करने की शक्ति प्रदान करे। दूसरे चरण में वे रोज अखबार देखते और अपने शोक सन्देश के छपने की प्रतीक्षा करते। लेकिन दुख तो उन्हें इस बात का था कि किसी अखबार में उन्हें आज तक प्रकाशन नहीं मिला।

मुझसे अपना प्रकाशन दर्द बताते हुए उन्होंने कहा—देश में सहानुभूति नहीं रही। किसी के मरने पर अपना शोक व्यक्त करो तो भी कोई छापने को तयार नहीं है। अब तो इस देश में रहने के बदले मर जाना अच्छा है।

मैंने कहा—यह बात नहीं है। दरअसल आपने तो शोक-सन्देश को रेवड़ी बना लिया है। देने के पहले देख तो लिया करें कि मरने वाला इस लायक है भी या नहीं।

उन्होंने मेरी बात को गंभीरता से लिया। बोले—आप तो साहित्य से जुड़े हैं कृपया मुझे बताइए कि कोई ऐसी किताब मिलेगी जिसमें इस बात का पूर्ण विवेचन हो कि शोक सन्देश कब और कैसे दिया जाए।

मैंने कहा—अभी तक तो कोई किताब मेरी नजरों से नहीं गुजरी है लेकिन आपकी बातों से प्रभावित होकर मैं 'शोक सन्देश रचनावली' लिख डालने की सोच रहा हूँ। आप जैसे बहुत से लोगों को इस देश में शोक-सन्देश की सही समझ देना जरूरी है।

उन्होंने अपने छोटे छोटे हाथों मे तम्बाकू मलकर खैनी बनाई, ताली मारी और अपनी छोटी-सी बाईं हथेली आगे बढ़ा कर कहा—लीजिए।

फिर किसी प्रतिष्ठित जानवर की तरह मुह का निचला होठ बाहर निकाला और खैनी होठ के नीचे दबा कर बोले—मैं आपस मार्गदर्शन लेना चाहता हूँ आपसे सच कहता हूँ कि मेरी केवल इस देश मे एक ही महत्त्वाकांक्षा रह गई है कि मैं अखिल भारतीय स्तर पर शोक-सन्देश एक्सपर्ट के रूप मे अपनी पहचान बना लू लोग मरने के बाद मेरे शोक-सन्देश की प्रतीक्षा करते रहे और जब तक मेरा शोक सन्देश प्रसारित या प्रकाशित न हो जाए मरने वाले को भी न लगे कि उसका मरना इस देश मे सार्थक हुआ।

शोक सन्देश की इस विधा के प्रति उनकी जबरदस्त आस्था देखकर मैं प्रभावित हुआ। इस मामले मे व मुझे प्रतिभा के धनी लगे। अपने देश मे पापुलर होने की अनेक विधाओं मे से उन्होंने इस विधा को चुना, यह उनकी प्रगतिशील सूझबूझ का परिचायक है।

उनका पूरा व्यक्तित्व और कृतित्व का परिचय इस प्रकार है कि वे पहले एक साप्ताहिक निकालते थे। वहाँ से शोक-ग्रस्त हुए तो सडक पर आ गए। पान की दुकान लगाई चाय का स्टाल चलाया तो वहा भी शोक ग्रस्त हो गए। फिर लकडी का एक हाथ ठेला बनवा कर कबाड के व्यवसाय मे उन्हें सभावना नजर आई लेकिन बहुत जल्दी वहा भी वे शोक-ग्रस्त हो गए। इसके बाद उन्होंने कफन उदबत्ती और दिगर शव-सामग्री की दुकान लगा ली, तब कहीं जाकर सही लाइन पर लगे। पिछले पाच वर्षों से वे यह व्यवसाय प्रतिष्ठापूर्वक कर रहे हैं। अपने पिछले उद्योगो की प्रेरणा से ही उनके मन मे शोक-सन्देश एक्सपर्ट बनने की भावना का अकुरण हुआ लेकिन सही दिशा न मिल पाने के कारण वे स्थापित नही हो पा रहे हैं।

मेरी ओर देखते हुए बोले—मुझे शोक-सन्देश प्रकाशित करवाने का *गुरु मन्त्र बता दीजिए।*

प्रकाशन की पीडा, उनके चेहरे पर झलक रही थी। ऐसी ही पीडा मेरे चेहरे पर भी होती थी जब मैंने व्यग्य लिखना शुरू किया था। लोग

कहते थे कि व्यंग्य कठिन विधा है लेकिन मैं इसके पीछे लगा रहा, ठीक उसी तरह जैसे वे शोक-सन्देश साहित्य के पीछे लगे हैं। देश में मरने वालों की संख्या देखते हुए उनके स्थापित होने की संभावना साफ झलकती है।

मैंने उनसे विदा लेते हुए कहा—बस, लगे रहिए। अपने देश में देर है अँधेर नहीं। किसी-न-किसी दिन यह समाज आपके इस हुनर की कद्र करेगा। जब देश में हर मामले के एक्सपर्ट हैं, तो आपने क्या बिगाड़ा है। जरा ढंग की पब्लिसिटी कीजिए और इस धंधे में लगे रहिए। मेरी शुभ-कामनाएँ आपके साथ हैं।

दूसरे दिन उन्होंने अपनी दुकान 'मृतक सामग्री भंडार' के सामने एक बोर्ड लगवा दिया और अपने नाम के आगे 'डाक्टर' और पीछे 'शोक-सन्देश एक्सपर्ट' लिखवा कर टीप लगवा दी—हमारे यहाँ शोक सन्देश रियायती भाव पर उपलब्ध है। मरने के बाद हम सेवा का अवसर दें।

उनकी यह पब्लिसिटी चल निकली। आज उनकी दुकान पर मृतक के रिश्तेदारों की भीड़ लगी रहती है। यही तो इस देश की महानता है कि व्यवसाय के मामले में वह किसी को निराश नहीं करता। एक्सपर्ट प्रधान देश में ऐसा ही होता है।

एक अधूरा नीर-क्षीर

एक था राजा। था भी, और नही भी था। वह राजा तो किसी भी ऐंगल से नही दिखता था। लेकिन था। क्योंकि उसका सरनेम ही राजा था। वह मेडिकल रिप्रेजेन्टेटिव था। जब भी किसी से बात करता तो पहला शब्द 'यस डाक्टर' जरूर कहता। मेडिकल रिप्रेजेन्टेटिव की और आदतो के बारे मे मुझे कुछ नही मालूम लेकिन उसकी अग्रेजी बोलने की अच्छी आदत थी। कभी कभी तो वह खाँसता भी अग्रेजी मे था। उसकी इसी आदत ने मुझे प्रभावित किया था।

यह राजा इस नीर क्षीर मे कहाँ से घुसा उसकी कहानी इस प्रकार है कि पिछले दिनो अपने हबीब भाई की दवाई की दुकान पर मैंने एक नीर-क्षीर लिखा था तो हबीब भाई बडे खुश हुए। उन्होने केवल अपना छपा हुआ नाम वेडिंग कार्ड पर ही देखा था। इस तरह अखबार मे अपना नाम देखकर हर भले आदमी को खुशी ही होती है। इसलिए हबीब भाई भी खुश हो गए। जितने लोग उस दिन उनकी दुकान पर लवणभास्कर से लेकर लेसिक्स लेने आए, सबको उन्होने बताया कि लतीफ घोघी बहुत अच्छा लिखते हैं। 'अधजल गगरी छलकत जाए' की तरह हबीब भाई के चेहरे से खुशी दिनभर छलकती रही। उनके बस म होता तो वे इसी बहाने मुझे टानिक की दो चार बोतल भी दे देते लेकिन इधर उनका छोटा भाई दवाई की दुकान पर बैठने लगा था इसलिए शीशी-बोतल का काम हबीब भाई को बद करना पड गया था।

दुर्भाग्य से उसी दिन ये राजा साहब अपने यहाँ के डाक्टरो को बताने

आए थे कि उनकी कम्पनी के प्रोडक्ट से आदमी अधिक दिनों तक खींच लेता है। इसी खींचतान में हबीब भाई ने उन्हें भी बता दिया कि लतीफ घायी अच्छा लिखते हैं। और उनसे वादा भी कर दिया कि वे राजा साहब पर भी एक *नीर क्षीर लिखवा देंगे। 'इससे बड़ी पब्लिसिटी होती है* मार्केट में' वाले अंदाज में उन्होंने कहा—अरे देखना जिस दिन छपेगा पचास लोग पूछेंगे।

दूसरे दिन हबीब भाई ने मुझे अपनी दुकान पर बुलाकर एक विजिटिंग कार्ड दिया। उस पर राजा साहब, मेडिकल रिप्रजेंटेटिव का नाम था। हबीब भाई बोले—यार इनके नाम में लिख देना एक क्षीर-नीर। मैंने कहा—क्षीर-नीर नहीं, नीर क्षीर। वे बोले—अरे हाँ वही यार हमारे दोस्त हैं मैंने उनसे वादा कर दिया है कि लिखवा दूंगा तो लिख देना जरूर समझे के नहीं?

इसमें समझने या नहीं समझने की क्या बात थी लेकिन हबीब भाई को हमेशा इस बात का शक रहता है कि उनकी बात सामने वाला समझ रहा है या नहीं—इसलिए हर बार एहतियात के तौर पर 'समझे के नहीं' जरूर बोल देते हैं। मैंने भी सोचा कि हबीब भाई मेरे व्यंग्य लेखों के प्रमुख पात्र होते हैं इसलिए उनकी कद्र करना एक लेखक के नाते मेरा नैतिक कर्त्तव्य है। वसे हबीब भाई इस बात की चिंता भी नहीं करते कि कौन उनकी कद्र कर रहा है और कौन नहीं कर रहा है। वे तो बस मगन रहते हैं। दवाई बेचो और मस्त रहो। सामने वाला मरे कि बचे। लेकिन मैं तो लेखक होने के नाते ऐसा नहीं सोच सकता था—इवन अपने राजा साहब के बारे में भी।

हबीब भाई की बात रखने के लिए घर आकर मैं राजा साहब को निपटाने के मूड में आ गया। नीर क्षीर का शीर्षक भी लगा दिया—'एक था राजा, दवाई वाला।' एक परा लिख भी डाला, जो आपने अभी पढ़ा। इस बार कुछ तगड़ा और धांसू किस्म का नीर क्षीर बनाने का विचार था ताकि मेडिकल जगत में भी अपना सिक्का जम जाए। मैं राजा साहब को आगे बढ़ाने की सोच ही रहा था कि मिसेस गहूँ का झोला टिकाते हुए बोली—अभी पिसवा कर लाओ आटा बिल्कुल नहीं है।

मैंने कहा—राजा साहब का क्या होगा? मिसेस बोली—कौन राजा? कहाँ का राजा? सरायपाली वाले छोटे कुमार साहब की बात तो नहीं कर रहे हो? आने वाले हैं क्या आज?

अब मैं इस बुद्धिमान महिला को कैसे समझाता कि ये राजा साहब नीर क्षीर वाले हैं। यदि मैं उससे कहता कि गेहूँ पिसाने की अपेक्षा नीर-क्षीर लिखना ज्यादा जरूरी है तो वह कहती—अच्छा तो लिख लो सुबह नाश्ते मे तुम्हें दो नीर-क्षीर फ्राई करके दे दूँगी भर लेना अपना पेट।

अब आप ही बताइए कि नीर क्षीर के परांठे खाऊँगा तो बचूँगा कि मरूँगा? यही सोचकर मैं इस निष्कर्ष पर पहुँच गया कि साहित्य में गेहूँ और आटे का योगदान जबरदस्त होता है। घर मे आटा होगा तो नीर-क्षीर भले ही न बने रोटी तो बन जाएगी और रोटी बन जाएगी तो खींचतान के नीर क्षीर भी बना ही लेंगे।

उधर गेहूँ भी पिसवाता रहा और सोचता रहा कि अब इस राजा साहब को देश काल और वातावरण से कैसे जोडना है नीर क्षीर मे। राजा का सबध गेहूँ से किस सीमा तक मधुर रखना है और राजा को आम आदमी से किस तरह जोडना है आदि स्थितियो का निर्माण मैंने याकूब भाई की आटा चक्की पर ही कर लिया था।

घर आते ही आटे का थैला मिसेस को देकर मैं फिर राजा साहब से भिड गया। एक पेरा और लिखा था कि शोभूराम साव आ गया। अब आप पूछेंगे कि इस नीर क्षीर मे गेहूँ के बाद शोभूराम साव के आने का क्या औचित्य है? भाई साहब, कभी-कभी तो मुझे लगता है कि शोभूराम के कारण ही मैं वरिष्ठ लेखक हूँ। शोभूराम की विशेषता यह है कि वह नया लेखक है और मार्गदर्शन लेने के लिए हमेशा छटपटाता रहता है। इस आदमी का सबसे बडा गुण यह है कि कविता कहानी लिखने के मामले मे वह भले ही पीछे रह जाए लेकिन मेरे चरण स्पर्श करने के मामले मे कभी पीछे नहीं रहता। हमेशा हाथ साफ करते हुए ही गेट के अदर आता है। अब आप ही बताइए कि लेखक के सामने नीर क्षीर और चरण स्पर्श दो शब्द रखे हों और यदि कोई सचमुच वरिष्ठ लेखक है तो वह पहले

चरण स्पर्श को ही उठाएगा। लेखन में गेहूँ के साथ-साथ लेखक के चरणों का भी कभी-कभी महत्त्व जरूर होता है। यही सोचकर मैंने चरण आगे बढ़ा दिए। नीर-क्षीर तो बाद में भी आगे बढ़ जाएगा, शोभूराम थोड़े ही बार-बार आता है लेखक के जीवन में।

शोभूराम ने, जैसी कि उसकी आदत थी, सबसे पहले आकाशवाणी के गिरते हुए स्तर पर चिंता व्यक्त की और बाद में अपनी कोई रचना वहाँ जमा देने की सलाह देते हुए कहा—दादा, आप तो बड़े-बड़े लोगों पर नीर-क्षीर लिखते हो एकाध नीर क्षीर मुझ पर भी बना दो तो साहित्य में मेरा नाम भी हो जाए।

मैं भी यह सोचता हूँ कि साहित्य के क्षेत्र में युवा पीढ़ी को आगे बढ़ाने की भावना तो होनी ही चाहिए। इसमें अमृत सदृश का योगदान चाहे जो हो लेकिन शोभूराम साब का तो होना ही चाहिए, ऐसा मेरा सोचना हुआ। एक नीर क्षीर मुझे उस पर लिखना ही पड़ेगा। मेडिकल क्षेत्र को आगे बढ़ाने में जो योगदान राजा साहब का है, साहित्य को आगे बढ़ाने में वही योगदान मेरे लिए शोभूराम का है। शोभूराम विटामिन बी काम्पलेक्स की वह गोली है जो लेखक के बदन में ताजगी भर देती है। अभी-अभी शोभूराम मेरे बदन में ताजगी भर के गया है। इस प्रकार की ताजगी भरना बहुत कम युवा लेखकों को आता है। अब मेरा भी कर्त्तव्य-बोध मुझे ललकार रहा है।

गेहूँ और शोभूराम के कारण राजा साहब का यह नीर क्षीर अधूरा रह गया, इसका मुझे बहुत दुख है। दुख तो मुझे इस बात का भी है कि कहीं अपने हबीब भाई यह न कहने लगें कि लतीफ घोंघी अच्छा नहीं लिख रहे हैं जो आदमी एक मेडिकल रिप्रेजेंटेटिव पर व्यंग्य नहीं लिख सकता वह क्या व्यंग्य लिखेगा?

हबीब भाई तो हवाबाण चूस कर भी हल्के हो लेंगे लेकिन इस नीर-क्षीर का क्या होगा जो राजा साहब से शुरू होकर गेहूँ और शोभूराम के बीच ही उलझ गया। राजा साहब, क्या आप जानना चाहेंगे कि लतीफ घोंघी क्यों व्यंग्य लिखता है? हबीब भाई के लिए या गेहूँ के लिए?

पंजा-छाप गुडाखू

गुडाखू घिसने के मामले मे अब तक उन्हें कोई राष्ट्रीय पुरस्कार मिल जाना था, लेकिन उनका दुर्भाग्य है कि ना ही सरकार का ध्यान इस ओर गया और ना ही लोगों ने उनकी घिसाई को मान्यता प्रदान की। उनका बस चलता तो वे विधानसभा मे 'अनिवार्य गुडाखू घिसाई अधिनियम' पारित करवा देते और अपने प्रदेश की जनता के लिए गुडाखू घिसना कम्पलसरी करवा देते और फिर धीरे से गुडाखू घिसने वाले कोटे से अपने लिए विधानसभा की कोई सीट भी हथिया लेते। इसीलिए कहते हैं कि अपने यहा की व्यवस्था बडी फालतू है। उनका कहना है कि हरिजन आदिवासी की तुलना मे गुडाखू घिसने वाला क्या बुरा है? पच्चीस पैसे की एक डिब्बी से तरोताजा होकर देश का विकास करने वाला और कोई आदमी नही हो सकता। सही माने मे विदेशी मुद्रा बचाने वाला आदमी वही है जिसके हाथ मे गुडाखू की डिब्बी है।

उनके ये उद्गार सुनकर मैं भी गुडाखू घिसने लगा था। इसमें मेरा थोडा सा स्वार्थ यह था कि यदि वे कभी भविष्य मे विधायक बने तो दो चार मास्टरो के ट्रासफर मैं भी करवा लूगा। इसीलिए मैं उन्हें प्रेम से 'गुडाखू भाई' कहता हूँ ताकि सनद रहे और वक्त जरूरत पर काम आए। आप यह सोच रहे होगे कि आखिर गुडाखू मे ऐसी कौन सी बात है जिसकी प्रशसा मे मैं ये बातें लिख रहा हूँ। आपके मन मे यह भी शका हो सकती है कि मेरा कमीशन किसी गुडाखू फैक्टरी से बंधा होगा और मेरा खाता किसी बैक मे जरूर होगा। इधर पिछले दिनों कमीशन का जो राष्ट्रीय

गरिमा प्राप्त हुई है, उससे स्वाभाविक है कि आपके मन मे ऐसे विचार आ रहे हों। लेकिन मैं फिर कहता हूँ कि ऐसी कोई बात नही है। यह तो मेरी उनके प्रति सम्मान की भावना है जिससे प्रेरित होकर मैं यह लघु लिख रहा हूँ। इस प्रेरणा के पीछे उनकी घिसने के प्रति अटूट आस्था और लगन ही है। उन्होंने जितनी घिसाई की है, उसका यदि ईमानदारी से आकलन किया जाए तो वे मेरी नजर म हिमालय से ऊँचे और हिन्द महासागर से गहरे आदमी हैं। ऊँचे और गहरे सिर्फ घिसने के मामले म। बाकी उनकी व्यक्तिगत स्थिति यह है कि तीन बटा चार भाग मे सिर के बाल नहीं के बराबर होने के कारण उनका ललाट ओजस्वी और चमकदार है जिससे कई लोगों को अनेक प्रकार की गलतफहमियाँ हो सकती हैं कि वे जरूर कोई दिव्य-पुरुष हैं जो केवल गुडाखू घिसने के लिए ही इस पावन धरती पर अवतरित हुए हैं।

इस बार बहुत दिनो बाद उनस मुलाकात हुई थी। व अपने दोस्तो के बीच बठे इस बात पर विचार कर रहे थे कि विद्याचरण शुक्ल, पुरुषोत्तम लाल कौशिक, रमेश अग्रवाल और रामगुलाम गुडाखू घिसते हैं या नहीं और यदि घिसते हैं तो कौन सी गुडाखू घिसते हैं।

मैंने उनसे सीधा सवाल किया—क्या हो गुडाखू भाई, आप इन दिनो कौन-सी गुडाखू घिस रहे हैं ?

वे मुस्कुराए। मुस्कराते अच्छा हैं। मुस्कुराते हैं तो उनके चेहरे पर कमलापति त्रिपाठी और जयललिता के चेहरो की मिली-जुली झलक दिखाई देती है। हँसते हैं तो उनकी ठुड्डी का दक्षिणी भाग तमिलनाडु जसा दिखता है। उनकी हँसी की कोई एक विशेषता हो तो बयान करूँ। वे हँसे यानी कि हिन्दुस्तान हँसा। आगे आप खुद समझदार हैं।

अपनी हँसी सम्पन्न करने के बाद बोले—आजकल पजा छाप घिस रहा हूँ। जोरदार किक मारती है घिसोगे ?

मैंने कहा—मैं तो कमल छाप वाला हूँ। वे फिर हँसे। बोले—अरे वो तो बिल्कुल भूसा है बस गेरु ही गेरु है चलो आज तुम्हें पजे का टेस्ट बताते हैं।

वे लगभग मग्धे मे पानी लेकर तैयार हो गए तो मैंने कहा—थोडी देर

बाद घिसेंगे मैं जरा एक मामला निपटा कर आता हूँ।

वे बोले—यहीं तो मार खा जाते हो गुडाखू भाई मही टाइम प घिसोगे तो मजे मे रहोगे हमे देखो मौज कर रहे हैं या नही ?

उन्होंने पुरातनकालीन मग्घा उठाया और कमरे के बाहर परछी प बैठ कर नजाकत के साथ गुडाखू की डिब्बी खोली। दाहिने हाथ की तर्ज उँगली पर, पजा छाप गुडाखू की सम्मानजनक मात्रा ली और चालू हं गए। वे जिस मुद्रा मे बैठे थे, उसे देख कर मैं प्रभावित हुआ। श्रीलंका के तरह उन्होंने अपने दाहिने पैर के पास मग्घा रखा था। आखें बंद थी उँगली दाँतो पर इस तरह घूम रही थी कि पजा छाप का एक-एक पोर उन्हें झनझना रहा था।

उनके बारे मे एक मजेदार चर्चा इन दिनों यह है कि पिछले दिन किसी जगल मे गए थे। क्यो गए थे यह कारण लोगो को पता नही है लोगो का कहना है कि जगल मे उन्हें शेर दिखा था और उन्होंने उसे पजा छाप गुडाखू की डिब्बी दिखा कर डरा दिया। शेर समझदार था। वे गुडाखू घिसते रहे और वह चुपचाप चला गया। बाद म लोगो ने पूछा ता वे केवल मुस्करा दिए।

जब वे गुडाखू स फारिग होकर लौटे तो मैंने पूछा—क्यो हो गुडाखू भाई, लोग कहते हैं कि आपने शेर को गुडाखू की डिब्बी दिखा कर ही वश मे कर लिया था। क्या यह सच है ? और यदि सच है तो हमे भारतीय जानवरो पर गर्व करना चाहिए कि वे आपका और गुडाखू का सम्मान करना सीख गए हैं। मुझे जरा विस्तार से बताइए कि आखिर माजरा क्या था।

वे गभीर हो गए। बोले—सुर्खियो मे रहने के लिए अफवाहो को जीवित रखना जरूरी है, इसलिए मैं चुप हूँ। तुमको सच्ची बात बताता हूँ।

उन्होंने चारो ओर नजर डाली। हम दोनो के अलावा और कोई आसपास नही था। वे बोले—शेर तो दिखा था लेकिन घबराया हुआ था। मैंने जेब से पजा छाप गुडाखू की डिब्बी निकाली तो वह समझ गया कि मैं कोई मामूली आदमी नही हूँ। उसने मुझे नमस्कार करने की मुद्रा म देखा। मेरी इच्छा हुई कि उसे भी गुडाखू का टेस्ट करवा दू लेकिन

इसके पहले ही वह वहाँ से खिसक गया।

मैं समझ गया कि उन्हें पजा छाप चढ गई है इसलिए आय-बाँय बातें कर रहे हैं।

थोडी देर रुक कर वे बोले—अब मुझसे यह मत पूछना कि शेर असली था या नकली। सारा सस्पेंस असली और नकली का ही है। समझे या नहीं ?

मैंने कहा—आप सचमुच महान हैं। मुझे आज पता चला कि गुडाखू सचमुच कमाल की चीज है।

वे बोले—गुडाखू नहीं पजा छाप गुडाखू कहो खाने के पहले घिसो, खाने के बाद घिसो, जाने से पहले घिसो और आने के बाद घिसो। यह कमाल तो सिर्फ लेबल का है वर्ना गुडाखू मे गुड, गेरू और तम्बाकू के अलावा होता ही क्या है।

कल्याण सिह खुश है

कल्याण सिह वजनदार व्यक्तित्व का नाम है। जिस आदमी के पास हजार गद्दे, हजार तकिए, हजार चादरें, बारह सौ स्टील के गिलास, दो हजार कुर्सियाँ, और कई हजार प्लेटें और चम्मच हो वह वजनदार नहीं होगा तो क्या होगा। कल्याण सिह कनातो और दरियो का दूसरा नाम है। चाहे विवाह समारोह हो या किसी मत्री का भाषण, पडाल तानना उसके बायें हाथ का खेल है। यानी कि वह जिधर से जाए दो खुशबू बिखेरता जाए टाइप आदमी है। पास से गुजर जाएगा तो लगता है जस कोई किराया भण्डार पास से गुजर रहा है।

इस बार मेरे सुपुत्र की शादी मे मेरा पाला कल्याण सिह स पड गया। विवाह का मौसम था और कल्याण सिह अतिव्यस्त था। बात करता तो उसकी साँसो से कनात और कुर्सियो की गध आती थी। बाँस बल्ली के अलावा कोई दूसरा शब्द वह मुश्किल से बोल पाता था। मुझे डिनर के लिए पडाल लगवाना था। मैंने निवेदन किया तो उसने कहा आप चिंता मत करो एक घटे मे तान दूगा।

मैंने पूछा—क्या तान दोगे ?

वह बोला—मजाक करते हो वकील साहब। हम सिवाय उसके क्या तानेंगे पिछले कई सालो से सेवा कर रहे हैं नगर की जहाँ मिलता है तान देते हैं सकडो वर वधुओ को विदा कर चुके हैं अपन इसी पडाल से। हमारा रिकार्ड है कि जो वधू इस पडाल से विदा हुई उसका दाम्पत्य जीवन सुखी रहा है।

फिर हुआ यह कि कल्याण सिंह ने फौज लगा दी। एक घंटे मे पडाल तन गया। लेकिन जब पडाल का बिल आया तब मुझे विश्वास हो गया कि कल्याण सिंह ने सचमुच मुझे तान दिया है। मैंने कहा—यार कल्याण सिंह, इतना आतकवादी बिल देखकर तो मुझे चक्कर आ रहा है।

आदत के अनुसार पहले कल्याण सिंह हँसा। फिर बोला—पहले चाय तो पियो।

मैंने कहा—यार, तुमने अपने हिसाब म इतना तगडा बिल बना दिया कोई मकान-वकान का ग्राहक हो तो बताना।

वह बोला—मजाक करते हो वकील साहब अरे लडके की शादी बार-बार नहीं होती और आपके लिए कौन सी बडी रकम है एक कस नही सही मैंने यही सोचकर बडा पडाल मार दिया था कि इससे आपकी हैसियत बढेगी और आप हैं कि बिल का रोना रो रहे है।

कल्याण सिंह को देश काल और वातावरण की समझ है। आज लोग लबे पडाल केवल इसलिए तान रहे है कि लोगो को उनकी हैसियत का भ्रम होता रहे। घर म भले ही भूजी भाँग न हो लकिन पडाल इतना लबा तानते हैं कि उसका एक छोर यहाँ होता है तो दूसरा भोपाल म। इस पडाल के नीचे डिनर होता है। मुर्गा बनता है, सलादकी प्लेटें बिछती हैं और डिनर टेबल पर योजना और विकास की चर्चा होती है। लोग खाते है और डकार लेकर आने वाले भविष्य की चिंता मे डूब जाते है। इस पडाल मे आने वाले हर आदमी का लक्ष्य केवल डकार होता है।

कल्याण सिंह चुप था। मैंने बहुत कोशिश की कि कल्याण सिंह के बिल पर मुझे कुछ 'सबसीडी' मिल जाए। लेकिन कल्याण सिंह इस मामले मे अनुभवी था। वह इसलिए मौन था कि साला देगा नहीं तो जाएगा कहाँ। मुझे लग रहा था जैसे कनातो और दरियो के हर हिस्से मे मेरे साथ देश की आर्थिक स्थिति चिपक गई है। इच्छा हुई थी कि इसी बिल के साथ मैं किसी कनात मे लिपट कर कल्याण सिंह के गोदाम म चला जाऊ।

हम दोनो के लक्ष्य निर्धारित थे। मैं बिल म कुछ कम करवाना चाहता था और वह पूरा बिल लेने के लिए दृढ सकल्प था।

—यार, कुछ तो कम करो।

—नही पासाता वकील साहब, बिल्कुल वाजिब है।

—कैसे नहीं पोसाएगा। हम कोई सेठ-साहूकार थोड़े हैं।

—*हम तो सेठ से कम नहीं समझते आपको। आपके लिए हजार-दा हजार* क्या हैं। लेकिन

—लेकिन, वेकिन कुछ नही। कुछ कम करो।

—वाजिब लगाया है मैंने दूसरा होता तो तीन हजार का बिल बनाता लेकिन आपके लिए तो जान हाजिर है।

—अच्छा, इस साल तो खूब शादियाँ हुईं। अच्छी कमाई हुई होगी ?

—कहा कमाई धमाई। ज्यादा शादियाँ तो लडको की हुइ। लडकियो की शादी होती है, तो मडप तनता है। हम तो इसी से परेशान हैं।

—लेकिन कुछ भी कहो धधा तुम्हारा चोखा है।

—क्या चोखा है लोग यहाँ से नई दरी ले जाते हैं और इन दरियो के बीच तीन फटी दरी डाल कर वापस कर दते हैं हम तो इसी के मारे मर गए, ईमान से।

—लेकिन कुछ तो कम करना पडेगा। मैं सब नई दरी लाया हूँ।

—आपको नही कह रहा हूँ वकील साहब। बिल तो वाजिब है। हम दोनो अपने अपने स्थान पर अड़े थे।

तभी अचानक कल्याण सिंह को कुछ याद आया। उसने कहा—क्यो हो वकील साहब, सुना है आप लोग यहाँ मुख्यमत्री को बुला रहे हो ?

मैंने कहा—हाँ बुला तो रहे हैं। आचलिक पत्रकारो का सम्मेलन हम *लाग यहाँ करवा रहे हैं। तारीख भी तय हो गई है।*

कल्याण सिह के चेहरे पर मुख्यमत्री का नाम सुन कर प्रसन्नता की लहर दौड गइ। उसने कहा—बुलवाओ दादा जल्दी बुलवाओ तो हमारा भी कुछ फायदा हो।

मैंने कहा—बिल लेकिन ज्यादा है। कुछ तो कम करो।

इस बार कल्याण सिंह ने जवाब में कुछ नही कहा। लगा जैसे वह किसी सपने म खो गया है। मैंने कहा—लेकिन ये तो बताओ कि तुम्हें क्या लाभ होगा मुख्यमत्री के यहाँ आने से ?

उसने कहा—यही तो बात है मुख्यमंत्री आएँगे तो पंडाल तो हमारा ही तनेगा पाँच दस हजार का सरकारी बिल हो जाएगा हमारा कोई भी हालत मे जमा दो प्रोग्राम।

मैंने कहा—प्रोग्राम तो जमा जमाया है तारीख तय है। लेकिन मेरा बिल

उसने बीच म ही कहा—चलो इसी नाम से सौ रुपया कम कर देते हैं।

मैंने कहा—सौ नही तीन सौ कम करो मुख्यमंत्री के नाम स एक का आँकड़ा ठीक नहीं है।

कल्याण सिंह ने कहा—अच्छा आपकी बात भी नही और मेरी बात भी नही, दो सौ कम कर देता हूँ लेकिन मुख्यमंत्री का प्रोग्राम तो पक्का है ना ?

मैंने कहा—बिल्कुल पक्का है और आपका पंडाल भी पक्का। प्रोग्राम तो हमीं लोग तय कर रहे हैं लेकिन

उसने बीच में ही कहा—लेकिन वेकिन ठीक है दो सौ पचास रुपये कम देना अब तो खुश हो ना ?

कल्याण सिंह जानता है मुख्यमंत्री का पंडाल बहुत बड़ा होता है। हजारों लोग इस पंडाल के नीचे उपस्थित होते हैं। पूरे अंचल के विधायक आएँगे इस पंडाल के नीचे। कई सरकारी अफसर आगे पीछे रहेंगे। एस० डी० ओ० साहब दस चक्कर लगाएंगे और हर बार कहेंगे—देखो कल्याण सिंह, कुरसी पूरी हो लगे तो भिलाई से मँगवा लो पंडाल बढ़िया होना

कल्याण सिंह मुख्यमंत्री की हैसियत जानता है। उसे मालूम है कि मुख्यमंत्री का पंडाल किस साइज का होगा। मैं तो केवल इसलिए खुश हूँ कि मुख्यमंत्री के नाम से कल्याण सिंह ने दो सौ पचास रुपये मेरे बिल मे कम कर दिए। अपनी अपनी हैसियत और अपने अपने पंडाल। बस, कल्याण सिंह खुश होना चाहिए।

फागुन के दिन चार : पुलिस के

हमारे थाने मे होली के ठीक दूसरे दिन जब पडाल तना तभी हम समझ गए कि आज भारतीय पुलिस जन सेवा और देशभक्ति छोडकर फागुन के दिन चार करन के मूड मे आ गई है। पोंगा थान मे 'खोल मेरा ताला आ चाबी वाले' चिल्ला रहा था। पोंगे का मुह नगरपालिका कार्यालय की ओर था। मुशीजी दो मुह वाली डिब्बी से चूना और तम्बाकू निकालकर कुछ इसी स्टाइल से रगड रहे थे जैसा कि वे प्रतिदिन रोजनामचा रगडते थे। वस ता पुलिस वालो की जुबान पर आठो दिन और बारहा महीने फागुन रहता है लेकिन आज कुछ और बात थी। कुल मिलाकर थाने का माहौल बिल्कुल फागुनी लग रहा था। इस मधुर बला मे यदि कोई किस्मत का मारा रिपोट दज करवाने आ जाता तो उसके साथ आम दिनो से कही अधिक उच्च स्तर पर पुलिस वाले शालीन व्यवहार करत, यह बात निश्चित थी।

टी० आई० जब घर से निकले तो आज पहली बार कुरता-पाजामा मारकर निकले थे। चाल उनकी कुछ मुर्गा छाप थी। मुह मे घर का बना हुआ पान दबा था, सडक के किनारे बनी झापडीनुमा दुकानो को वे कुछ इस तरह देख रहे थे जैसे पहली बार देख रह हो। उनके चेहरे से कुछ ऐसा भाव टपक रहा था—कर लो बेटे ऐश आज तो हम हाली खेलने के मूड म हैं। जो कुरता पाजामा पिछले साल से सम्हाल कर रख छोडा था उसी का उपयोग आज टी० आई० साहब करने के मूड मे थे।

लगभग सभी पुलिस वाले अपने घर मे हाय-तौबा मचाए हुए थे।

सबको जल्दी थाने पहुँचना था। और मजे की बात तो यह थी कि आज न दाढी बनाना है और ना कपडे ठीक से पहनकर जाना है। पुलिस वालों के लिए आज का दिन सुनहरा दिन था।

प्रधान आरक्षक की घरवाली ने कहा—तुम तो फटी लुगी पहन कर चले जाओ फालतू कपडे खराब करने से क्या फायदा आखिर धोने तो मुझे ही पडेंगे।

प्रधान आरक्षक थाने की मातभाषा का प्रयोग घर पर नहीं करते थे। इसलिए अपनी व्यवहार कुशलता का परिचय दते हुए बोले—तुम औरतो की बुद्धि खोपडी के पीछे होती है। लुगी पहनने के लिए हम पुलिस मे भर्ती थोडे न हुए हैं। निकालो हमारा पुराना हाफ पेंट जो तुम देश से लाई थी हमारे लिए।

एक छोटे दरोगा भी होते थे इस थाने मे। देहात मे कोई मग हो गया था सो बेचारे वही फँस गए। ये फागुन के दिन चार उनके लिए 'हाली खेल मना रे' का सदश लकर आए थे। देहात मे एक खटिया बिछा कर मरने वाले को कोस रहे थे कि साले को मरना था तो फागुन म ही। थाने मे आज का एक दिन कितना महत्त्व रखता है। यह तफतीश के दौरान उनके मुह से निकलने वाले धारावाहिक आचलिक शब्दो से स्पष्ट झलक रहा था।

आज तो थाने के दो ही अग काम कर रहे थे। एक अग पाजामे मे था और दूसरा हाफ पेंट म। दोनो 'सरकती जाए है रुख से नकाब आहिस्ता-आहिस्ता' वाले अदाज से थान मे दाखिल हुए। प्रधान आरक्षक ने टी० आई० साहब को आज नमस्कार नही किया। आज होली थी ना इसलिए। टी० आई० साहब ने प्रधान आरक्षक को आज मूख नही कहा, हाली थी न आज। वैसे तो साल भर नमस्कार होता है और मूख शब्द का प्रयोग थाने मे खुलकर होता है। लेकिन आज होली थी ना। बडा भाई-चारा दिखा रहे थे पुलिसवाले इस फागुन मे।

टी०आई० साहब ने आते ही मुशीजी से पूछा—क्यो मुशीजी, गुलाल आया कि नही ?

मुशीजी कुछ बोलने के पहले थाने की परछी मे गए और एक कोने

में पिच्च से तवाकू थूक कर बोले—413 को भेजा है सर, दारू दुकान पर।

—अरे यार, तुम भी बिलकुल फालतू आदमी हो। अभी डी० वा साहब आते होंगे, थाने में गुलाल नहीं होगा तो मेरी तो खटिया खड़ी जाएगी। जल्दी भेजो किसी सिपाही को और थोड़ा सा रंग भी घ डालो यार क्या सूखी होली मनाएँगे? और सुनो एक रिक्शा हम घर भेज दो।

—रिक्शेवाले थाने वालों को नहीं बिठाते हैं सर पिछली ब छोटे साहब ने एक रिक्शे वाले को मार दिया था तो कहते हैं पहले मा माँगो फिर पुलिस वालो को रिक्शे पर बिठाएंगे।

—बंद करो साला को

लेकिन अचानक उन्हें याद आया कि आज तो थाने में होली है। बं बंद करने का काम तो साल भर चलता रहता है। वे फिर फागुनी मूड आ गए। बोले—ठीक है मजा करने दो सालों को

थोड़ी देर में डी० वाई० एस० पी० साहब की जीप आई। साहब भी कुरता-पाजामा पहन रखा। थाने के पंडाल में गुलाल उड़ने लगा 413 ने बड़े साहब के मुंह पर गुलाल लगा दिया। बड़े साहब का चेहर गुलाबी लगने लगा। टी० आई० साहब तो वैसे भी गोरे थे। जब उनके चेहरे पर प्रधान आरक्षक ने गुलाल लगाया तो 'पुलिस ओजस्व' से उनक चेहरा दमकने लगा। फिर माइक पर अमिताभ बच्चन का रिकार्ड लगवाया गया—मेरे अँगने में तुम्हारा क्या काम है।

पुलिस वाले नाच रहे थे। देश भक्ति नाच रही थी। जन-सेवा नाच रही थी। टी० आई० नाच रहे थे, डी० वाई० एस० पी० नाच रहे थे।

उदास थे तो केवल दारू जिनकी दुकान से रंग और गुलाल थाने में उड़ रहा था।

याकूब भाई की आटा चक्की

इस नगर की भौगोलिक स्थिति यह है कि उत्तर मे याकूब भाई जनता पार्टी वाले, पूव मे याकूब गुरुजी, पश्चिम मे याकूब भाई चूडी वाले और दक्षिण मे याकूब भाई आटा चक्की वाले। यानी कि सवाल चाहे राजनीति का हो, शिक्षानीति का हो, चूडी पहनाने का हो या पीसने-पिसाने का हम कुल मिलाकर याकूब भाई पर ही निभर रहना पडता है।

एक दिन हमस याकूब भाई आटा चक्की वाले मिले तो कहन लग—बडे भइया, आप बडे-बडे लोगो के बारे मे लिखते हो, कभी हमारे बारे मे भी कुछ लिख दो, मजा आ जाए।

मैंने कहा—आपके बारे मे क्या लिखें आप तो जिसे देखते हो उसी को पीस के धर देते हो।

याकूब भाई ने मेरे जवाब को गभीरता से लेते हुए कहा—आजादी के बाद चालीस साल से यही काम कर रहे हैं हमारी चक्की नही होती तो कई लोग मोटे नही हुए होते।

याकूब भाई की बातो मे व्यग्य था। उनकी चक्की का आटा तो मैं भी कई साल से खा रहा था। मैं समझ गया कि वे किस पर व्यग्य कर रहे हैं। मैंने कहा—मगा, लिखन को तो लिख दूगा लेकिन पहले यह बताओ कि आप आटा चक्की मे राजनीति क्यो ला रहे हो ?

वे बोले—नही यह राजनीति नही है चालीस साल मे क्या हुआ है ? फल्ली तेल दो रुपया तीस पैसा किलो से तीस रुपया हो गया

लेकिन पिसाई का रेट हम कभी से पच्चीस पैसा नहीं हुआ। बिजली का बिल इतना आता है कि [illegible] [illegible] [illegible] से मर गए बड़े भइया अब क्या बताएं तुमको—

मैंने कहा—यार सगा, तुम तो बस नाहक में रोते रहते हो इतनी पिसाई कर रहे हो फिर भी महँगाई का रोना छोड़ते नहीं हो।

याकूब भाई थोड़ी देर के लिए चुप हो गए। जैसे कि सोच रहे हों कि अब आगे क्या कहना है। दिल्ली से शुरू करना है कि भोपाल से। मैं जानता हूँ कि याकूब भाई घुमा फिरा कर अपनी आटा चक्की दिल्ली भोपाल के आसपास जरूर लाकर खड़ी कर देंगे। ऊपर से यह भी कहते रहेंगे कि वे तो केवल पीसने वाले हैं, राजनीति से उनका क्या लेना-देना। बस भइयाजी आ गए तो दर्शन के लिए दादा के यहाँ जरूर पहुँच जाएँगे।

मैंने कहा—सगा, यार तुम आटा चक्की बन्द कर दो और नेतागीरी चालू करो

वे बोले—क्या चमक जाएँगे बड़े भइया हम सुबह उठते हैं तो दो चार झोले वाले हाजिर रहते हैं सुबह से शाम तक दाल-आटे के चक्कर से बचें तो नेतागीरी भी करें ये अपना काम नहीं है अपन भले और अपनी चक्की भली। जो हमारे दरवाजे तक आया उसको हमने कभी निराश नहीं किया। यह चक्की हिन्दू मुस्लिम सब के लिए बराबर चलती है। अपने राजीवजी भी तो कौमी एकता की बात करते हैं। हम कहते हैं कि इस चक्की से बड़ी कौमी एकता कहाँ मिलेगी। हमारे लिए तो सब का झोला बराबर है।

देखा आपने ? हमारे याकूब भाई ने कितनी बड़ी फिलासफी निकाल दी इस आटा चक्की से। यही विशेषता है उनकी। मैंने बात को जारी रखते हुए कहा—क्यों हो सगा, गेहूँ के साथ जो घुन आता है उसका क्या करते हो ?

वे बोले—गेहूँ के साथ घुन तो पिसेगा ही। कहाँ तक छाँटते बैठे रहेंगे। हम तो कहते हैं कि जीना है तो गेहूँ की तरह जियो। घुन की तरह

रहोगे तो हमारी चक्की में तो पिस ही जाओगे। अब देखा ना सेठीजी को हाईकमान की चक्की यह नही दखती कि गहूँ साफ है कि घुन वाला है। उसका काम है पीसना। तो बस पीस दिया। य त्रिपाठी और सिह साहब के झगड़े म पिस गए बेचारे।

मैंन कहा—सगा, तुम बड़ी ऊँची बात कर गए।

व बोले—बड़े भइया आप लोगो की ही सगत का असर है। आपका आटा पीस पीस कर ही इतना सीखे हैं।

याकूब भाई न अपनी तारीफ से खुश होकर मामने की सुखी होटल मे हाफ चाय का आडर दिया और बोले—आपको चाय पिलाता हूँ। फिर बातें करेंगे।

उसी समय एक देहाती चना दाल पिसान आ गया तो याकूब भाई उसी तरफ चले गए। उसस बोले—क्यो मडल, आज चना दाल मसक रहे हो सरपच चुनाव जीत हो क्या ?

इसके बाद उस देहाती के सामन वे अपनी राजनीति भी पलते रह और चना दाल भी पीसते रहे। उनमे निपटकर आए तो मुझसे बोले—हाँ बड़े भइया अब बोलो।

मैंने कहा—यार सगा, मुझे तो लगता है कि देहात के सभी वोट तुम्हार ही हाथ म हैं।

वे बोले—फिर भी देख लो हमारी कोई कदर नही है हम चालीस साल से चिल्ला रहे हैं और हर गेहूँ, चावल और चना दाल वाले को बता रहे हैं कि भइया हमे भूल जाना और लगे तो इस आटा चक्की को भी भूल जाना लेकिन अपना वोट याद करके देना ऐसा न हो कि तुम चना दाल पिसात पिसात पाँच साल के लिए हमारे ऊपर चक्की बिठा दो जा हम ही पीस दे।

उनकी वीणा म पीड़ा थी। व कुछ-कुछ उदास भी लग रहे थे। अचानक यह परिवतन देखकर मैंने पूछा—क्या हो सगा अचानक उदास कैसे हो गए ?

वे बोले—अब तो पाँच साल तक उदास ही रहना हैं बडे भइया। सब मारे चना दाल वालो के कारण हुआ है। लेकिन क्या करें पट का

सवाल है, इसलिए चुप बैठे हैं। जब तक चक्की चलती रहगी गेहूं के साथ घुन को पिसना ही पडेगा।

उन्होने आँखें ऊपर की ओर चारो दिशाओ की ओर देखकर गेहूं का एक पौपा चक्की म डाल दिया और चक्की के आगे लिपटा हुआ कपडे का चोगा हिलाकर झाडने लगे।

□□

लतीफ घोंघी

जन्म 28 सितम्बर, 1935

शिक्षा बी० ए०, एल एल० बी०

प्रकाशित कृतिया (हास्य व्यग्य)

तिकोने चेहरे (1963), उडते उल्लू के पख (1968), मृतक से क्षमा याचना सहित (1971), तीसरे बन्दर की कथा (1977), बीमार न होने का दुख (1977), सकटलाल जिन्दाबाद (1978), बब्बूमिया कब्रिस्तान मे (1979), किस्सा दाढी का (1980), जूते का दद (1980), सोने का अडा (1984), मेरी मौत के बाद (1984), चोरी न होने का दुख (1984), मुर्दानामा (1984), बुद्धिजीवी की चप्पलें (1985), बधाइयो के देश मे (1986), लाटरी का टिकट (1986), सडे हुए दात (1987), व्यग्य की जुगलबन्दी (1987), मेरी श्रेष्ठ व्यग्य रचनाए (1979)।

यन्त्रस्थ नान की दुकान, बुद्धिमाना से बचिए, खबरदार व्यग्य

सप्रति स्वतन्त्र लेखन

पता एबी-9, कॉलेज रोड, महासमुन्द (म० प्र०)